कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास
को समर्पित

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

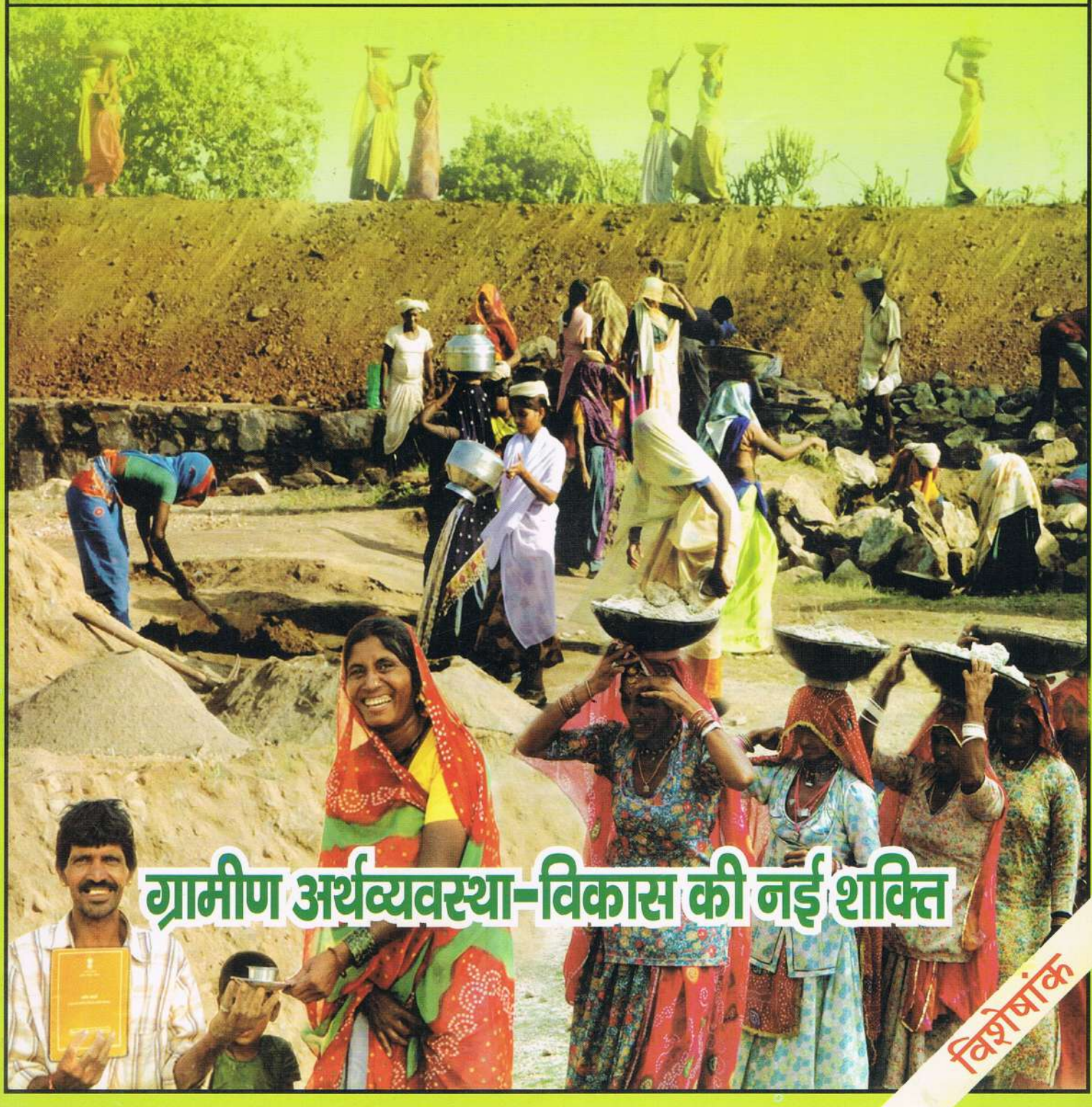

वर्ष 55 अंक : 12 | अक्टूबर 2009 | मूल्य : 20 रुपये

अब उपलब्ध है

वार्षिक संदर्भ ग्रंथ

भारत 2009

देश के विकास की
विश्वसनीय और अद्यतन जानकारी के लिए

मूल्य: 345 रुपये

* अर्थव्यवस्था
* विज्ञान और तकनीक
* सामाजिक विकास
* राजनीति
* शिक्षा
* कला और संस्कृति

अपनी प्रति यहां से खरीदें :

हमारे विक्रय केंद्र: • **नई दिल्ली** (फोन 24365610, 24367260) • **दिल्ली** (फोन 23890205) • **कोलकाता** (फोन 22488030) • **नवी मुम्बई** (फोन 27570686) • **चेन्नई** (फोन 24917673) • **तिरुअनंतपुरम** (फोन 2330650) • **हैदराबाद** (फोन 24605383) • **बेंगलूर** (फोन 25537244) • **पटना** (फोन 2683407) • **लखनऊ** (फोन 2325455) • **गोवाहाटी** (फोन 26656090) • **अहमदाबाद** (फोन 26588669)

प्रतियां प्रमुख पुस्तक केंन्द्रो में भी उपलब्ध हैं

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें:
व्यापार व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग,
सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली
फोन. 011–24365610, 24367260, फैक्स: 24365609

ईमेल: dpd@mail.nic.in
dpd@sb.nic.in
वेबसाइट: www.publicationsdivision.nic.in

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

DPD B-II-09/2

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

कुरुक्षेत्र

वर्ष : 55 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 72, आश्विन–कार्तिक 1931, अक्टूबर 2009

प्रधान संपादक
नीता प्रसाद

वरिष्ठ सम्पादक
कैलाश चन्द्र मीना

सम्पादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक,
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110 011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक
जे.के. चन्द्रा

व्यापार प्रबंधक
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

ग्रामीण क्षेत्र में प्रगतिशील अर्थव्यवस्था से बदलता परिवेश	योगेश कुमार	3
जैव प्रौद्योगिकी ग्रामीण अर्थव्यवस्था की नई शक्ति	डॉ. रमेश कुमार सिंह	9
ग्रामीण अर्थव्यवस्था में तालाबों का योगदान	डॉ. जयशंकर मिश्र	13
ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार लाएगी धारणीय कृषि	डॉ. बद्री बिशाल त्रिपाठी	18
ग्रामीण अर्थव्यवस्था में रेशम उद्योग की सहभागिता	वेद प्रकाश दुबे एवं प्रो. एस.एन. चतुर्वेदी	24
ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में महिलाओं का योगदान	डॉ. अनीता मोदी	28
नरेगा–सफलता से आगे देखने की जरूरत	–	33
गांवों में संचार क्रांति ने खोले रोजगार के नए द्वार	चंद्रभान 'चंदन'	38
गांवों की बदलती तस्वीर	अखिलेश चन्द्र यादव	42
ग्रामीण क्षेत्रों में फैलाती नया उजाला : राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना	–	44
लाल मिर्च अर्थव्यवस्था की नई शक्ति	आर.बी.एल. गर्ग	47
पशुपालन के जरिए समृद्धि लाता किसान	सुधेन्द्र सिंह	49
ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में गांधीयन मॉडल की भूमिका	कन्हैया त्रिपाठी	51
बढ़ते बुजुर्ग घटती सुरक्षा	डॉ. उमेश चन्द्र अग्रवाल	54
मसूर उत्पादन बढ़ाने की नवीन पद्धति	ओमवीर सिंह मलिक	59
सबका पालनहार पालक	डॉ. सुनील कुमार खण्डेलवाल	65
सफलता की नई गाथा लिखता एक प्रगतिशील किसान	बृजलाल मौर्य	70

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय

आज वैश्विक मंदी से कोई भी देश अछूता नहीं है किंतु ऐसे में भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था न केवल इस मंदी से बेअसर ज्यों की त्यों चल रही है बल्कि और मजबूती से उभर रही है। इसका एक बड़ा कारण है ग्रामीण अर्थव्यवस्था का कृषि और कुटीर उद्योगों पर टिका होना और साथ ही, ग्रामीणजन अभी तक क्रेडिट कार्ड और बंधकपत्रों से भी अछूते रहे हैं। दूसरी ओर, शहरी भारत इस मंदी से बच नहीं पाया। किंतु शहरी भारत पर नकारात्मक प्रभाव ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यमान सकारात्मक निष्पादन से नगण्य हो गया। यानी ग्रामीण अर्थव्यवस्था ने देश में स्थिति को सहज बना दिया।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था ने न केवल देश को मंदी के दौर से उबारा है बल्कि आर्थिक विश्लेषकों का तो यहां तक मानना है कि विश्व को मंदी के दौर से निकालने में भी भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। चूंकि आज भी देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में ही बसती है और अपनी इस विशाल जनसंख्या के साथ वह विश्व बाजार को प्रभावित करने में सक्षम है। आज बहुराष्ट्रीय कंपनियों को भी यह समझ में आ गया है कि भारतीय ग्रामीण बाजारों की ओर संजीदगी से देखने का यही सही वक्त है। अब वे ग्रामीण परिचालन के लिए अपनी रणनीति दोबारा बनाने की होड़ में जुटी हैं।

हाल फिलहाल में ग्रामीण अर्थव्यवस्था में तेजी आने के पीछे कई कारण हैं। एक तरफ सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों के बजट में बड़े पैमाने पर बढ़ोत्तरी करके बुनियादी ढांचे को मजबूती प्रदान की है तो दूसरी तरफ संचारक्रांति ने ग्रामीणजनों को जागरूक करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। आज देश के ग्रामीण इलाकों में बसे गरीब लोग भी शत–प्रतिशत साक्षरता अर्जित करने, स्वास्थ्य और आवास, सम्पन्नता और बेहतर गुणवत्ता वाली जिंदगी जीने के लिए बेचैन हैं। वे विकास की मुख्यधारा से जुड़ना चाहते हैं और सरकार भी इस दिशा में कदम बढ़ाने के लिए कृत संकल्प है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर जोर देना उसकी इसी रणनीति का हिस्सा है।

सरकार ने नरेगा के जरिए सीधे गांव के लोगों तक पैसा पहुंचाने का काम शुरू किया है। फरवरी 2006 में 27 राज्यों के 200 जिलों से शुरू की गई यह योजना आज देश के सभी 596 जिलों में लागू है। नरेगा के तहत हर गरीब ग्रामीण परिवार के एक सदस्य के लिए साल में 100 दिन का रोजगार पक्का किया गया। गांवों में बुनियादी ढांचे के विकास के प्रमुख कार्यक्रम 'भारत निर्माण' योजना के आबंटन में इस वित्तवर्ष में 45 प्रतिशत वृद्धि की गई है। मानसून की कमी को देखते हुए किसान कर्ज माफी योजना और कर्ज राहत योजना को भी इस साल के अंत तक के लिए बढ़ा दिया गया है। वही कृषि के लिए कर्ज के लक्ष्य को भी बढ़ाकर 3,25,000 करोड़ रुपये तक कर दिया गया है।

ग्रामीण इलाकों के विकास के लिए सरकार ने हाल ही में एक और महत्वपूर्ण पहल की है। केंद्र ने ग्रामीण इलाकों में बैंकिंग गतिविधियों को बढ़ावा देने और स्वरोजगार के अवसर विकसित करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को निर्देश दिया है कि वे ग्रामीण इलाकों में कम से कम 500 ग्रामीण विकास एवं स्वरोजगार प्रशिक्षण संस्थान (आरयूडीएसटीआई) स्थापित करें। ये संस्थान अभी चल रहे 100 संस्थानों के अलावा होंगे और देश के सभी जिलों को कवर करेंगे।

आज ग्रामीण क्षेत्रों की सबसे बड़ी चुनौती कृषि आधारित अर्थव्यवस्था का उद्योग आधारित अर्थव्यवस्था की ओर स्थानांतरण है। एक तरफ बड़े पैमाने पर कृषि से हो रहे पलायन को रोकना जरूरी है तो दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों के विकास के लिए भी काम करना है। सरकारी स्तर पर इस दिशा में पुरजोर प्रयास किए जा रहे हैं। ग्रामीण बजट में लगातार हो रही वृद्धि इसी का द्योतक है।

तमाम चुनौतियों के बीच इसमें कोई दो राय नहीं है कि भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था विकास की नई शक्ति के रूप में उभरी है। गांव लगातार प्रगति के पथ पर अग्रसर हैं और न केवल अपने लिए संसाधन जुटा रहे हैं बल्कि देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। अगर यह कहा जाए कि आने वाले समय में विश्व मानचित्र पर भारतीय अर्थव्यवस्था के मजबूती से उभरने में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का ही हाथ होगा तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

ग्रामीण क्षेत्र में प्रगतिशील अर्थव्यवस्था से बदलता परिवेश

योगेश कुमार

सरकार द्वारा ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर जोर देना समग्र विकास के लिए बेहतरीन कदम है। इंडिया इंक के शीर्ष सीईओ का मानना है कि देश में समृद्धि बढ़ाने के लिए यह बिल्कुल सही उपाय है। वित्तमंत्री द्वारा बजट पेश करने के तुरंत बाद ईटी नाउ द्वारा आयोजित एक पैनल डिस्कशन में एफएमसीजी दिग्गज यूनिलीवर के कंज्यूमर प्रोडक्ट्स (फूड्स, एचपीसी) मनविंदर सिंह बग्गा ने कहा कि सरकार ग्रामीण इलाके में मांग बढ़ाने पर ध्यान दे रही है। श्री बग्गा ने कहा कि ग्रामीण उपभोक्ताओं के हाथ पर पैसा पहुंचाने की केंद्र की योजना लंबी अवधि में भारत को समृद्ध बनाने में मदद करेगी। उनके अनुसार एक देश केरूप में हम बेहतरीन काम कर रहे है। और हमें सिर्फ आगे की तरफ देखने की जरूरत है। हमें यह याद रखने की जरूरत है कि जिस दर से हम विकास कर रहे है, वैसा दुनिया के कई इलाकों में सोचना भी आसान नहीं है। वित्तमंत्री प्रणब मुखर्जी ने इस साल के लिए भारत निर्माण योजना के आबंटन में 45 फीसदी वृद्धि की है। इसके अलावा सिकान कर्ज माफी योजना और कर्ज राहत योजना को इस साल के अंत तक के लिए बढ़ा दिया है। कृषि के लिए कर्ज के लक्ष्य

आज भारतीय अर्थव्यवस्था पर जैसे बादल मंडरा रहे हैं, उन्होंने भारत के उद्योग जगत को ग्रामीण बाजारों को गंभीरता से लेने को मजबूर कर दिया है। ऑटोमोबाइल और एफएमसीजी कंपनियों को अब समझ में आ गया है कि ग्रामीण बाजारों की ओर संजीदगी से देखने का यही सही वक्त है। अनुमानों के अनुसार अगले तीन वर्षों में देश में रोजमर्रा इस्तेमाल होने वाली वस्तुओं (एफएमसीजी) के कुल इस्तेमाल में से 60 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण भारत से मिलेगा। लेकिन इस बाजार तक अपनी पहुंच कायम कर पाना काफी मुश्किल है, क्योंकि ग्रामीण जनसंख्या में से सिर्फ आधे लोगों का ही पारंपरिक मीडिया जैसे प्रेस, टीवी और रेडियों से संपर्क हो पाता है। ज्यादातर राष्ट्रीय प्रकाशन ग्रामीण बाजारों में उपलब्ध ही नहीं हैं और यहां तक कि स्थानीय मीडिया की भी लक्षित जनसंख्या के सिर्फ 6 प्रतिशत तक ही पहुंच है। गांवों में लोकप्रियता का जो प्रसार-प्रचार मुंहजबानी होता है उतना किसी और माध्यम से नहीं हो पाता। इसलिए कोई हैरत नहीं है अगर स्कूल मास्टर और पंचायत प्रमुख भारतीय कंपनियों के लिए ग्रामीण भारत में सबसे बढ़िया ब्रांड एम्बेसडर हो जाएं।

को बढ़ाकर 3,25,000 करोड़ रुपये तक कर दिया गया है। ग्रामीण आवास और सड़क के लिए आबंटन में भी वृद्धि की गई है।

गांवों में छुपा उद्योग जगत की किस्मत का सितारा

कुछ बादलों में हमेशा चांदी की रेखा चमकती है। आज भारतीय अर्थव्यवस्था पर जैसे बादल मंडरा रहे हैं, उन्होंने भारत के उद्योग जगत को ग्रामीण बाजारों को गंभीरता से लेने को मजबूर कर दिया है। मैनेजमेंट गुरु सी. के. प्रह्लाद की पुस्तक 'द फॉर्च्यून एट द बॉटम ऑफ द पिरामिड' को आए काफी वक्त अब बीत चुका है। अब तो लगता है कि आईटीसी का ई–चौपाल और एचयूएल का प्रोजेक्ट शक्ति भी इतिहास की किताबों का हिस्सा बन चुका है। जब चीजें काफी सहूलियत से चल रही थी, उस वक्त ग्रामीण कामयाबी की दास्तानें ऐसी केस स्टडी हुआ करती थीं जिनका आनंद लोग शाम की चाय की चुस्कियों के साथ उठाते थे। हालात बदल रहे हैं और अब गांवों के बाजार को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। ऑटोमोबाइल और एफएमसीजी कंपनियों को अब समझ में आ गया है कि ग्रामीण बाजारों की ओर संजीदगी से देखने का यही सही वक्त है। एफएमसीजी के लिए ग्रामीण बाजारों में उपभोक्ता खर्च में 20 फीसदी की वृद्धि दर्ज की गई है जोकि शहरों के लिए सिर्फ 17 फीसदी है। अप्रैल–सितंबर 2008 की अवधि में देखे तो एसी नेल्सन के आंकड़ों के मुताबिक स्किन क्रीम और लोशन, बालों के तेल, टूथपेस्ट, टॉफी आदि उत्पादों की श्रेणियों में आकार और मूल्य लिहाज से बढ़त शहरी बाजारों के मुकाबले गांवों में ज्यादा रही है।

ऑटो सेक्टर में मारूति सुजुकी इंडिया, जनरल मोटर्स, हुंदई मोटर इंडिया जैसी कंपनियां खासकर अपने ग्रामीण परिचालन के लिए अपनी रणनीति को दोबारा बना रही हैं। अब उनका मुनाफा गांवों में होने वाली बिक्री पर निर्भर हो चुका है। पिछले साल एमएसआई की बिक्री का करीब तीन फीसदी हिस्सा गांवों से आया। इस साल यह दस फीसदी है। इसी तरह जीएम इंडिया की बिक्री में ग्रामीण उपभोक्ताओं का योगदान करीब 40–50 फीसदी है। एमएसईआई के कार्यकारी अधिकारी, मार्केटिंग एंड सेल्स, मयंक पारिख कहते हैं, 'यह तो सिर्फ हिमखंड की सतह है जो हम देख रहे हैं।'

ग्रामीण बाजार का दोहन करने के रहस्य

बाजार से जुड़े लोगों के लिए ग्रामीण बाजार हमेशा ही एक रहस्य रहे हैं। आमतौर पर मार्केटिंग वालों को गांवों के बाजारों की क्षमता का कम ज्ञान होता है या वे उस ओर ध्यान ही नहीं देते। अधिकतर ब्रांड मालिक शहरी उपभोक्ताओं की पसंद और नापसंद के बारे में तो तालठोक कर दावा कर सकते हैं, लेकिन बात जब गांव के आदमी की आती है, तो वे इस आखिरी मंजिल को नाप पाने में नाकाम हो जाते हैं। ऐसे ब्रांड निर्माताओं को निराश होने की जरूरत नहीं है और न ही गांवों को जानने की कवायद में अपने पांव धूल में सानने से कुछ हासिल होने वाला है। ऐसे ब्रांड की मदद के लिए मैदान में आ गई है कुछ ग्रामीण मार्केटिंग कंपनियां जो खासकर एफएमसीजी और टिकाऊ उपभोक्ता उत्पादों के क्षेत्र में काम कर रही हैं और इस समस्या को काफी हद तक अपने लिए सुलझा चुकी हैं। इन मार्केटिंग सॉल्यूशन कंपनियों को सहारा मिलने वाला है उन बड़े ब्रांडों से, जो शहरों में परिपक्वता का स्तर हासिल करने के बाद अब भारत के गांवों को कब्जाने चल पड़े हैं। इनमें टेलीकॉम, आईटी, ऑटोमोटिव और वित्तीय सेवा कंपनियां शामिल हैं।

ग्रामीण मार्केटिंग के स्पेस में सबसे पहले कदम रखने वाली कंपनियों में एक मार्ट के प्रदीप कश्यप कहते हैं, 'हमारी पहले से ही ज्यादा बुकिंग हो चुकी है... इंटेल, माइक्रोसॉफ्ट और विशाल कॉरपोरेट हमारे पीछे पड़े हुए हैं।' वह कहते हैं, 'मंदी की वजह से गांवों में खपत के रुझानों पर कोई असर नहीं पड़ा है। ग्रामीण भारत का बाजार अब भी बहुत आकर्षक है।'

ऐसा ही मानते हैं प्रदीप लोखंडे, जो मौजूदा वैश्विक मंदी के दौर को पुणे में अपनी कंपनी रूरल रिलेशंस के लिए और अपनी टीम के लिए सबसे बेहतर मानते हैं। उनकी टीम ने हाल ही में एक बहुत बड़ा अभियान चलाया है जिसके तहत उन्होंने दस राज्यों में 1,800 फ्रैंचाइजी बनाकर रिलायंस मनी के वित्तीय उत्पादों की बिक्री की है। वह कहते हैं, 'पहले वित्तीय सेवा का बाजार सिर्फ शहरी क्षेत्रों तक सीमित था, लेकिन नकदी के लिहाज से देखें तो ग्रामीण उपभोक्ता की स्थिति शहरी उपभोक्ताओं के मुकाबले काफी स्थिर है और वह बाजार में होने वाली हलचलों से मोटे तौर पर काफी सुरक्षित हैं।' लोखंडे कहते हैं, 'अधिकतर शीर्ष कंपनियां आज गांवों की जरूरतों और वहां रह रहे लोगों को समझने की कोशिश कर रही हैं। मैंने तो यहां साबुन से लेकर टाटा सूमो तक हर चीज की बिक्री की है। भारत में उपग्रह चैनलों के आने के साथ आज गांवों का उपभोक्ता उतना ही महत्वपूर्ण हो गया है जितना शहरी उपभोक्ता है। आखिरकार, भारत में शहर सिर्फ 5,000 ही हैं, लेकिन गांवों की संख्या साढ़े छह लाख है। आगे की ओर देखें तो हम पाते हैं कि यही बाजार हमारे ग्राहकों की जेबें भरने वाले साबित होंगे।

ग्रामीण मार्केटिंग के बीज तो बहुत पहले हिंदुस्तान लीवर जैसी कंपनियों ने बो ही दिए थे। आज से आठ साल पहले 2001 में जब हिंदुस्तान लीवर ने अपने ग्रामीण मार्केटिंग अभियान 'शक्ति' की शुरुआत की जिसके तहत 2,000 से कम आबादी वाले गांवों को कब्जाया जाना था, तो उसने मार्ट की मदद ली

थी। कश्यप याद करते हुए बताते हैं, 'हमने देश भर में फैले महिला स्वयंसहायता समूहों को लक्ष्य बनाने का फैसला किया जिन्हें लीवर के उत्पाद के वितरक के रूप में भूमिका निभानी थी।' छोटे गांवों में जोखिम मुक्त लघु उद्यमों का यह प्रयास दुनिया में अपने किस्म की पहली चीज थी जिसे कई पुरस्कार हासिल हुए। आज इस परियोजना के तहत 46,000 गांव देश भर में आते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों पर कम्पनियों की नजर

ग्रामीण भारत बड़े पैमाने पर किसानों को कर्ज से मिली राहत और उभरते मध्य वर्ग की वजह से कंपनियों के आकर्षण का केंद्र बन गया है। अपनी विकास दर को बढ़ाने के लिए कंपनियां इस बाजार की ओर आ रही हैं। विश्लेषकों के मुताबिक, ग्रामीण भारत में शॉपिंग को लेकर उत्साह है। यहां के खरीदार बेहतर प्रोडक्ट खरीदना चाहते हैं। कंपनियां इस बदलते मूड को पकड़ने की कोशिश में हैं। एफएमसीजी, कार, दोपहिया और कंज्यूमर ड्यूरेबल कंपनियां इस होड़ में सबसे आगे दिखाई दे रही हैं।

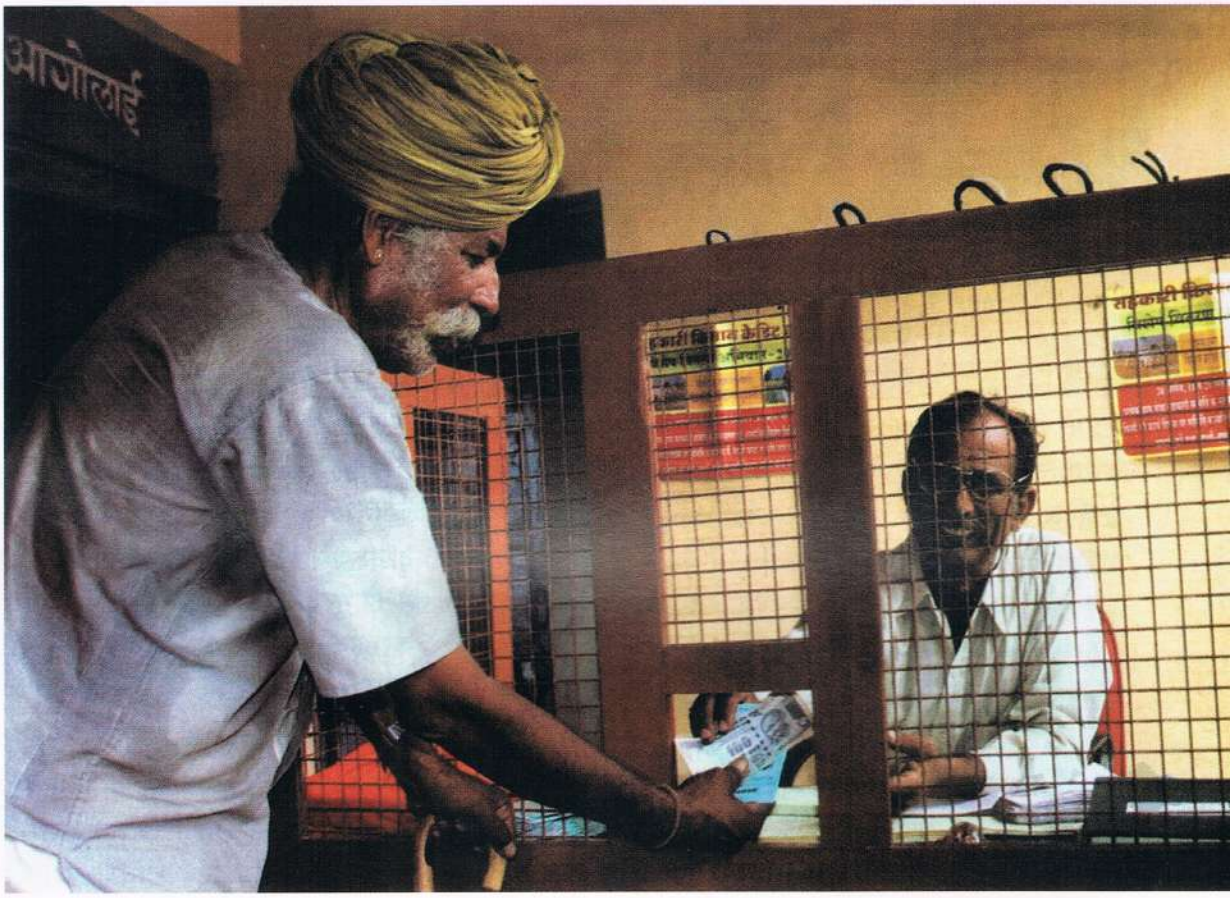

ग्रामीण बाजार में एफएमसीजी सेक्टर 20 फीसदी की रफ्तार से बढ़ रहा है, वही शहरी भारत में यह 17–18 फीसदी विकास दर ही हासिल कर पा रहा है। ए.सी. नेल्सन के मुताबिक ग्रामीण बाजार में जिस श्रेणी के प्रोडक्ट की सबसे ज्यादा मांग है, उनमें हेयर ऑयल, टूथपेस्ट, शैंपू, स्किन क्रीम और लोशन शामिल हैं। इसके अलावा, कैंडी के मामले में भी ग्रामीण बाजार शहरों की तुलना में ज्यादा आगे हैं। डाबर के सीईओ सुनील दुग्गल ने बताया, 'हम अपनी बिक्री का करीब 50 फीसदी हिस्सा ग्रामीण और कस्बाई बाजारों से हासिल करते हैं।'

ग्रामीण बाजार में मध्य वर्ग की संख्या बढ़ रही है। यहां मध्य से उच्च आय वर्ग के घरों की संख्या कुल आबादी का 17 फीसदी हो गई है और यह सात फीसदी की रफ्तार से बढ़ रही है। नेशनल काउंसिल फॉर एप्लायड इकानॉमिक रिसर्च के सीनियर फेलो डॉ. राजेश शुक्ला ने बताया, 'ग्रामीण बाजार और शहरी बाजार के खर्चों में बड़ा अंतर है। 'विश्लेषकों का मानना है कि कंपनियां ग्रामीण बाजार के भीतर तक नहीं जा रही हैं। संकट के दौर में ग्रामीण भारत हमेशा से ही कॉरपोरेट सेक्टर के लिए बेलआउट पैकेज साबित होता रहा है, लेकिन जिस तरह से ग्रामीण भारत उभर रहा है, इससे मार्केटिंग के पुरोधा आश्चर्यचकित हैं। अब भी ग्रामीण उपभोक्ताओं की वास्तविक संख्या उपलब्ध नहीं है, फिर बाजार की वास्तविक क्षमता का आकलन किया जाना भी बाकी है।

ग्रामीण बाजार में स्थानीय ब्रांडों से भी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। इससे शहर केंद्रित मार्केटिंग करने वाले लोग घबरा जाते हैं। ग्रामीण उपभोक्ताओं की पसंद में शहरी लोगों के मुकाबले विविधता हो सकती है। ग्रामीण बाजार तक क्षेत्र–दर–क्षेत्र पसंद बदलती जाती है।' एनसीएईआर के शुक्ला कहते हैं, 'ग्रामीण

समृद्ध ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भुनाने के प्रयास

अनुमानों के अनुसार अगले तीन वर्षों में देश में रोजमर्रा इस्तेमाल होने वाली वस्तुओं (एफएमसीजी) के कुल इस्तेमाल में से 60 प्रतिशत हिस्सा भारत से मिलेगा। लेकिन इस बाजार तक अपनी पहुंच कायम कर पाना काफी मुश्किल है, क्योंकि ग्रामीण जनसंख्या में से सिर्फ आधे लोगों का ही पारंपरिक मीडिया जैसे प्रेस, टीवी और रेडियों से संपर्क हो पाता है। ज्यादातर राष्ट्रीय प्रकाशन ग्रामीण बाजारों में उपलब्ध ही नहीं हैं और यहां तक कि स्थानीय मीडिया की भी लक्षित जनसंख्या के सिर्फ 6 प्रतिशत तक ही पहुंच है। ऐसे में डाबर, हिंदुस्तान यूनिलीवर, आईटीसी, मारूति, हीरो होंडा आदि कंपनियों को ग्रामीण बाजारों में अपनी मौजूदगी दर्ज करने के लिए क्या करना होगा? डाबर के मुख्य कार्याधिकारी सुनील दुग्गल का कहना है कि जहां भारत रहता है वहां उपभोक्ता संपर्क बढ़ाने के लिए सीधे लोगों से जुड़ना ही एकमात्र रास्ता है। उनका कहना है, 'हमें अहसास हुआ है कि हमें पारंपरिक मीडिया से आगे बढ़ने की जरूरत है।'

इसी अहसास ने डाबर को पुराने जरियों से इतर कुछ नया अपनाने की प्रेरणा दी है और बाजार अनुसंधान के जरिये यह पता चला कि 80 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या खुला सरसों का तेल इस्तेमाल करती है, तब कंपनी ने डाबर आंवला केश तेल को पेश किया। कंपनी ने अपनी ग्रामीण बिक्री रणनीति के तहत सात राज्यों में ऐसे गांवों को कवर किया है, जिनकी जनसंख्या 300 लोग तक है। यहां इस रणनीति के तहत कंपनी ने सौंदर्य और कौशल प्रतियोगिता 'बनके दिखाओ रानी प्रतियोगिता' शुरू की है। ब्रांड एम्बेसडर रानी मुखर्जी के नाम पर शुरू इस गतिविधि में लोगों को एक इंटरेक्टिव प्लेटफॉर्म मुहैया कराया गया है और इसके विजेताओं को उद्यमी बनने का मौका मिलेगा। डाबर आंवला केश तेल में साल–दर–साल के आधार पर 20 प्रतिशत की विकास दर देखने को मिली है।

दूसरे भी इससे काफी पीछे नहीं हैं। यह जानते हुए कि कुल फ्रिज और वॉशिंग मशीनों की इस साल बिक्री का लगभग 40 फीसदी हिस्सा ग्रामीण उपभोक्ताओं ने खरीदा है, सैमसंग इंडिया सरीखी कंपनियों ने ग्रामीण रोड शो जैसे 'ड्रीम होम सीरीज' पेश किए हैं। ग्रामीण भारत से अब सैमसंग को उसकी कुल बिक्री का लगभग पांचवां हिस्सा मिल रहा है।

एफएमसीजी क्षेत्र की दिग्गज कंपनी हिंदुस्तान यूनिलीवर ने पश्चिम बंगाल में 400 साल पुराने लोग नाटक के रूप 'जान्त्रा' का इस्तेमाल किया ताकि ग्रामीणों को लुभा सके। जात्रा ने क्लिनिक प्लस को पश्चिम बंगाल के घर–घर में मशहूर कर दिया और इसके पीछे के विचार को बेहद कुशल तरीके से ब्रांड संपर्क के साथ नाटक की कहानी में चुना गया। इसके अलावा कंपनी का एक अन्य ग्रामीण मार्केटिंग कार्यक्रम प्रोजेक्ट 'शक्ति' भी काफी पसंद किया गया।

बीमा कंपनियों ने यह काफी पहले समझ लिया था। मैक्स न्यूयार्क लाइफ इंश्योरेंस की मार्केटिंग प्रमुख अनीषा मोटवानी का कहना है कि निजी कंपनियों के साथ विश्वास का मुद्दा है। इसलिए यह जरूरी हो जाता है कि वे स्थानीय स्तर पर सामुदायिक कार्यक्रमों के साथ जुड़े। मैक्स न्यूयॉर्क इसके साथ ही कुछ स्कूलों के साथ बेहतरीन छात्र के लिए ट्रॉफी प्रायोजित करने के लिए बातचीत भी कर रही है। आईसीआईसीआई प्रूडेंशियल लाइफ इंश्योरेंस उपभोक्ताओं को शिक्षित करने के लिए नुक्कड़ नाटकों की मदद लेगी। इसके अलावा कंपनी राज्य ई–प्रशासन परियोजनाओं जैसे एपी ऑन लाइन डॉट कॉम (आंध्र प्रदेश) और ईमित्रा डॉट कॉम (राजस्थान) के साथ साझेदारी कर ग्राहकों को उनके बूथ में ही नीतियों का पुर्नीकरण करने की सुविधा देगी। इसी के साथ कंपनी ने सुविधा इन्फोसर्व के साथ मिलकर पॉलिसीधारकों को सुविधा के 3,500 स्टोरों पर अपने प्रीमियम का भुगतान करने की सुविधा दी है।

मुद्रा समूह के मुख्य परिचालन अधिकारी प्रताप बोस (बोस मुद्रा की ग्रामीण मार्केटिंग शाखा टेरा को भी देखते हैं) का कहना है, कंपनी ने ब्रांड प्रमोशन के लिए गांव स्तर पर राय बनाने वाले लोगों जैसे कि पंचायत सदस्यों को लक्ष्य बनाया है। मारूति सुजुकी के प्रवक्ता का कहना है, 'हम लगातार ग्रामीण खेल कार्यक्रम, मंडी कार्यक्रम और ग्रामीण महोत्सव आयोजित कर रहे हैं। ग्राम पंचायत के सदस्यों के लिए एसएमएस अभियान भी करते हैं।'

दोपहिया वाहन निर्माता कंपनी हीरो होंडा अपने 'हर गांव हर आंगन' कार्यक्रम का इस्तेमाल गांवों में ग्राम पंचायत सदस्यों तक अपनी पहुंच बनाने के लिए कर रही है। कंपनी ने इसके लिए 500 के लगभग ग्रामीण बिक्री अधिकारियों का एक नेटवर्क तैयार किया हुआ है। कंपनी की कुल बिक्री का लगभग 40 फीसदी हिस्सा ग्रामीण बाजारों से आता है और कंपनी की योजना इस वर्ष के अंत तक इसे मजबूत करने की है जिसके लिए कंपनी अपनी पहुंच 25,000 गांवों तक बढ़ाएगी। दूसरी कंपनियां भी कुछ ऐसा ही कर रही है। मिसाल के तौर पर गोदरेज कंज्यूमर प्रोडक्ट्स जिसका साबुन गांवों में सबसे अधिक लोकप्रिय है, की योजना अगले दो से तीन साल में अपनी पहुंच 17,500 गांवों से बढ़ाकर 50,000 गांवों तक करने की है।

गांवों में लोकप्रियता का जो प्रसार–प्रचार मुंहजबानी होता है उतना किसी और माध्यम से नहीं हो पाता। इसलिए कोई हैरत नहीं है अगर स्कूल मास्टर और पंचायत प्रमुख भारतीय कंपनियों के लिए ग्रामीण भारत में सबसे बढ़िया ब्रांड एम्बेसडर हो जाएं।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेल: yogesh.sahkarita@gmail.com

जैव प्रौद्योगिकी ग्रामीण अर्थव्यवस्था की नई शक्ति

डॉ. रमेश कुमार सिंह

जैव प्रौद्योगिकी एक विशाल और बहुमुखी सम्भावनाओं वाली वैज्ञानिक विधा है जिसमें सृजन एवं विनाश दोनों पहलू शामिल हैं। आधुनिक युग में जैव प्रौद्योगिकी एक महत्वपूर्ण विज्ञान बनकर उभरी है और विश्व में जैव प्रौद्योगिकी की लहर-सी आई हुई है। कृषि उत्पादन क्षेत्र, उद्योग, चिकित्सा विज्ञान, जैव-ऊर्जा, ऊतक संवर्धन, जैव-नाइट्रोजन यौगिकीकरण, प्रदूषण नियंत्रण आदि क्षेत्रों में कुछ ऐसी क्रांतिकारी उपलब्धियां हुई हैं जो निश्चित ही दांतों तले उंगली दबाने को मजबूर कर देती हैं। यद्यपि जैव प्रौद्योगिकी काफी खर्चीली है लेकिन इसके अनेक लाभ हैं। विश्व एवं अपने देश की निरंतर तेज गति से बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण-पोषण हेतु भरपूर अनाजों एवं खाद्य पदार्थों का उत्पादन करने हेतु जैव प्रौद्योगिकी काफी हद तक मददगार हो सकती है।

पुराने जमाने में प्राकृतिक भण्डार का दोहन एक सीमा तक होता था और प्रकृति के बीच हम लोग मर्यादित ढंग से रहते थे। आज गुजर-बसर का तरीका बदल गया है। भगवान की अदभुत निराली प्रकृति पर हम अधिकार जताने की कोशिश करने लगे हैं। परम्परागत रूप से विभिन्न पेड़- पौधे जीव-जन्तुओं, जल, वायु, सूर्य, आकाश - सभी को परमात्मा का स्वरूप मानते थे। वर्तमान में जनसंख्या का दबाव बढ़ने से नित्य नई-नई खोज हो रही हैं ताकि बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। आधुनिकीकरण के नाम पर

नई–नई तकनीकें प्रयोग में लाई जा रही हैं। आज का इन्सान विज्ञान के शिखर पर जाकर सफलता हासिल करना चाहता है। इसी का नतीजा है– जैविक प्रौद्योगिकी।

जैव प्रौद्योगिकी की सटीक परिभाषा है, ''जैव प्रक्रिया का औद्योगिकी उपयोग''। यह प्रौद्योगिकी हजारों वर्ष पुरानी है जिसकी सर्वाधिक पुरानी प्रक्रिया खमीर का निर्माण है। शताब्दियों से दही, पनीर, सिरका, डबल–रोटी या भटूरे का आटा और मदिरा बनाने में सूक्ष्म जीवाणुओं का प्रयोग किया जाता रहा है। किन्तु आज हम इस प्रक्रिया को अच्छी तरह जानते हैं। प्रयोगशाला के सार्थक प्रयोगों से हमें ज्ञात हो चुका है कि इन प्रक्रियाओं के जिम्मेदार जीवाणु वास्तव में सूक्ष्मजीव ही हैं, जिनका उपयोग कृषि, चिकित्सा, उद्योग, प्रदूषण के क्षेत्रों में उत्कृष्ट परिवर्तन हेतु भली–भांति किया जा रहा है।

जीवाणुओं को नियंत्रित कर उनका विभिन्न प्रकार से उपयोग कर सकने की क्षमता ने ही आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी को जन्म दिया है। आधुनिक 'जैव प्रौद्योगिकी क्रान्ति' डी.एन.ए. (डी ऑक्सी राइबो न्यूक्लिक एसिड) और उसकी बनावट को भली प्रकार समझने पर आधारित है। डी.एन.ए. एक जटिल कार्बनिक अणु है जिसमें प्रत्येक जीव में निहित प्रोटीन के संश्लेषण का कोड है। इस प्रकार यह सभी जीवों के भौतिक स्वरूप, विकास, प्रजनन और जैवीय कार्यकलापों पर नियंत्रण रखता है। प्रोटीन संश्लेषण के लिए नियंत्रण का कार्यक्रम डी.एन.ए. की रासायनिक संरचना में संकेतबद्ध रहता है। इस संकेत को समझना और परखनली में डी.एन.ए. का संश्लेषण आनुवांशिक अभियांत्रिकी के विकास में महत्वपूर्ण उपलब्धियां हैं। लेकिन आनुवांशिक अभियांत्रिकी की शुरुआत वास्तव में इस खोज से हुई कि सूक्ष्मजीव बाहर से दिए गए डी. एन. ए. को स्वीकार कर लेते हैं। इस प्रकार आनुवांशिक अभियांत्रिकी द्वारा मूल कोशिकाओं में बाहरी डी.एन.ए. सम्मिलित कर इच्छित प्रोटीन का निर्माण किया जा सकता है तथा जैविक रूप से महत्वपूर्ण प्रोटीन,जो प्राकृतिक साधनों से उपलब्ध नहीं हैं, को प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरणतः मधुमेह पीड़ित रोगियों के लिए आवश्यक इन्सुलिन को इस तकनीकी द्वारा बड़ी मात्रा में प्राप्त किया जा सकता है। जैसे जानवरों की विशेष नस्लें खास कार्यों जैसे–दूध उत्पादन, भारी बोझ ढोने हेतु तैयार की जाती हैं। उसी तरह आजकल जीवाणुओं को चुनकर आनुवांशिक अभियांत्रिकी की तकनीकों का उपयोग कर ऐसे जीवाणुओं की नई किस्मों का विकास किया जा सकता है। उदाहरणस्वरूप एक ऐसे विकसित जीवाणु जिन्हें स्नेहपूर्वक 'बग्स' (Bugs) नाम से पुकारते हैं, जिनकी सहायता से मानवनिर्मित प्लास्टिक के अनुपयोगी एवं अवशेष मात्रा से छुटकारा पाना सम्भव हो सकता है अर्थात ये टूटे–फूटे प्लास्टिक के टुकड़ों को खाने की क्षमता रखते हैं।

जैव प्रौद्योगिकी के शोध कार्यों की असीमित व्यावहारिक उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा सन् 1982 में ''राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी बोर्ड'' की स्थापना की गई। कृषि के क्षेत्र में जैव प्रौद्योगिकी की तकनीकों द्वारा क्रांतिकारी परिणाम देखा जा रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के अन्तर्गत 1985 में जैव प्रौद्योगिकी की स्थापना की गई। इसके साथ ही अन्य संस्थानों, विश्वविद्यालयों तथा प्रयोगशालाओं में जैव तकनीकी द्वारा विभिन्न फसलों की उपज बढ़ाने और इनकी गुणवत्ता में सुधार लाने के प्रयास जारी हैं। दलहन की उच्च उत्पादकता वाली अधिक प्रोटीनयुक्त और रोगरोधी किस्में प्राप्त करने के प्रयासों के उत्साहजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं। गेहूं, चावल, मक्का आदि अनाज वाली फसलों और विभिन्न फल पौधों में भी 'जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण' की क्षमता का विकास जैव प्रौद्योगिकी की तकनीक द्वारा विकसित किया गया है। दलहनी फसलों से अधिक पैदावार लेने के लिए मूंग, चना, मटर आदि फसलों की जड़ों में गांठों का निर्माण करने वाली उन जीनों को अपने नियंत्रण में करने का प्रयत्न कर रहे हैं, जो वायु से नाइट्रोजन प्राप्त करके गांठों (ग्रंथियों) में नत्रजन स्थिरीकरण कर देते हैं जिससे लगभग 20–40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर संचित हो जाती है और भूमि मजबूत होकर उर्वरक बन जाती है, साथ ही उर्वरकों पर बोझ भी कम पड़ता है। इसी प्रकार दोहरे लाभ वाले पौधों का निर्माण भी इस प्रौद्योगिकी द्वारा सम्भव हो सका है। उदाहरणस्वरूप सूरजमुखी और फ्रेंचबीन को मिलाकर 'सनबीम' नामक पौधा, जो दोनों के ही गुण रखता है। आलू और टमाटर के जीवद्रव्यों को मिलाकर ऐसे पौधों का निर्माण सम्भव हो सका है जो जमीन के अन्दर आलू तथा ऊपर टमाटर पैदा कर सकेगा, जिसे 'पोमेटो' नाम दिया गया है।

आनुवांशिक अभियांत्रिकी, जो जैव प्रौद्योगिकी की एक तकनीक है, जिसके द्वारा आनुवांशिक पदार्थ को प्रतिस्थापन या योग द्वारा परिवर्तित किया जा सकता है अर्थात् एक पौधे के आनुवांशिक पदार्थ को हटाकर उसके स्थान पर दूसरे पौधे का आनुवांशिक पदार्थ मिला देते हैं। जैसे नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले पौधे के आनुवांशिक पदार्थ को विभिन्न महत्वपूर्ण पौधे में स्थानान्तरित किया जा सकता है।

कृषि क्षेत्र में, विशेष रूप से बागवान में बेर एवं आड़ू के संकरण से एक नया फल 'नेक्टेरिन' तैयार किया गया है, जो अमरीका में काफी प्रचलित है। इसी प्रकार सब्जियों में, रैफेनोब्रैसिका नामक पौधा मूली (रेफेनस सटाइवस) तथा सरसों (ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस) के संकरण से तैयार सिकल सिरेल नामक अन्तरवंशीय जाति का पौधा तैयार किया गया है। सेव में वूली कीट से बचाने हेतु मालिंग मर्टन प्रतिरोधी प्रकंद इस जैव तकनीकी से पैदा किया गया है। अंगूर में भी फाइलोक्जेरा कीट के प्रतिरोधी प्रकंद तैयार हैं। लाइम एवं लेमन के प्रसंस्करण से राजामुन्दरी और कागजी कला नींबू की किस्में विकसित की गई हैं। कागजी कला नींबू का छिलका पतला होने के कारण काफी लोकप्रिय है और फल में रस की मात्रा भी अधिक है। आई. ए. आर. आई. नई

दिल्ली में ऊतक संवर्धन विधि से मादा पपीता से लगभग 20–25 दिन में पपीते के 20,000 हजार पौधे पैदा किए गए। इसी प्रकार राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला पुणे में हल्दी, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र ट्राम्बे, मुम्बई में अन्नानास की पौध तैयार करना, तथा टेरी नई दिल्ली द्वारा ऊतक संवर्धन से गन्ने की नई–नई किस्में विकसित की गई हैं। गन्ने की ऊतक विधि से तैयार किस्में सीओएस 96260, सीओएस 84230 आदि हैं, जिनमें अधिक मिठास तथा तना मुलायम होता है।

जैव प्रौद्योगिकी के सिद्धान्त पर लगाए गए बाग के पेड़ों की ऊंचाई तथा आकार इच्छानुसार प्राप्त किए जा सकते हैं, जिसका प्रबंधन आसानी से किया जा सकता है तथा उत्पादित फलों के आकार, रंग और वजन में समानता रहेगी एवं पोषणमान भी सामान होगा, साथ ही सभी फल एक समय में पकेंगे।

जैव प्रौद्योगिकी के सहयोग से पौधों में उन्नत लक्षण, जैसे–पैदावार, रोग प्रतिरोध क्षमता, पोषकमान, पर्यावरण प्रतिकूल परिस्थितियों में अनुकूलन आदि में क्रांतिकारी परिवर्तन किया जा सकता है। उन्नत पौध उत्पादन का एक महत्वपूर्ण पहलू प्रजनन प्रक्रिया है, जिससे जनकों के एक या अधिक अनुकूल लक्षणों को मिलाकर उनकी संततियों में पहुंचा दिया जाता है। इस उद्देश्य के लिए पौध तैयार करने की अनेक वैज्ञानिक विधियां हैं, जिसमें सामान्य तरीके निम्नांकित हैं –

परम्परागत विधि– इस विधि में बीजों और प्रकंद को पौध तैयार करने हेतु आधारभूत सामग्री के रूप में कार्य में लिया जाता है।

ऊतक संवर्धन– इस विधि में पादक कोशिकाओं के एक महत्वपूर्ण गुण का उपयोग किया जाता है, जो एक पूरे पौधे को जन्म देता है। इस तथ्य के आधार पर किसी भी कोशिका या कोशिकाओं के समूह को या पौधे के किसी भाग को, जैसे –तना, पत्ती आदि के टुकड़े को प्रयोगशाला में उचित नियंत्रित परिस्थितियों में एक पोषक माध्यम पर उगाया जाता है। इस विधि से पुष्पन, बीज उत्पादन और अंकुरण की अवस्थाओं के बिना ही पौधों का शुष्क प्रजनन प्रकार तैयार किया जा सकता है। गेहूं, चावल, मक्का तथा अन्य दूसरी फसलों की किस्मों को सुधारने में इस तकनीक का बहुतायत में प्रयोग किया जा रहा है। इसकी सहायता से अल्पावधि की फसलों की जिसमें पैदावार अधिक देने की क्षमता के साथ रोगों तथा पर्यावरण की प्रतिकूल परिस्थितियों की प्रतिरोधी किस्में तैयार की जा रही हैं।

जैव प्रौद्योगिकी के आधार पर कृषि उत्पादन वृद्धि के व्यापक परीक्षणों में 'ट्रांसजैनिक कृषि' भी एक है। पश्चिमी देशों के जैव तकनीकी वैज्ञानिकों के अनुसार विश्व का भविष्य ट्रांसजैनिक कृषि उत्पादों पर टिका हुआ है क्योंकि संसार में भूमि उपलब्धता, उर्वरक प्रयोग एवं विकसित कृषि विधियों के प्रयोग की सीमाएं हैं। विश्व की बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए यह एकमात्र आशा की किरण है। ट्रांसजैनिक प्रजातियों के विकास में प्राकृतिक जीन में कृत्रिम उपायों द्वारा किसी दूसरे पौधे के जीन का हिस्सा जोड़ दिया जाता है अथवा इनकी मूल संरचना को परिवर्तित कर दिया जाता है। इस परिवर्तन के मूलतः दो उद्देश्य होते हैं– इनकी गुणवत्ता में वृद्धि, बीमारियों के प्रति प्रतिरोध क्षमता में वृद्धि। अमरीका तथा यूरोपीय कम्पनियां विगत एक दशक से परिवर्तित जीन वाली ट्रांसजेनिक प्रजातियों के विकास में लगी हुई हैं, जिसके परिणामस्वरूप सर्वप्रथम बेल्जियम ने रेपसीड की शाकनाशी प्रतिरोधी प्रजातियों का उत्पादन शुरू किया, जबकि अमरीकी कम्पनी 'सोबा' द्वारा मक्के की कीट प्रतिरोधी प्रजाति विकसित की गई है।

जैव प्रौद्योगिकी के उपयोग

फलों की क्रॉस/अन्तर्जातीय क्रॉस/संकर किस्में आज जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महारथ हासिल करने के ही परिणाम हैं जिनसे मानव समाज लाभान्वित हो रहा है।

कृषि क्षेत्र आम की किस्मों के क्रॉस

अल्फोन्सो	–	नीलम X अल्फोन्सो बानेशान
मल्लिका	–	नीलम X दशहरी
महमूद बहार	–	वम्बई X काला पेडी
आम्रपाली	–	दशहरी X नीलम
सिन्धु	–	रत्ना X अल्फोन्सो
नीलेश्वरी	–	नीलम X दशहरी
हायब्रिड 61	–	नीलम X लंगड़ा
हायब्रिड 10	–	बेगनपल्ली X अल्फोन्सो
हायब्रिड	–	28,29,31,39,72,75,80,85,86,91 –दशहरी X तोतापारी

नींबू प्रजाति की अर्न्तवंशीय संकर

सिटरुमेलस – ट्राइपफोलिएटओरेन्ज X ग्रेपफ्रूट
लिम्क्वेट – कुमक्वेट X वेस्ट इंडियन लाइम
अंगूर की संकर किस्मों के क्रॉस
अर्काशर्वती – ब्लैक चम्पा X थॉम्पसन सीडलेस
अर्काहंस – बंगलोर ब्लू X अनाव–ए–शाही

नींबू प्रजाति के अन्तर्जातीय क्रॉस

टेन्जोर – माल्टा X संतरा
लेमेन्डिस – लेमन X संतरा
लेमनेन्ज – लेमन X मालटा
टेन्जिलो – संतरा X ग्रेपफूट

पपीता की संकर किस्में

कोयम्बूटर 3 – कोयम्बटूर–2X सनराईजसोलो
कोयम्बटूर 4 – कोयम्बटूर–1X वॉशिंगटन

सेब की संकर किस्में

चौबटिया – रेड डेलीशियस X अर्ली सेनबरी
रेड गोल्ड – गोल्डन डेलीशियस X रिच–ए–रैड
स्पार्टन – मैकइन्टोस X न्यूटाउन

लोकाट की संकर किस्में

सेन्टेनाटिया –मिजुहा मोगुई

चिकित्सा विज्ञान– (औषधि उद्योग– दवाई निर्माण) मनुष्य में बौनापन दूर करने हेतु हार्मोंस निर्माण करना।

डी एन ए तकनीक द्वारा अच्छे प्रोटीन का उत्पादन, इन्सुलिन एवं इन्टरफेरोन आदि के बनाने में छुआछूत रोगों से बचाने हेतु टीके (वैक्सीन) का निर्माण।

- जैव तन्त्र में मदद।
- मानव प्रकृति के रहस्यों का शीघ्र पता लगाने हेतु।
- प्राणी कोशिका एवं पादप कोशिका के संकरण की सम्भावना अर्थात् प्रकृति के साथ छेड़छाड़।
- समुद्र तेल की सफाई– समुद्र में फैले पेट्रोलियम की सफाई हेतु स्यूडोमोनास जीवाणु का विकास।

'सुपरमैन'के निर्माण हेतु

इस प्रकार जैव प्रौद्योगिकी की नित्य नई विधाओं और सम्भावनाओं ने वह सब कुछ कर दिखाया,जो आज से कुछ वर्ष पूर्व तक मनुष्य के स्वप्न तक ही सीमित था, परन्तु एक सिक्के के दो पहलू होते हैं। निर्विवाद रूप से जैव प्रौद्योगिकी की असीमित उपादेयता से इंकार नहीं किया जा सकता, परन्तु इसके गलत इस्तेमाल या प्रयोग से होने वाले खतरों से आंख मूंद लेना भी बुद्धिमतापूर्ण नहीं होगा। हां, टर्मिनेटर जीन से तैयार टर्मिनेटर बीजों के प्रति कृषकों में अभी भ्रांति है, जो अमरीका की कम्पनी द्वारा तैयार किए जा रहे हैं जिनमें पुनः अंकुरण की क्षमता नहीं होती है, हर वर्ष नए बीज प्रयोग करने होंगे। निश्चय ही ऐसे बीजों की उपज क्षमता काफी अच्छी है। इसकी उपलब्धियां मानव कल्याण में सहायक हो सकती हैं, किन्तु इसका गलत उपयोग धरती पर से प्राणी जगत एवं वनस्पति जगत के समूल विनाश की क्षमता रखता है।

निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि जैव प्रौद्योगिकी/अभियांत्रिकी द्वारा कृषि, पशुपालन, स्वास्थ्य रक्षा, ऊर्जा उत्पादन, पर्यावरण (जल एवं थल) प्रदूषण नियंत्रण, उद्योग विकास और अन्य विभिन्न क्षेत्रों में अनेक लाभ प्राप्त हो सकते हैं। जैव प्रौद्योगिकी देश के चहुंमुखी कल्याण और उसके वैज्ञानिक विकास का गतिशील साधन है। इसकी जितनी उपलब्धि है उससे कहीं अधिक भावी सम्भावनाएं हैं।

(लेखक जी.एस. मिश्रा कालेज, रोहतास (बिहार) में अर्थशास्त्र के व्याख्याता हैं।)

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में तालाबों का योगदान

डॉ. जयशंकर मिश्र

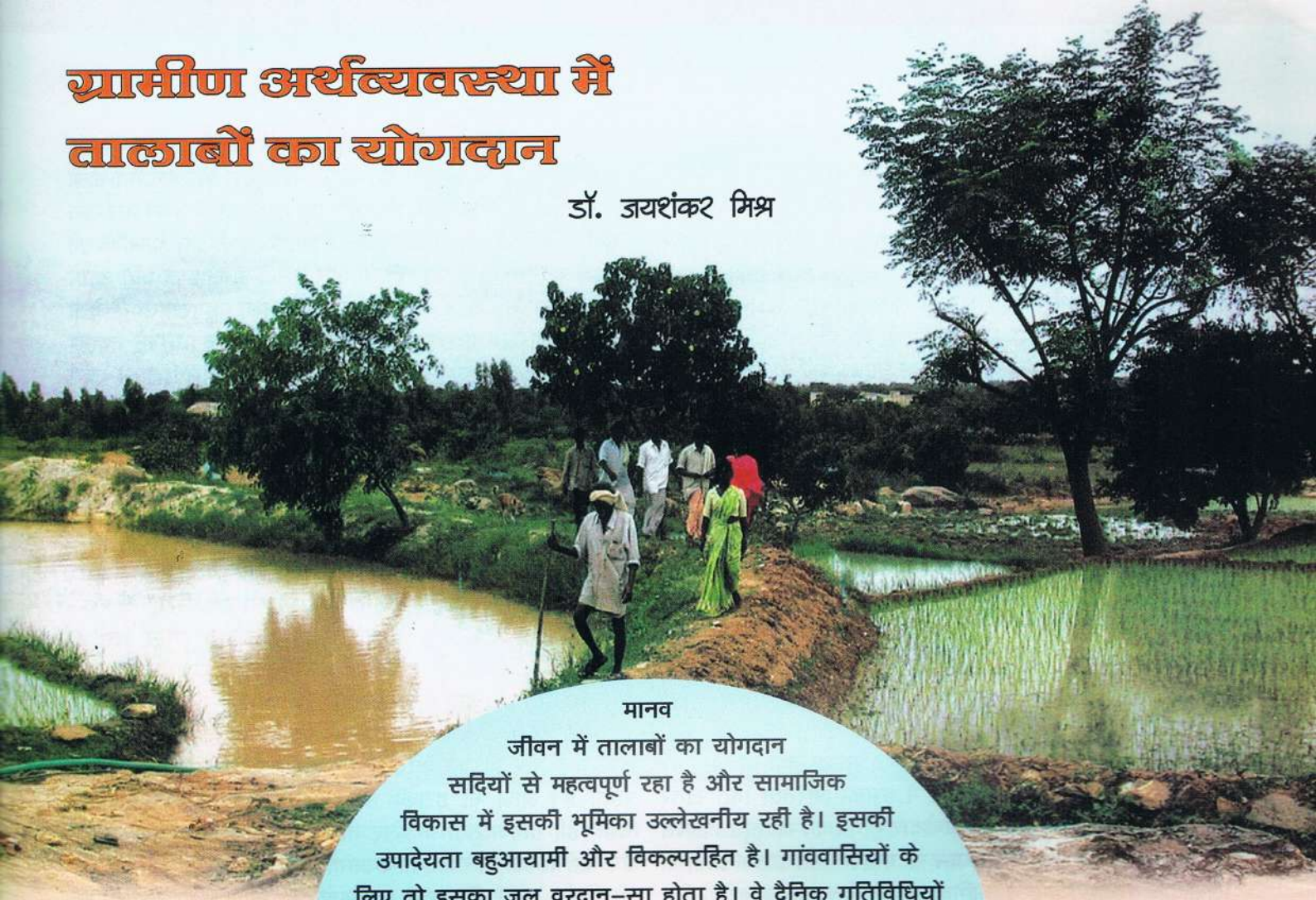

मानव जीवन में तालाबों का योगदान सदियों से महत्वपूर्ण रहा है और सामाजिक विकास में इसकी भूमिका उल्लेखनीय रही है। इसकी उपादेयता बहुआयामी और विकल्परहित है। गांववासियों के लिए तो इसका जल वरदान–सा होता है। वे दैनिक गतिविधियों के संग तालाबों पर आर्थिक दृष्टि से भी निर्भर रहते हैं। आज भले ही इन तालाबों की स्थिति दयनीय होती जा रही हो और इसके संरक्षण के प्रति लोगों में उदासीनता देखी जा रही हो तथापि इसकी बहुमुखी उपयोगिता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में इसके महत्वपूर्ण योगदान को नकारा नहीं जा सकता। ग्रामीण जन भागीदारी पर आधारित तालाब निर्माण से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत किया जा सकता है।

धरती पर जीवन के आरम्भिक काल से ही जल की आवश्यकता रही है। जल के बिना जीवन की कल्पना तक नहीं की जा सकती। मानव के आखेटक जीवनकाल में ही जल भण्डारण और इसके संचय की आवश्यकता महसूस की गई और उन्होंने इस ओर प्रयास आरम्भ किया। चूंकि उनकी आवश्यकता मात्र पेयजल तक ही सीमित थी अतः उन्होंने पात्र (बरतन) की खोजकर जल भण्डारण करना आरम्भ कर दिया। सदियों बाद मानव ने कृषि और पशुपालन के युग में प्रवेश किया और सभ्यता का विकास नदियों अर्थात जल के किनारे आरम्भ होने लगा, जो जल की जीवन में विविध उपयोगिता का प्रत्यक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करता है।

आज भी विश्व की आधी आबादी समुद्री तटों के 100 किमी. के दायरे में रहती है। विकास के क्रम में मानव नदियों से दूर भी रहने लगा और वहां जल संचयन की वृहद आवश्यकता प्रतीत होने लगी जिस कारण मानव ने अपने आसपास ही प्राकृतिक स्रोत–वर्षा जल के भण्डारण का निश्चय किया और परिणामस्वरुप तालाब, सरोवर, वापी, तड़ाग, पोखरा, बावली आदि का अस्तित्व सामने आया।

भारतीय धर्म व शास्त्रों में तालाब और कुएं का निर्माण कराना अति पुनीत कार्य माना गया जो समष्टि हिताय होता था। आज भले ही इसका अस्तित्व खतरे में दिख रहा है तथापि प्राकृतिक जल संचयन का इससे अच्छा और कोई माध्यम नहीं हो सकता।

पृथ्वी पर जल की उपलब्धता : पृथ्वी पर पाया जाने वाला अधिकांश जल महासागरों में खारे पानी के रूप में विद्यमान है, जो हमारे दैनिक जीवन के लिए उपयोगी नहीं है। मीठे पानी की मात्रा महज 2 प्रतिशत है, जिसका करीब 97 प्रतिशत उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों पर बर्फ के रूप में जमा है। शेष लगभग 3 प्रतिशत जल ही महासागरों और नदियों में होने वाले वाष्पीकरण की

प्रक्रिया एवं तदोपरान्त वर्षा के द्वारा पुनः जमीन में गिरकर होने वाले मौसमी चक्रीय माध्यम से पुनः उपलब्ध होता है, जो अनिश्चित और असामान्य है। महाद्वीपों और पृथ्वी के जमीनी भू–भाग में वर्षा के द्वारा गिरने वाला जल कुल उपलब्धता का मात्र 0.03 प्रतिशत है। जानकर हैरानी होगी कि भारत में सतही स्रोत के रूप में ताजे पानी की उपलब्धता 1680 किमी0 तथा भू–भाग से निकाले जा सकने वाला ताजा पानी मात्र 430 किमी0 है।

जल के विभिन्न स्रोत : ग्लेशियर से लेकर सागर तक जल के विभिन्न और विशाल स्रोत पृथ्वी पर मौजूद हैं। प्राकृतिक स्रोतों के साथ मानव ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु स्वयं का भी स्रोत विकसित कर लिया। यद्यपि प्राचीन समय में उनके ये स्रोत मूलतः वर्षा जल पर आधारित थे, जबकि बाद में वह भूगर्भीय जल स्रोतों का भी दोहन करने लगा और इस प्रकार जल के कई स्रोत विकसित हो गये। मुख्यतः जल के इन स्रोतों को दो भागों में बांटा जा सकता है यथा– प्राकृतिक और मानवनिर्मित स्रोत।

प्राकृतिक स्रोत– वर्षा, ग्लेशियर, समुद्र, झील, नदी, झरना आदि।

मानव निर्मित स्रोत– तालाब, कुआं, ट्यूबवेल, डैम (बांध), टैंक आदि।

ये प्राकृतिक और मानव निर्मित स्रोत मूलतः वर्षा के जल पर ही आधारित हैं और इसके अभाव में इसका अस्तित्व नित खतरे में पड़ता जा रहा है, जिसकी जिम्मेदार मानव की अंधाधुंध विकास यात्रा है। इस आलेख के माध्यम से मानवनिर्मित प्राच्य स्रोतों में सर्वाधिक व बहुआयामी उपयोगिता पर केन्द्रित तालाब का ग्रामीण अर्थव्यवस्था में योगदान पर विचार प्रस्तुत है।

तालाब एक परिचय : प्रारंभ में तालाबों का निर्माण नदियों से दूर विकसित होने वाले समाज में शुरू हुआ। सामुदायिक जन–भागीदारी के रूप में इसका निर्माण ग्रामीण एकता और मेलजोल का प्रतीक माना जाता था। कालान्तर में ग्रामीणों ने अपनी आवश्यकतानुसार गांवों में एक से अधिक तालाबों का भी निर्माण आरंभ कर दिया। उस समय लोगों में आपसी प्रेम और जन–कल्याण की भावना होती थी और गांव के समृद्ध व्यक्ति, जमींदार आदि के नेतृत्व में श्रमदान के द्वारा कुछ ही दिनों में उपयुक्त स्थल पर तालाब का निर्माण कर लिया जाता था। ग्रामीण लोग तालाब हेतु उपयुक्त स्थल का चयन उसकी उपयोगिता के संग भौगोलिक स्थिति एवं भू–गर्भीय जल की उपलब्धता के आधार पर करते थे जिससे प्रथम वर्षा में ही तालाब पूर्णतः भर जाया करता था। इसमें वर्ष भर जल संग्रहित रखने के लिए चारों ओर से ऊंचे व मजबूत बांध बनाए जाते थे जिस पर फलदार व बहुवर्षीय वृक्षारोपण कर इसे मजबूती प्रदान की जाती थी।

आदिकाल में बड़े और समृद्ध गांवों में अलग–अलग दिशाओं में कई तालाबों के निर्माण का प्रचलन था। इनमें कहीं–कहीं जातिगत व उपयोगिता के आधार पर भी तालाबों के निर्माण का संदर्भ मिलता है। पुरुष व स्त्रियों के लिए अलग–अलग तालाब तथा पेयजल के लिए अलग, नहाने व पशुओं के लिए अलग–अलग तालाबों का संदर्भ मिलता है। आज भी सुदूर और पर्वतीय क्षेत्रों में तालाब का जल पीने के लिए प्रयुक्त होता है। वर्ष भर इन तालाबों से कई कार्य किये जाते हैं। आज भले इन तालाबों की स्थिति दयनीय होती जा रही हो और इसके संरक्षण के प्रति लोगों की उदासीनता देखी जा रही हो तथापि इसकी बहुमुखी उपयोगिता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में इसके महत्वपूर्ण योगदान को नकारा नहीं जा सकता। इसे आज सरकारी मान इसकी उपेक्षा की जाने लगी है। इसका निर्माण और संरक्षण शासकीय कार्य मान लिया गया है जिससे उसमें सन्निद्ध सामुदायिक भागीदारी व जन कल्याण की भावना धूमिल–सी होती जा रही है। तथापि आज भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है जिन्होंने तालाबों को अपने रोजगार का जरिया बना रखा है और अच्छी आय प्राप्त कर रहे हैं। ऐसे लोग आज भी इसके संरक्षण व संवर्द्धन के प्रति सजग व जागरूक हैं, जो तालाबों की विविध और शाश्वत उपयोगिता को प्रदर्शित करता है। गांवों में तालाब की उपादेयता निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत आंकी जा सकती है जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था को निरन्तर गतिमान बनाये रखती है।

तालाबों की उपादेयता : तालाबों से मानव आदिकाल से जुड़ा है और कई बार तो वह कुछ चीजों के लिए मात्र उसी पर निर्भर रहता है। आज भी इसकी उपादेयता बहुआयामी और विकल्प रहित है। गांववासियों के लिए तो इसका जल वरदान–सा होता है। वह दैनिक गतिविधियों के संग तालाबों पर आर्थिक दृष्टि से भी निर्भर रहता है। स्वयं का नहाना–धोना हो या पशुओं का नहाना या फिर स्वयं के साथ पशुओं के पेयजल की बात, आज भी भारत के कई भू–भाग में मानव तालाबों के जल पर ही निर्भर है। खेतों की सिंचाई की बात हो या मत्स्य पालन या फिर जलीय फसलों का उत्पादन, तालाब हर स्थिति में हमारे लिए उपयोगी सिद्ध होता है। सदियों की भांति आज भी यह हमारे लिए बहु–उपयोगी है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की बात करते समय हमें इसकी उपादेयता पर भी सम्यक रूप से दृष्टिपात करना होगा।

तालाबों का ग्रामीण अर्थव्यवस्था में योगदान : मानव जीवन में तालाबों का योगदान सदियों से महत्वपूर्ण रहा है और सामाजिक विकास में इसकी भूमिका उल्लेखनीय रही है। आज भले ही हम इससे विमुख होते जा रहे हैं, किन्तु इसकी उपयोगिता शाश्वत है। ग्रामीण जन भागीदारी पर आधारित तालाब निर्माण से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नित मजबूत किया जा सकता है। इस पर निर्भर रहने वाले कुछ उद्यम और व्यवसाय को निम्नानुसार व्यक्त किया जा सकता है–

कृषि व सिंचाई : गांव की खेती मुख्यतः वहां उपलब्ध संसाधनों पर केन्द्रित रहती है। तालाबों में संचित पानी हमारे कृषि कार्य में सिंचाई के लिए प्रयुक्त होता है। पशुओं के नहाने और पीने के अतिरिक्त वर्षा ऋतु के बाद तालाब के जल का प्रयोग आसपास के खेतों में सिंचाई के काम में आता है। तालाब के आसपास के खेतों में सामान्यतः नमी अधिक पायी जाती है, जो फसलों के लिए हितकारी होता है।

वृक्षारोपण : तालाब के बांध (मेड़) पर वृक्षारोपण किया जा सकता है, जो छाया व मीठे फल के साथ मूल्यवान लकड़ी उपलब्ध कराता है। सामान्यतया यहां वट, पीपल व बरगद आदि बहुवर्षीय वृक्ष के साथ फलदार वृक्ष आम, जामुन, कटहल, अमरुद आदि को लगाया जा सकता है। शीशम, नीम, सागवान आदि इमारती लकड़ियां भवन निर्माण के संग फर्नीचर में भी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। साथ ही ये वृक्ष ईंधन भी उपलब्ध कराते हैं। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में वृक्षों का योगदान महत्वपूर्ण है, जिसे तालाबों के सहयोग से और अधिक सशक्त बनाया जा सकता है।

मत्स्य पालन : भारत में समुद्र और नदियों के साथ तालाबों पर भी मत्स्य व्यवसाय निर्भर करता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था मत्स्य व्यवसाय से सुदृढ़ हो सकती है। कम–से–कम गांव के तालाब खाद्य मछलियों के उत्पादन के अनुकूल होते है, जिसमें विभिन्न प्रकार की मछलियों का पालन किया जा सकता है। आज देश के कई हिस्सों में दैनिक भोजन में मछलियों का एक प्रमुख स्थान है। मत्स्य पालन के द्वारा भी ग्रामीण अर्थव्यवस्था की गाड़ी को आगे बढ़ाया जा सकता है। बाजार में आज खाद्य मछलियों की कीमत 60 रुपये से लेकर 250 रुपये प्रति किलो तक है।

सिंघाड़े की खेती : मौसमी सिंघाड़े की खेती पानी में की जाती है, जिसे तालाब में मछलियों के संग आसानी से उगाया जा सकता है। पानी में पैदा होने वाली इस फसल से अच्छी कमाई की जा सकती है। कच्चे फल के साथ इसे सुखाकर फल अथवा आटे के रूप में बाजार में बेचा जाता है। इसके आटे का व्यंजन सुस्वादिष्ट, शुद्ध और पोषक होता है, जिससे अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है। बाजार में कच्चा सिंघाड़ा आज 10 से 30 रुपये तथा इसका आटा 60 से 100 रुपये प्रति किलो तक बिकता है,जो सुपाच्य, पोषक और शुद्ध होता है।

मखाना व्यवसाय : मखाने की खेती भी पूर्णतः जल वह भी स्थिर जल पर आधारित है, जिस हेतु तालाब का पानी सर्वाधिक उपयुक्त है। तालाब में मछली के साथ–साथ मखाने को उगाया जा सकता है। पानी की सतह पर पैदा होने वाली यह फसल यद्यपि भौगोलिक परिवेश के कारण कुछ निश्चित क्षेत्रों में ही हो पाती है तथापि इसका योगदान ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करता है। मखाना पानी की सतह पर विशाल, स्पंजी, कंटीले पत्ते के निम्न भाग में अरहर के दाने जैसा होता है, जिसका संचयन कर भूनने के पश्चात् सफेद लावासा आकार प्रदान किया जाता है। इस व्यवसाय का मुख्य केन्द्र उत्तरी बिहार का मिथिलांचल का क्षेत्र है जहाँ से यह सम्पूर्ण भारत क्या विश्व के अन्य देशों में भी जाता है। बाजार में आज इसकी कीमत 120–270 रुपये प्रति किलो तक है।

पुष्प व्यवसाय : तालाब में जलीय पुष्प यथा– कमल, कुमुदनी आदि का उत्पादन खूब फल–फूल सकता है और ग्रामीण जन इसे व्यवसाय के रूप में अपना कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में अपना योगदान दे सकते हैं। कमल के पुष्पों की मांग बाजार में सदैव ही बनी रहती है। पूजा–पाठ हो या हो शादी–ब्याह का अवसर, सभी में इसकी महती आवश्यकता रहती है। भारतीय शास्त्रों में इसके गुणों का व्यापक वर्णन मिलता है और यह अपनी खुशबू से सभी को आकर्षित करता है। इसे पुष्पों में श्रेष्ठ अर्थात फूलों का राजा कहा जाता है और तभी तो यह हमारे राष्ट्रीय पुष्प के रूप में दिग–दिगन्त को सुवासित करता है। आज यह कई रंगों यथा– सफेद, गुलाबी, नीला, लाल आदि रंगों में उपलब्ध है, जो ऊंचे दामों पर बाजार में बिकता है। अतः तालाबों पर आधारित इस व्यवसाय से भी अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है।

पुरईन पत्ता व्यवसाय : तालाब से एक व्यवसाय को और जोड़ कर देखा जा सकता है और वह है– पुरईन पत्ते का व्यवसाय। आज भी गांवों में सामूहिक भोज और दावत में इस पत्ते का प्रयोग थाली के रूप में किया जाता है। गांव में आज भी केले के पत्ते के साथ इसका प्रयोग थाली के रूप में किया जाता है। शुद्ध,

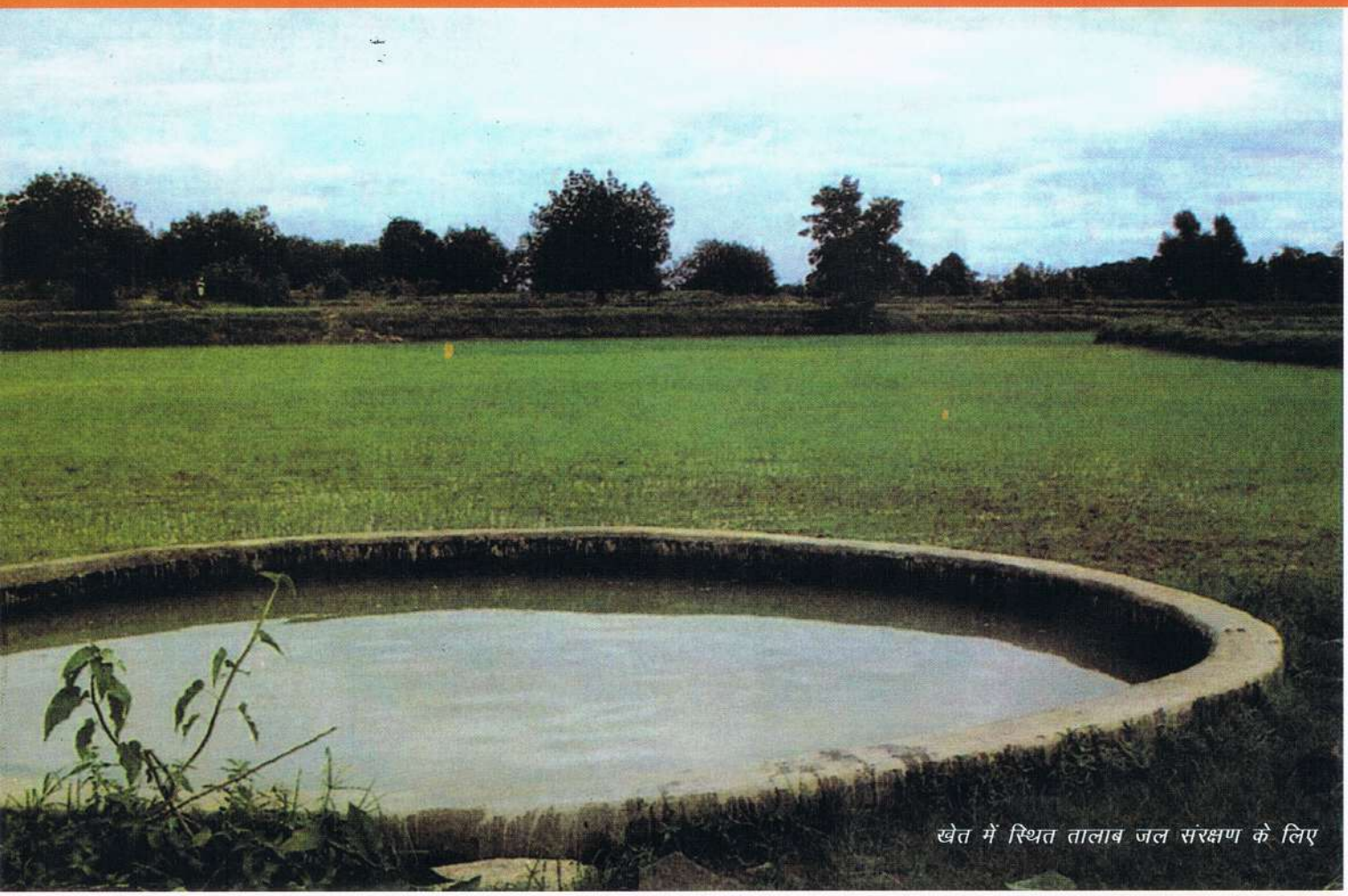

खेत में स्थित तालाब जल संरक्षण के लिए

स्वच्छ व निश्छल इस पत्ते पर भोजन करना सात्विकता का द्योतक है। ग्रामीण जन वृहद स्तर पर इसका उत्पादन कर इससे आय प्राप्त कर सकते हैं।

ग्रामीण पर्यटन : तालाबों के आकर्षक निर्माण और उसके आसपास पर सुन्दर, सुव्यवस्थित वृक्षारोपण से इसे पर्यटन का केन्द्र भी बनाया जा सकता है। इसके तटों पर पक्के घाट व उद्यान का निर्माण किया जा सकता है, साथ ही तालाब में नौका विहार की व्यवस्था उपलब्ध करायी जा सकती है, जिससे ग्रामीण पर्यटन को विकसित किया जा सकता है। इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को समृद्ध किया जा सकता है।

तालाबों से जुड़ी हमारी आस्था व मान्यताएं : भारतीय धर्म और लोकाचार का तालाबों से अटूट संबंध है। इसे अलग कर के कदापि नहीं देखा जा सकता। यही कारण है कि भारतीय धार्मिक ग्रंथों में तालाब निर्माण को कई यज्ञों के बराबर फलदायक कहा गया है। हमारे धार्मिक एवं सांस्कृतिक उत्सव भी इनके बिना सम्पन्न नहीं होते। जन्म से लेकर मृत्यु तक मानव का कार्यक्रम तालाबों से जुड़ा रहता है। यह धार्मिक लगाव ही था कि तालाब निर्माण के साथ इसके मेड़ पर सामान्यतया मन्दिर का निर्माण किया जाता था और आस्था तथा धार्मिक मान्यता से जुड़े वृक्षों को लगाया जाता था। इससे तालाबों की स्वतः रक्षा हो जाया करती थी। पक्के घाट और तटबन्ध के निर्माण का संदर्भ भी प्राचीनकाल से मिलता है, जो इसके संरक्षण के प्रति मानव की सजगता का परिचायक है।

तालाबों से जुड़ी कुछ समस्याएं व समाधान के प्रति सुझाव

तकनीकी और अंधाधुंध कंक्रीट के जंगलों के विकास के कारण आज परम्परागत व शाश्वत उपयोगी तालाबों की संख्या दिन प्रतिदिन घटती जा रही है, जिससे इससे जुड़ा व्यवसाय भी प्रभावित हो रहा है। यहां तक कि आज तालाब में पाली जाने वाली मछलियों की कई प्रजातियां लुप्त होती जा रही हैं। तालाबों के रखरखाव व संवर्द्धन से संदर्भित कुछ समस्याओं पर निम्नानुसार दृष्टिपात किया जा सकता है–

समस्याएं

मलबा : तालाब आज मलबा निस्तारण का एक प्रमुख स्थल बनता जा रहा है। गांव व शहर सभी के मलबे को सरलता से तालाबों में डाल दिया जाता है, जिससे इसकी गहराई कम होती जाती है। साथ ही यह दलदल में परिवर्तित हो रहा है, जिससे इसकी उपयोगिता घट रही है। गन्दगी के कारण इसका जल प्रदूषित हो जाता है, जिससे गंभीर बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है।

अवैध कब्जा : तालाब के जलभरण क्षेत्र में अवैध कब्जा बढ़ने के कारण वर्षा का जल तालाब तक नहीं पहुंचता और तालाब के मेड़ टूटने से वर्षा जल का संग्रहण ठीक से नहीं हो पाता। अतः

तालाब में पानी कम जमा हो पाता है और यह गर्मी के आरम्भ होते ही सूख जाता है।

सामाजिक उदासीनता : तालाब, जिसे पूर्व में सामाजिक सम्पत्ति माना जाता था, आज उसे सरकारी माना जाने लगा है, जिस कारण से सामान्य जन इसके संरक्षण व रखरखाव के प्रति उदासीन होते जा रहे हैं। इसके चलते तालाबों की संख्या नित घटती जा रही है और इसकी सामाजिक उपयोगिता कम हो रही है।

समाधान के प्रति सुझाव

जनचेतना : आज तालाब के महत्व और इसकी उपयोगिता की जानकारी जन–जन तक पहुंचाने की आवश्यकता है। गांव–गांव में युवाओं को, छात्र–छात्राओं को "तालाब बचाओ" अभियान से जोड़ कर और ग्राम पंचायत को इसके संरक्षण की जिम्मेदारी देनी होगी। साथ ही प्रिंट तथा इलैक्ट्रानिक मीडिया के माध्यम से तालाबों की समस्याओं को आम जनता के बीच उजागर करने की आवश्यकता है।

मलबा निस्तारण व्यवस्था : सामान्यतया तालाबों को मलबा व कंचरा निस्तारण का एक उपयुक्त स्थल मान लिया जाता है, जिससे यह गंदा हो जाता है और इसकी जलग्रहण क्षमता कम हो जाती है। इसमें आने वाले किसी भी प्रकार के मलबे के निस्तारण की उचित व्यवस्था आवश्यक है और इस हेतु ग्रामीणों को प्रेरित करना चाहिए।

तालाब की सफाई : तालाबों के संवर्द्धन हेतु इसकी नियमित सफाई की नितान्त आवश्यकता होती है। हर तीसरे वर्ष इसकी समुचित सफाई की व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि इसमें जमा मलबा व कचड़े को बाहर निकाला जा सके और इसकी जल–ग्रहण क्षमता को बढ़ाया जा सके। तालाबों से निकाली गई सड़ी मिट्टी को छानकर कुम्हारी कार्य में लिया जा सकता है, जो इस कार्य के लिए अति उपयुक्त होता है।

तटबन्ध का निर्माण : तालाबों के पाटों (तटबन्धों) को पक्का और मजबूत बनाना चाहिए, जिससे अवांछित तत्वों का प्रवेश वर्जित रहे। इससे जल का भी संरक्षण हो जाता है और इस पर पोस्टर व बोर्ड लगाकर तालाब के संरक्षण के बारे में जानकारी प्रसारित की जा सकती है।

निष्कर्ष : पानी मनुष्य के जीवन में अमृत समान है। भारतीय शास्त्रानुसार मानव का शरीर जिन पांच तत्वों से बना है उनमें जल अर्थात पानी का स्थान प्रमुख है। मानव शरीर में लगभग 70 प्रतिशत जल होता है। यह मनुष्य को निर्मल बनाने के साथ साफ–सफाई के साथ आवश्यकता और समय के संग निरन्तर प्रवाहित रहने का संदेश देता है। वाणी विहिन जल का संदेश गुणात्मक है। जिस दिन मनुष्य का मन भी पानी की तरह निर्मल और निष्पाप हो जाएगा उस दिन उसकी ईश्वर मिलन की आस भी पूरी हो जाएगी। परन्तु आज तो मानव निर्मलता व शुचिता का संदेश देने वाले उस जल को ही नष्ट करने पर तुला हुआ है। उसे उस संदेश की परवाह ही नहीं है। भौतिक सुख–सुविधा और विलासितापूर्ण परिवेश से घिरा मानव आज जल के संचयन के प्रति उदासीन है और निरन्तर उसका दुरुपयोग तथा उसे प्रदूषित कर काल को आमंत्रित कर रहा है। संभवतः इसी अवधि की कल्पना कर कवि रहीम ने लिखा था–

रहिमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून।

वास्तव में पानी के अभाव में सब कुछ सूना और अस्तित्वविहीन है। इसके संरक्षण व रखरखाव से मानव का जीवन सुखद और सहज होगा और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को संबल मिल सकेगा।

(लेखक महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय में व्यावसायिक कला विभाग में वरिष्ठ प्रवक्ता हैं)
ई–मेल : artistjsm@sify.com

सदस्यता कूपन

मैं/हम का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।
शुल्क : **कुरुक्षेत्र** एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)
डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....
पता .....
..... पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली–110 066

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार लाएगी धारणीय कृषि

डॉ. बद्री विशाल त्रिपाठी

धारणीय विकास की दशाएं उत्पन्न करना वर्तमान आर्थिक चिंतन में आधारभूत है। यह प्राकृतिक संपदा के ऐसे प्रयोग की अपेक्षा करता है ताकि पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी को कोई क्षति न हो तथा विकास का क्रम अविच्छिन्न बना रहे। धारणीय विकास से आशय आगामी पीढ़ी की जरूरतें पूरा कर सकने की संभावना में कोई कमी किए बिना वर्तमान पीढ़ी की जरूरत पूर्ति सुनिश्चित करना है। उत्पादन प्रक्रिया में प्राकृतिक संपदा एवं पर्यावरण का अधिकाधिक विदोहन वर्तमान विकास प्रारूप की प्रमुख विशेषता रही है। इससे आगामी विकास पर प्रतिकूल प्रभाव हुआ है। धारणीय विकास की क्रियाविधि में प्राकृतिक संसाधन आधारिक भूमिका रखते हैं। यह प्राकृतिक संसाधनों के मितव्ययी प्रयोग की अपेक्षा करता है। इसके केन्द्र में वर्तमान और आगामी पीढ़ी की जरूरतें हैं। दृष्टि यह है कि प्रत्येक मनुष्य एवं प्रत्येक पीढ़ी प्रकृति से तादात्मय के साथ स्वस्थ और उत्पादक जीवन के लिए अधिकृत है। विकास प्रक्रिया का यह दायित्व है कि वर्तमान पीढ़ी के लिये स्वस्थ और उत्पादक जीवन की दशायें सुनिश्चित करें और आगामी पीढ़ी की इस संभावनाओ में कोई कमी न करें।

धारणीय कृषि वह कृषि प्रणाली है जो आगामी पीढ़ी की जीवनधारक पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिक परिसम्पत्तियों को क्षति पहुंचाए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये पर्याप्त खाद्य पदार्थ उत्पादित करती है। इसमें कार्बनिक खादों का सघन योग होता है तथा भूमि की स्वाभाविक उर्वरता बनाये रखने के लिए उचित फसल चक्र का प्रयोग किया जाता है। कृषि में आधुनिक तकनीक और रासायनिक उर्वरकों के लगातार बढ़ते प्रयोग के चलते कृषि उपज की वृद्धि रुक–सी गई है तथा खाद्य शृंखला में भी रासायनिक तत्वों के अवशेष मिलने लगे हैं। ऐसे में जब लगातार बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा किया जाना है तथा भोज्य पदार्थों की गुणवत्ता भी बनाये रखना है, धारणीय कृषि की ओर बढ़ना समय की आवश्यकता है।

पश्चिम का दृष्टिकोण प्राकृतिक संपदा के प्रति विदोहन और लाभार्जन का रहा है। इसलिये वहां की आर्थिक प्रगति से सम्बन्धित विचारधारा में भी विकास की सीमा का विचार आना स्वाभाविक है। परंपरावादी अर्थशास्त्रियों के अनुसार अर्थव्यवस्था में दीर्घकाल में स्थिरावस्था आ जाएगी। उनके विचार में आरंभ में प्रति व्यक्ति उत्पाद का स्तर न्यूनतम निर्वाह स्तर से अधिक होता है। परिणामतः श्रम और पूंजी वस्तुओं की पूर्ति बढ़ती है जिनके सहयोग से उत्पादन बढ़ता है और आर्थिक संवृद्धि होती है। परन्तु प्राकृतिक संसाधनों के क्रमशः घटने के कारण पूंजी और श्रम की मात्रा बढ़ने पर भी ह्रासमान प्रतिफल प्राप्त होगा और कालान्तर में प्रति व्यक्ति उत्पाद घटकर न्यूनतम निर्वाह स्तर के बराबर हो जाएगा। इस दशा में उत्पादन बढ़ना रूक जाएगा और स्थिरावस्था आ जाएगी। पिछली शताब्दी में विश्व में अभूतपूर्व आर्थिक प्रगति हुई है। परन्तु इसके साथ–साथ प्राकृतिक संपदा के प्रयोग में भी आशातीत वृद्धि हुई है। प्राकृतिक संसाधनों की निरपेक्ष उपलब्धता कम हो गयी है। गैर–नवकरणीय प्राकृतिक संसाधनों में तो कई समाप्ति के स्तर तक पहुंच रहे हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी में अद्भुत प्रगति से गति और संचार सृजित गांव में नजदीकियां भी कम हो गयी हैं।

धारणीय विकास एवं अंतर्राष्ट्रीय सहयोग

विकास की धारणीयता को लेकर अब दुनिया की रचनात्मक शक्तियां चिन्तित हैं। विकास एक अनवरत प्रक्रिया रही है और अनवरत बनी रहनी चाहिए। धारणीय विकास का मूलाधार प्राकृतिक संपदा का अक्षुण्ण बना रहना है। प्राकृतिक संपदा की समाप्ति अथवा विकृति समाज में स्थिरावस्था ला सकती है, उत्पादन प्रवाह बाधित कर सकती है। पृथ्वी पर वनस्पतियों एवं जीव–जन्तुओं का ह्रास, मिट्टी की उर्वरता का ह्रास, जल संकट, वनों में आग लगना, जलवायु के क्रम में होने वाला परिवर्तन आदि विकास की निरंतरता में बाधक हैं। इनके परिणाम स्थानिक न होकर राष्ट्रपारीय होते हैं। यह स्पष्ट हो चुका है कि मात्र बाजार तंत्र के आधार पर अथवा प्रकृति की नैसर्गिक क्रियाविधि के आधार पर इनके दुष्प्रभावों का समाधान नहीं किया जा सकता है। इनका समाधान अंतर्राष्ट्रीय कार्ययोजना से ही संभव है। प्राकृतिक संपदा संरक्षण की व्यापक परिकल्पना पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर दृढ़ता के साथ बढ़नै की जरूरत है। धारणीय विकास सुनिश्चित करने और प्राकृतिक संपदा संरक्षण की व्यापक परिकल्पना पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कई सम्मेलन हुए और समझौते किये गये। इनमे स्टॉकहोम सम्मेलन 1972, वनस्पतियों और जीव–जन्तुओं के लुप्तप्राय प्रजातियों के व्यापार सम्बन्धी समझौते 1973; खतरनाक अपशिष्ट पदार्थों को एक देश से दूसरे देश भेजने अथवा समुद्र में फेंकने से रोकने के लिए 1989 में बेसेल समझौता; ओजोन परत के क्षय को रोकने के लिए 1985 में वियना कनवेंशन और मांट्रियल समझौता, 1987 मुख्य हैं।

पृथ्वी के तापमान में सार्वत्रिक वृद्धि से धरती के गुणधर्म में ह्रास हो रहा है। इसलिए यह अनुभव किया गया कि पृथ्वी को बचाने के लिये संयुक्त रूप से प्रयास करना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य में संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में 1992 में ब्राजील की राजधानी रियो द जिनेरो में पृथ्वी सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इसमें मुख्य रूप से जलवायु और जैव विविधता का मुद्दा सम्मिलित था। सम्मेलन में भाग लेने वाले 150 सदस्य देशों के मध्य यह सहमति हुई कि तापमान बढ़ाने वाली गैसों का उत्सर्जन कम किया जाए और यह लक्ष्य निर्धारित किया गया कि सन् 2000 तक ताप बढ़ाने वाली गैसों का उत्सर्जन घटाकर सन् 1990 के स्तर तक लाया जाए। पर्यावरण को क्षति पहुंचाए बिना विकास की समस्या के विश्लेषण में जलवायु के क्रम में हो रहे बदलाव का मुद्दा सम्मिलित नहीं रहा है। अतः संयुक्त राष्ट्र संघ ने "संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेन्शंस आन क्लाइमेट चेंज" नामक विषय पर पृथक रूप से एक शिखर श्रृंखला का आरंभ किया। इसका प्रथम सम्मेलन दिसम्बर, 1987 में क्योटो में हुआ। इसमें 160 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया और एक संकल्प–पत्र तैयार किया जिसे 'क्यूटो प्रोटोकाल' कहा जाता है। इससे जलवायु परिवर्तन, असमय ग्रीष्म एवं अन्य ऋतुओं के प्रभाव दिखाई पड़ने का क्रम उजागर हुआ। इसमें ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर समझौता करने वाले देशों पर प्रथम बार बाध्यकारी दबाव डालने का प्रयास किया गया। दूसरा पृथ्वी सम्मेलन सन् 2002 में 26 अगस्त से 4 सितम्बर तक दक्षिण अफ्रीका की राजधानी जोहान्सबर्ग में आयोजित किया गया। इसे धारणीय सतत विकास का विश्व शिखर सम्मेलन कहा गया। सम्मेलन में वन, पर्वत, जल, जलवायु और जैविक सम्पदा की रक्षा के लिए संकल्प लिए गए थे। ऐसा विकास मार्ग अपनाने पर विचार किया गया था ताकि पर्यावरण को क्षति न पहुंचे। संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में अक्टूबर, 2002 में नई दिल्ली में अंतर्राष्ट्रीय जलवायु संधि सम्मेलन आयोजित हुआ। इसका प्रमुख बिन्दु ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करने हेतु क्योटो संधि (1997) को क्रियान्वित करवाना था।

दुनिया में विकास के स्वरूप को धारणीय बनाये रखने के लिये जो समझौते और सम्मेलन हुए हैं, उनका अधिक से अधिक देशों ने समर्थन तो किया है, परन्तु उनमें अंगीकृत कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का पक्ष अत्यन्त कमजोर है। इसलिए पिछले तीन दशकों में प्रत्येक स्तर पर बनने वाले कार्यक्रमों और घोषणाओं के बाद भी स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है। क्योटो सम्मेलन में ताप नियंत्रण के संदर्भ में 1992 के बाद की स्थिति के संदर्भ में यह आकलन किया गया कि प्रगति अत्यन्त मंद है। सम्मेलन इस टिप्पणी के साथ समाप्त हुआ था कि "हमें बेहद अफसोस है कि सामान्य स्थिति 1992 से अधिक बदतर ही है, बेहतर नहीं।" पर्यावरण और परिस्थितिकीय असंतुलनजन्य समस्याएं एक देश से आरंभ होकर अन्य देशों को भी प्रभावित करती हैं और पृथ्वी

पर जीवन की निरंतरता तथा विकास कार्यों के सातत्य के लिए चुनौती उत्पन्न कर रही हैं।

विश्व स्तर पर कृषि वाली भूमि की प्रति व्यक्ति उपलब्धता मात्र 0.27 हेक्टेयर है। यह अनुमान है कि आगामी 40 वर्षों में प्रति व्यक्ति भूमि उपलब्धता भी घटकर आधी हो जाएगी। जल उपयोग में हो रही सतत वृद्धि के कारण जल की कमी बढ़ेगी। जल के लिये विनाशकारी युद्ध की संभावनाएं भी बढ़ रही हैं। यह अनुमान है कि अभी विश्व स्तर पर 132 मिलियन लोगों को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध नहीं है। ऐसे लोगों की संख्या सन् 2050 तक अनुमानतः 1000 मिलियन हो जाएगी। यदि उपभोग का वर्तमान ढांचा और स्तर बना रहा तो सन् 2025 तक कूड़े का वार्षिक उत्सर्जन 5 गुना अधिक हो जाएगा। प्राकृतिक संसाधनों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता अत्यन्त सीमित हो जाएगी। ग्रीनहाउस गैसों के वृद्धिमान उत्सर्जन के कारण वर्तमान शताब्दी में धरती के तापमान में 1.5 से 3.0 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो जाएगी। इससे समुद्र की सतह में 90 सेन्टीमीटर तक वृद्धि हो जाएगी। परिणामस्वरूप निचले स्थान तथा छोटे द्वीप समूह समुद्र में डूब जाएंगे।

आर्थिक विकास में अंतर्विरोध की उक्त सार्वत्रिक प्रवृत्ति के लक्षण कृषि क्षेत्र में भी स्पष्ट परिलक्षित होने लगे है। हरित क्रान्ति के बाद अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिये जो युक्ति अपनायी गयी उससे कृषि क्षेत्र में संसाधन ह्रास की दशायें उत्पन्न होने लगी हैं। हरित क्रान्ति से गेहूं, धान और गन्ना की फसलों के प्रति खेतिहर समाज की अनुक्रिया बढ़ी। इन फसलों को अधिक जल, उर्वरक और कीटनाशकों की आवश्यकता होती है। रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग से मिट्टी की गुणवत्ता और पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव हुआ है। जैविक आगतों का कम प्रयोग होने से मिट्टी में जैविक तत्वों की विद्यमानता अत्यन्त कम हो गयी है। मिट्टी के सूक्ष्म पोषकों की विद्यमानता तो खतरनाक स्तर तक घट गयी है। अधिक जल चाहने वाली फसलों के प्रति रुझान बढ़ने से भूमिगत जल का अधिक विदोहन हुआ है। परिणामस्वरूप 1998–99 में 310 विकासखंडों में जल का वार्षिक विदोहन पुनर्भरण योग्य जलस्तर से अधिक हो गया है और 160 विकास खंडों में जल का वार्षिक विदोहन वार्षिक पुनर्भरण योग्य जलस्तर के 85 प्रतिशत से अधिक है। इस प्रकार कुल 470 विकास खंडों में भूमिगत जल खतरनाक स्तर तक नीचे पहुंच गया था जबकि 1984–85 में इनकी संख्या केवल 253 थी। यह भी अनुमान है कि यदि भूमिगत जल विदोहन की यही गति बनी रही तो प्रत्येक 12.5 वर्षों में भूमिगत जल की धुंधली स्थिति वाले इन विकास खंडों की संख्या दुगुनी हो जाएगी।

यह अनुमान है कि 2006–07 तक देश के 1695 विकासखंडों में भूमिगत जल खतरनाक सीमा तक नीचे पहुंच गया है। भूमिगत जल के निर्मम विदोहन के कारण देश के 29 प्रतिशत हिस्से में भूमिगत जल समाप्त होने को है। अगले कुछ वर्षों में देश के 50 प्रतिशत हिस्से में भूमिगत जल खतरनाक सीमा तक गिर जाने की संभावना है। कई जिलों में भूमिगत जल प्रदूषित हो गया है। पश्चिम बंगाल के कई जिलों में भूमिगत जल में सांखिया का संकेन्द्रण पाया गया है जो कृषि सहित मनुष्य और अन्य जीवधारियों के लिये खतरनाक है। सतही जल संसाधन प्रदूषित हो गया है। देश की सभी प्रमुख नदियां नगरों विशेषकर बड़े नगरों के निकट प्रदूषित हो गयी हैं। स्पष्टतः जल संकट कृषि के लिये गंभीर संकट उत्पन्न कर रहा है। अत्यधिक उत्पादन प्राप्त करने की प्रवृत्ति के कारण भूमि का निर्मम विदोहन हो रहा है। इसके कारण आगामी कृषि विकास पर प्रश्नचिन्ह उठ रहा है। यह अनुमान है कि भूमिक्षरण से होने वाली नत्रजन और फास्फोरस की वार्षिक क्षति ही लगभग 7 खरब रुपये है। यह भी अनुमान है कि भूमिक्षरण से प्रतिवर्ष लगभग 5310 मिलियन टन उर्वर मिट्टी की क्षति होती है जिसकी क्षति–पूर्ति कर सकना अत्यन्त कठिन है। इसी प्रकार फसल विविधता का तीव्र ह्रास हो रहा है।

धारणीय कृषि

धारणीय कृषि वह कृषि प्रणाली है जो आगामी पीढ़ी की जीवनधारक पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिक परिसम्पत्तियों को क्षति पहुंचाए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये पर्याप्त खाद्य पदार्थ उत्पादित करती है। इसे टिकाऊ खेती, कार्बनिक खेती, एवं प्राकृतिक खेती भी कहा जाता है। धारणीय कृषि प्रणाली में कार्बनिक खादों का सघन प्रयोग होता है तथा भूमि की स्वाभाविक उर्वरता बनाये रखने के लिए उचित फसल चक्र का प्रयोग किया जाता है। धारणीय कृषि प्रणाली में भूमि की न्यूनतम जुताई कण किया जाता है। पारिस्थितिकी संतुलन बना रहना, आगतों का कम प्रयोग और अधिक उत्पादन इसकी प्रमुख विशेषताएं है। फसल उत्पादन के साथ–साथ कृषि वानिकी, पशुपालन और बहुस्तरीय कृषि इसके प्रमुख अंग है। धारणीय शब्द का यहां निहितार्थ किसी प्रक्रिया के ऐसे गुण से है जो सदैव स्थिर रहे तथा प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरण का इस प्रकार दोहन किया जाए ताकि प्रकृति की पुनर्स्थापना तथा नवीनीकरण की स्वाभाविक गतिविधि बाधित न हो। पिछले लगभग 50 वर्षों में कृषि की आधुनिक तकनीक और रासायनिक उर्वरकों के लगातार बढ़ते प्रयोग के बाद भी कृषि उपज की वृद्धि रूकसी गयी है तथा खाद्य श्रृंखला में भी रासायनिक तत्वों के अवशेष मिलने लगे हैं। लगातार बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा किया जाना है तथा भोज्य पदार्थों की गुणवत्ता भी बनाये रखना है। इसलिये धारणीय कृषि की ओर बढ़ना समय की सामाजिक आवश्यकता है।

धारणीय कृषि की दशाएं

प्रश्न उठता है कि क्या मानवता अंतिम दिन की ओर बढ़ रही है। यदि इसी प्रकार का जीवन व्यवहार बना रहा तो भविष्य

अवश्य ही अंधकारमय है। परन्तु प्रत्येक परिस्थिति विकल्पयुक्त होती है। अतः वर्तमान अंधकारयुक्त भविष्य के भी विकल्प है। भविष्य को विकल्प के अनुसार स्थानान्तरित किया जा सकता है। इसके लिये सामूहिक उत्तरदायित्व एवं सबल प्रतिबद्धता की आवश्यकता है। यह भी आवश्यक है कि मूल्यों, नीतियों और सामाजिक संस्थाओं में तद्नुरूप परिवर्तन हो। यहां यह उल्लेखनीय है कि साधन उपयोग में दक्षता, सम्यक प्रौद्योगिकी एवं उपभोग ढांचे में परिवर्तन सतत विकास की आवश्यक शर्तें हैं जो कृषि क्षेत्र पर भी लागू होती हैं। कृषि को धारणीय बनाने के लिए निम्न बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित करना होगा।

प्रौद्योगिकी : धारणीय कृषि विकास की दशाएं सुनिश्चित करने में प्रौद्योगिकी की भूमिका आधारिक है। पश्चिमी देशों के विकास प्रारूप में आर्थिक विकास का प्रत्यक्ष सम्बन्ध संसाधनों के उत्तरोत्तर वृद्धिमान विदोहन से है। प्राकृतिक संपदा और ऊर्जा का भयानक उपयोग करने वाली यह प्रौद्योगिकी स्पष्टतः विनाशकारी है। उत्पादन, लाभ और उपभोग वृद्धि को ध्यान में रखकर बनाये गए इस संवृद्धि प्रारूप और प्रौद्योगिकी में मनुष्य का स्थान गौण हो जाता है। महात्मा गांधी ने तो बहुत पहले ही इस प्रौद्योगिकी से उत्पन्न संस्कृति को 'शैतानी संस्कृति' तक कह दिया था। अतः धारणीय कृषि विकास के लिये प्रौद्योगिकी पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। अब आर्थिक संवृद्धि को प्राकृतिक संपदा के प्रयोग से पृथक करने की आवश्यकता है। इसमें प्रौद्योगिकी की भूमिका निर्णायक है। उत्पादन करने तथा व्यर्थ पदार्थों के निस्तारण और प्रबन्धन के लिए सक्षम, दक्ष और प्राकृतिक संपदा का न्यूनतम प्रयोग करने वाली कृषि प्रौद्योगिकी के विकास की आवश्यकता है। उत्पादन कार्य में प्राकृतिक संपदा के प्रयोग में वृद्धि किये बिना प्रौद्योगिकी द्वारा ही उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से विभिन्न क्षेत्रों में पर्यावरण पोषक नव–प्रवर्तन की आवश्यकता है।

जैव प्रौद्योगिकी : जैव प्रौद्योगिकी अपेक्षाकृत नवीन विद्या है। आनुवांशिक इंजीनियरिंग, कोशिका संयोजन, सेल कल्चर, इम्योनोलाजी, जैव अभियान्त्रिकी आदि को मिलाकर जैव प्रौद्योगिकी कहा जाता है। इसे कृषि अर्थव्यवस्था के कई अन्तर्विरोधों के निदान के रूप में देखा जा रहा है। कृषि क्षेत्र के लिये जैव प्रौद्योगिकी से फसलों में गुणात्मक सुधार किया जा सकता है। और उसे उच्च निर्यात मूल्य का फसल उत्पाद बनाया जा सकता

है। इसके साथ–साथ जैव प्रौद्योगिकी मत्स्य विकास, पादप सुधार, पर्यावरण एवं जैव विविधता संरक्षण आदि में भी समान रूप से सहायक है। जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से फसलों के आनुवांशिक रूपान्तरण द्वारा उन्हें शुष्क कृषि क्षेत्रों एवं लवणीय भूमियों में भी उपज योग्य बनाया जा सकता है। आनुवांशिक रूपान्तरण द्वारा अनाज वाले पौधे स्वयं ही नाइट्रोजन स्थिरीकरण की दशा प्राप्त कर सकेंगे। जैव प्रौद्योगिकी फसलों के लिये जैव उर्वरक और जैव कीटनाशक तैयार करने में सहायक है। इसके द्वारा खर्चीले और हानिकारक रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भरता कम हो जाएगी। फसल विकास के अतिरिक्त जैव प्रौद्योगिकी की पशुधन विकास में महत्वपूर्ण भूमिका है।

भारत में गाय–भैसों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है। परन्तु उनकी उत्पादकता कम है। नस्ल सुधार के संदर्भ में अब तक जो कार्य हुआ है वह विदेशी जाति के पशुओं से संकर नस्ल के पशु पैदा करने तक सीमित रहा है। विदेशी मूल के पशुओं से तैयार किये गये संकर नस्लों के पशु भारतीय जरूरत और जलवायुगत दशाओं के अनुरूप नहीं है। इनसे पशु जगत की समृद्ध जैव विविधता अवश्य कम हो गयी। जैव प्रौद्योगिकी में भ्रूण परिवर्तन की दिशा में अच्छे परिणाम आये हैं। इसके द्वारा विश्व को विकसित देशों के अनुरूप पशुधन को विकसित करने में सहायता मिलेगी। गाय और भैंस में भ्रूण परिवर्तन के परीक्षण सफलतापूर्वक कर लिए गये हैं। भ्रूण प्रतिस्थापन प्रौद्योगिकी द्वारा सर्वोत्तम कोटि के पशुधन की प्राप्ति और बहुमूल्य जर्मप्लाज्म को सुरक्षित रख सकने की आशा है। इस तकनीक से वांछित किस्म के पशुओं की संख्या और उत्पादन क्षमता बढ़ाने में महत्वपूर्ण उपलब्धि होगी। जैव प्रौद्योगिकी में कृषि को धारणीय बनाने के लिए शोध–कार्य किए जा रहे हैं। जैव प्रोद्योगिकी में शोध कार्य को बढ़ावा देने और इसके प्रयोग को विस्तारित करने के लिए 1982 में राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी बोर्ड एवं 1986 में जैव प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना की गयी।

देशज कृषि विधियों की पुर्नस्थापना : कृषि भारत की परंपरा रही है। समाज को पीढ़ियों से कृषि से सम्बद्ध विविध कार्यों का सम्यक ज्ञान है। हरित क्रान्ति से देशज फसल प्रणालियों को छोड़ने की प्रवृत्ति–सी चल पड़ी। अब इनके पुनर्स्थापना की आवश्यकता है ताकि कृषि का स्वरूप धारणीय बना रह सके। भारत में दीर्घकाल से बहुफसल प्रणाली चलन में थी। एक ही खेत में एक साथ कई फसलें, विभिन्न खेतों में एक फसल की अलग–अलग किस्में बोया जाना सामान्य था। सबके तैयार होने का समय अलग–अलग था और गुण–धर्म अलग–अलग थे। उत्तर प्रदेश के मैदानी भाग में 'सतनजा' अर्थात सात अनाज एक साथ और उत्तराखण्ड के पहाड़ी भाग में 'बारहनाज' अर्थात बारह अनाज एक साथ बोने की परंपरा रही है। फसलें बहुविधि थीं और सबके गुण–धर्म पृथक–पृथक थे। हरित क्रान्ति के बाद एकल फसल प्रणाली चलन में आयी और स्थानीय किस्में लुप्त होने लगीं। यह प्रवृत्ति अब और अधिक तीव्र हो गई है। फसल विविधता घट रही है। कई अति उपयोगी अनाज, कम समय में तैयार होने वाले और अत्यन्त कम पोषक तत्व ग्रहण करने वाले, फसल प्रणाली से हटते जा रहे हैं। मोटे अनाज की संज्ञा देकर कई अत्यन्त पोषक अनाजों पर ध्यान नहीं दिया गया। वे चलन के बाहर हो गए। उन्हें अब अधिक पोषणकारी अनाज की संज्ञा देकर उनके अंतर्गत क्षेत्र बढ़ाना चाहिए।

कृषि और पशुपालन एक–दूसरे के पोषक रहे हैं। बैल समाज और कृषि प्रणाली की रीढ़ रहे हैं, सम्मानित और यहां तक कि आराध्य रहे हैं। इसलिए ही गाय की मातृवत पूजा होती रही है। कृषक समाज अब कम से कम विकसित कृषि क्षेत्रों में बैल–विहीन कृषि प्रणाली की ओर अग्रसर है। कृषि की व्यय साध्य एवं प्रदूषणकारी आयातित ऊर्जा पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। देश की लगभग 80 प्रतिशत जोतों का आकार 5 एकड़ से छोटा है। उनके लिये ट्रैक्टर न तो आर्थिक है और न ही उनकी क्रय सीमा में है। संकर किस्म के बछड़ों में हल खींचने की सामर्थ्य अत्यन्त सीमित है और देशज गायों की प्रजातियां लुप्त हो रही हैं। खाद बनाने वाले, ऊर्जा देने वाले 'पशु कारखानों' को अनुपयोगी और अनार्थिक कहकर नकारा गया। परिणामस्वरूप वे कृषि प्रणाली से हटते गए और जमीन की जीवन्तता एवं सामर्थ्य घटती गयी। भारतीय परंपरा प्रकृति की क्रियाविधि में न्यूनतम हस्तक्षेप के साथ कृषि कार्य करने की रही है। प्रकृति के दोहन के साथ–साथ उसका पोषण भी किया जाता था। यहां सर्वत्र किसी न किसी एक तिथि को कोई भी कृषि कार्य न करने की परंपरा रही है और उसे एक धार्मिक पर्व माना जाता रहा है। अब 'हाई वैल्यू एग्रीकल्चर' के माध्यम से भूमि के पोषक तत्वों के अति दोहन की परंपरा चल पड़ी है।

भारतीय चिन्तन का सम्मान एवं व्यवहार : भारतीय जन–मानस, चिन्तन और साहित्य की परंपरा धारणीय विकास के पक्ष पर सदैव सजग रही है। प्रकृति के उपयोग के साथ उनके पोषण की परंपरा अविच्छिन्न रूप से क्रियाशील रही है। प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का भाव आर्थिक क्रियाविधि को सदैव अनुप्राणित करता रहा है। प्राचीनकाल से भारत में नदी, पर्वत, जलाशय, वृक्ष एवं ग्रह–नक्षत्रों की पूजा होती रही है। सर्पदेव नाग, वानर देव हनुमान, वृषभ देव नन्दी का पूजन अभी भी चलन में है। आकाश को पिता और धरती को माता माना गया है। प्रकृति के विभिन्न तत्व और उसकी शक्तियां ही वेदों के प्राथमिक देवी–देवता थे वनस्पति को पृथ्वी और आकाश के सम्मिलिन का फल माना गया। यहां प्राकृतिक संपदा के प्रति दृष्टि अनुप्रयोग और पोषण की थी। इसलिए विकास के सातत्य में व्यवधान का कोई भय न था। जब प्राकृतिक संपदा के प्रति दृष्टि विदोहन और लाभार्जन का हो जाएगा तो विकास की सीमाएं आ जाना स्वाभाविक है।

कृषि प्रणाली उपागम को वरीयता : हरित क्रान्ति आरंभ होने के बाद कृषि में 'वस्तु केन्द्रित उपागम' (कमोडिटी सेन्ट्रिक एप्रोच) को वरीयता प्रदान की गयी। परिणामतः कतिपय फसलों पर ही ध्यान केन्द्रित उपागम' (फार्मिंग स्टिम एप्रोच) की ओर अग्रसर होने की आवश्यकता है। किसी क्षेत्र में वहां की सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति तथा भू–धारण प्रणाली के आधार पर कृषि का संगठन करने की विधि 'कृषि प्रणाली उपागम' कहलाती है। कृषि प्रणाली उपागम में किसी स्थान के फार्म उद्यमों यथा फसल प्रणाली, डेयरी उद्योग, मत्स्य पालन, मौन पालन, कृषि वानिकी आदि की सम्यक समग्रता प्रदर्शित करती है। फसल प्रणाली देश की कृषि प्रणाली का अंग है।

धारणीय उपभोग : उपभोग क्रिया जीवन का आधार है। जीवन बनाये रखने, कार्यक्षमता बनाये रखने और उसके उन्नयन हेतु उपभोग आवश्यक घटक है। उपभोग व्यक्ति की सामर्थ्य एवं उत्पादन संभावना में विस्तार करता है। विश्व स्तर पर पिछली शताब्दी में उपभोग में भारी वृद्धि हुई है। यह अनुमान किया गया है कि विश्व स्तर पर 1900 ई. में कुल उपभोग व्यय मात्र 1.5 मिलियन डालर था जो 1998 में 24 ट्रिलियन डॉलर हो गया। उपभोग व्यय में सतत वृद्धि से पहले की तुलना में अब अधिक आवास, भोजन एवं अन्य वस्तुएं उपलब्ध हैं। जीवन सुखकर हुआ है। परन्तु उपभोग वृद्धि की प्रक्रिया में प्राकृतिक संपदा का निर्मम विदोहन बढ़ा। बढ़ता हुआ उपभोग व्यय पर्यावरण पर दबाव उत्पन्न करता है। विभिन्न हानिकारक गैसों का उत्सर्जन एवं बढ़ता व्यर्थ पदार्थ पृथ्वी को प्रदूषित करता है और गैर–नवकरणीय प्राकृतिक संपदा की गुणवत्ता में ह्रास करता है। वस्तुतः उपभोग वृद्धि ही समृद्धि का सूचक मान लिया गया है। उपभोग व्यय सामर्थ्य आकलन का मानक बन गया है।

आज की सर्वोपरि आवश्यकता धारणीय उपभोग की ओर अग्रसर होने की है। धारणीय उपभोग जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने वाला और जीवन की आधारभूत आवश्यकताओं से संगत उपभोग ढांचा है। इसके मूल में प्राकृतिक संपदा का मितव्ययी उपयोग और व्यर्थ पदार्थों का न्यूनतम उत्सर्जन है। धारणीय उपभोग ढांचा न तो आगामी पीढ़ी की जरूरतों को दांव पर लगाता है, न ही आगामी पीढ़ी के उपभोग स्तर पर जोखिम में डालने की पृष्ठभूमि निर्मित करता हैं। यह पर्यावरण एवं समाज से संगत उपभोग ढांचा है। धारणीय उपभोग की परिकल्पना में उत्पादन क्षेत्र की आधारिक भूमिका है। वे वस्तुओं और सेवाओं के उस उत्पादन प्रारूप पर ध्यान केन्द्रित करें जिनमें प्राकृतिक संपदा का न्यूनतम प्रयोग हो। सबके लिए जरूरत आधारित चीजें आवश्यक हैं। यह भी आवश्यक है कि समाज में भौतिक उपभोग सामग्री के प्रति विवेचनात्मक दृष्टिकोण बने।

(लेखक इलाहाबाद डिग्री कालेज के अर्थशास्त्र विभाग में रीडर हैं।)

एक हजार गांवों में शुरू होगी पीएम आदर्श ग्राम योजना

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने कहा है कि समाज के एक बहुत बड़े वर्ग की अब तक अनदेखी होती आई है जिसकी वजह से वह विकास की मुख्यधारा से वंचित रह गया। इस वंचित वर्ग के समेकित विकास के लिए प्रधानमंत्री ने 7 सितंबर को देश के अनुसूचित जाति बहुल 1000 गांवों में 'प्रधानमंत्री आदर्श ग्राम योजना' (पीएमएजीवाई) शुरू करने की घोषणा की। उन्होंने इस बात पर अफसोस जाहिर किया कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के प्रति अत्याचार से जुड़े केवल 30 प्रतिशत मामलों में ही मुकदमे दर्ज किए गए। उन्होंने राज्यों से अपील की है कि वे इस मुद्दे पर विशेष ध्यान दें और इस तरह के मामलों को प्राथमिकता के आधार पर निपटाएं।

राज्यों के सामाजिक न्याय व कल्याण मंत्रियों के वार्षिक सम्मेलन में प्रधानमंत्री ने कहा कि इस साल हम पीएमएजीवाई नामक एक नई योजना आरंभ करने का प्रस्ताव करते हैं। इसके तहत 1,000 ऐसे गांवों का चयन किया जाएगा जिनकी 50 फीसदी आबादी अनुसूचित जाति की हो। यदि यह योजना सफल होती है तो हम इसका विस्तार करेंगे। उन्होंने कहा कि इस योजना का उद्देश्य विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं का इन गांवों में क्रियान्वयन करना होगा। इसके लिए बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए प्रत्येक गांव को शुरू में 10 लाख रुपये की अतिरिक्त राशि दी जाएगी। उन्होंने कहा कि अब तक इस वंचित वर्ग के प्रति न तो पर्याप्त संवेदनशीलता दिखाई गई और ही उन्हें समझने का प्रयास किया गया। उन्होंने देश के वंचित वर्ग को विकास की प्रक्रिया में बराबर का भागीदार बनाने का आह्वान किया।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में रेशम उद्योग की सहभागिता

वेद प्रकाश दुबे एवं प्रो. एस.एन. चतुर्वेदी

रेशम उद्योग एक श्रम–केन्द्रित, अल्प–निवेशित एवं कृषि आधारित लघु उद्योग है। यह छोटे भू–धारकों के लिए उपयोगी व लाभदायक है। यह ऊंचे प्रतिफल तथा अल्प–प्रजनन अवधि से सम्बन्ध रखता है और कृषक परिवारों को रोजगार के अवसर प्रदान कराता है।

भारत में रेशम उद्योग वर्तमान में वस्त्र उद्योग तथा निर्यात में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। भारत का विश्व अर्थव्यवस्था में रेशम उत्पादन में चीन के पश्चात् दूसरा स्थान है तथा विश्व के कुल रेशम उत्पादन में 18 प्रतिशत का योगदान है। रेशम उद्योग देश के 50 हजार से अधिक गांवों में फैला हुआ है और ग्रामीण तथा अर्धशहरी क्षेत्रों में 30 लाख से अधिक परिवारों को रोजगार प्रदान करता है। रेशम उद्योग में स्त्रियों की भी महत्वपूर्ण भागीदारी है।

भारत में सेरीकल्चर

सेरीकल्चर रेशम उत्पादन की तकनीक है तथा एक कृषि आधारित उद्योग है। यह वर्तमान में भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है। भारत जैसे विकासशील देश में उर्वरा भूमि की सीमित उपलब्धता, सीमित नकद प्रतिफल और कृषि के एक या दो मौसमों तक सीमित होने के कारणों ने ग्रामीणों को रेशम उद्योग की ओर प्रवृत्त किया है। भारत में रेशम उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों की स्त्रियों को सिल्क वर्म के पालन–पोषण में तथा पुरुषों को बाह्य क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराता है।

भारत में रेशम उद्योग की स्थिति अद्वितीय है। वर्तमान में यह वस्त्र उद्योग तथा निर्यात में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। भारत का विश्व अर्थव्यवस्था में रेशम उत्पादन में चीन के पश्चात् दूसरा स्थान है तथा विश्व के कुल रेशम उत्पादन में 18 प्रतिशत का योगदान है। भारत में रेशम

की विभिन्न किस्में उत्पादित की जाती हैं परन्तु पांच किस्में प्रमुख हैं– मलबरी, इरी, मूगा, टसर तथा ओक टसर। सेरीकल्चर का देश के ग्रामीण कुटीर उद्योग में महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि यह उद्योग सर्वाधिक श्रम–गहन है जो कृषि व उद्योग को जोड़ता है तथा कृषकों के लिए तो सर्वाधिक लाभदायक उद्योग है।

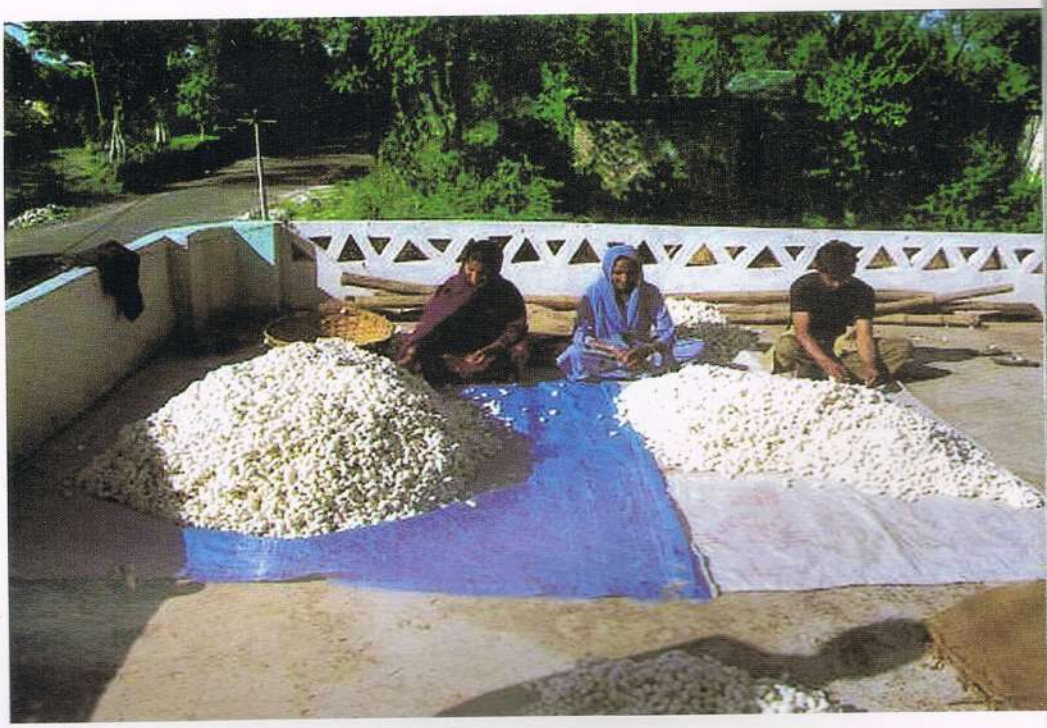

भारत में कृषि कार्यों तथा फसल विविधता के बीच सेरीकल्चर महत्वपूर्ण आर्थिक सक्रियता के तौर पर उभरा है और देश के विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी प्रसिद्धि में लगातार वृद्धि हुई है जो अल्प प्रजनन अवधि तथा साधनों के तीव्र पुनर्निर्माण का परिणाम है। यह उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों, सभी प्रकार के कृषकों तथा असाधारण रूप से लघु भूमिधारकों को आय वृद्धि के अवसर तथा वर्ष पर्यन्त रोजगार उपलब्ध कराता है क्योंकि हाल के वर्षों में रेशम व रेशम के उत्पाद घरेलू तथा साथ ही साथ अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में भी प्रसिद्धि प्राप्त करने में सफल रहे हैं। रेशम उत्पाद की बढ़ती मांग ने मलबरी सेरीकल्चर को दूसरे कृषि कार्यों के मुकाबले खड़ा कर दिया है। भारत में सेरीकल्चर मुख्यतः ग्राम आधारित उद्योग है जो जनसंख्या के एक बड़े भाग को रोजगार प्रदान करता है। यद्यपि सेरीकल्चर को एक सहायक पेशे के रूप में लिया जाता है परन्तु वर्तमान में तकनीकी नवप्रवर्तन ने इसे पर्याप्त आय अर्जित करने की गहन क्षमता प्रदान की है। रेशम उद्योग कृषकों को निरन्तर आय प्रदान करने के अतिरिक्त ग्रामीण लोगों को इस उद्योग से सम्बन्धित कार्यों में संलग्न करने हेतु प्रगति के नये मार्ग भी खोलता है।

भारत में रेशम की एक किस्म मलबरी का देश के कुल रेशम उत्पादन में 90 प्रतिशत का योगदान है अतः भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कृषिजन्य उद्योगों में इसने प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर लिया है। भारत का मूगा सिल्क के उत्पादन पर तो एकाधिकार है। वर्तमान में ग्रामीण विकास के संदर्भ में सेरीकल्चर उद्योग ने विभिन्न सामाजिक उद्देश्यों जैसे रोजगार के अवसर प्रदान करना, ग्रामीणजनों के प्रवजन को रोकना, स्त्रियों को रोजगार दिलाना आदि की पूर्ति की है। भारत में सेरीकल्चर की नवीन तकनीक ने न केवल उत्पादन जोखिम को कम किया है बल्कि कोकून के प्रति इकाई उत्पादन में भी वृद्धि की है। देश में 1970 से 2005 के दौरान सिल्क उत्पादन में असाधारण वृद्धि दर पूर्ण रूप से केन्द्रीय रेशम बोर्ड तथा राज्य सरकारी संस्थाओं के महत्वपूर्ण शोधों व प्रयास, मलबरी खेती के विस्तार, मलबरी उत्पादों के क्रमिक विकास, उपयुक्त रिअरिंग तकनीक तथा उत्तम रीलिंग तकनीक का ही परिणाम है। भारत में रेशम की उत्तम गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए बहुत से राज्यों में बोम्बिक्स मोरी नाम के सिल्क वर्म का वितरण भी किया जाता है। भारत में रेशम की विभिन्न किस्मों में मलबरी सिल्क का उत्पादन लगभग 89.45 प्रतिशत, इरी सिल्क, मूगा सिल्क तथा टसर सिल्क का उत्पादन क्रमशः 8.04 प्रतिशत, .64 प्रतिशत तथा 1.86 प्रतिशत रहता है। रेशम व इसके उत्पाद विदेशी मुद्रा अर्जन में बहुत उपयोगी हैं तथा भारतीय रेशम वस्तुओं का उच्च स्तर पर निर्यात होता है। कारण स्पष्ट है विविधता तथा अल्प उत्पादन लागत।

भारत में मलबरी सिल्क की खेती लगभग सभी राज्यों में होती है परन्तु पारम्परिक रूप से मलबरी सेरीकल्चर उद्योग रूप में कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडू, प0 बंगाल, जम्मू–कश्मीर, झारखण्ड तथा छत्तीसगढ़ के जनजातीय क्षेत्रों में विस्तृत है जो देश में मलबरी सिल्क के उत्पादन में बड़ी हिस्सेदारी करते हैं। टसर सिल्क पारम्परिक रूप से मध्य प्रदेश, बिहार व उड़ीसा के जनजातीय क्षेत्रों में उत्पादित की जाती है जबकि मूंगा सिल्क के उत्पादन में असम राज्य का एकाधिकार है।

रेशम उत्पाद की ज्यादा मात्रा भारत में हैण्डलूम पर साड़ी निर्मित करने में व्यय होती है। बिवोल्टीन सिल्क का उत्पादन यद्यपि भारत में बहुत अधिक सफल नहीं रहा है परन्तु भारतीय रेशम से गुणवत्ता में अधिक होने के कारण तथा बुनकरों द्वारा पावरलूम पर वरीयता दिये जाने के कारण उत्तम बिवोल्टीन

सिल्क का आयात किया जाता है। वर्तमान वैश्विक वातावरण भारतीय रेशम उद्योग के लिए अत्यधिक विशाल अवसरों की ओर संकेत कर रहा है। अतः वर्तमान परिवेश में भारत को बिवोल्टीन सिल्क की उत्तम किस्म उत्पादित करने की आवश्यकता है जो घटी हुई उत्पादन लागत के साथ हो तथा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में निर्यात हेतु स्वीकार्य हो जिससे भारतीय रेशम की बढ़ी हुई मांग प्राप्त हो सके। इसे देखते हुए भारत सरकार ने बिवोल्टीन सिल्क के उत्पादन को बढ़ाने के प्रयास शुरू कर दिये हैं।

सेरीकल्चर प्रक्रिया एवं सिल्कवर्म रिअरिंग

सेरीकल्चर कोकून के उत्पादन हेतु सिल्कवर्म रिअरिंग की एक कला है। सेरीकल्चर प्रक्रिया में सिल्क उत्पादित ग्रंथियों के मास स्केल रिअरिंग से सिल्क प्राप्त किया जाता है। मलबरी सेरीकल्चर प्रक्रिया में मलबरी की खेती और सिल्क का उत्पादन कोकून के रीलिंग द्वारा होता है। कोकून को गरम पानी में पकाया जाता है तथा सिल्क फाइबर कोकून से अलग हो जाता है। इस प्रक्रिया को रीलिंग कहते हैं।

सिल्कवर्म रिअरिंग कृषि आधारित कुटीर उद्योग के रूप में जाना जाता है क्योंकि यह मलबरी सिल्क की खेती से सम्बन्धित है। सिल्क वर्म के रिअरिंग द्वारा कोकून का उत्पादन किया जाता है जोकि रेशम उत्पादन के लिए कच्चा माल है। कृषक कोकून के विपणन द्वारा आर्थिक लाभ तथा आय अर्जित करते हैं। यह प्रक्रिया आदर्श रूप से सेरीकल्चर उद्योग वाले राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए है।

कोकून का विपणन

कृषक उत्पादित कोकून समीप के सरकारी कोकून बाजार में बेच सकते हैं। कोकून बाजारों में न्यूनतम सामान्य कीमत और अंतिम विक्रय कीमत का निर्णय खुली नीलामी में होता है। यहां सिल्क रीलर्स सिल्क उत्पादित करने के लिए कृषकों द्वारा उत्पादित कोकून खरीदते हैं।

कच्चे रेशम का विपणन

सिल्क रीलर्स द्वारा उत्पादित कच्चा रेशम प्रत्यक्ष रूप से बुनकरों को बेच दिया जाता है। रेशम विनिमय में कच्चे रेशम की अधिकाधिक मात्रा सिल्क रीलर्स द्वारा परीक्षण करने के लिए खरीद ली जाती है। कच्चे रेशम का गुणवत्ता के आधार पर बड़े बाजार केन्द्रों पर न्यूनतम सामान्य मूल्य निश्चित किया जाता है और तब उनकी बिक्री होती है।

रेशम उद्योग एवं आयात–निर्यात

भारत में कच्चे रेशम का घरेलू उत्पादन घरेलू तथा निर्यात मांगों को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। एक अनुमान के अनुसार लगभग 27,000 प्रति वार्षिक टन की मांग की तुलना में भारत में घरेलू उत्पादन 17,600 टन ही है। मांग व आपूर्ति में यह अन्तर इस तथ्य पर आधारित है कि उच्च गुणवत्ता वाला मलबरी कच्चा सिल्क उतनी मात्रा में नहीं उत्पादित हो पा रहा है जितनी मात्रा में इसकी मांग है। यह गुणवत्तायुक्त मलबरी सिल्क मुख्यतः हथकरघा उद्योग में, निर्यात उद्देश्यों के लिए तथा कुछ मात्रा में हैण्डलूम उद्योग में भी उपयोग में लाया जाता है।

भारत में रेशम उत्पाद के निर्यात के अन्तर्गत मुख्य रूप से प्राकृतिक रेशम, रेडीमेड वस्त्र, रेशम की कालीन तथा साड़ी का निर्यात होता है। रेशम वस्तुओं का निर्यात वर्ष 2003–04 की अवधि के दौरान 2779.19 करोड़ था जबकि वर्ष 2005–06 के दौरान 3194.20 करोड़ था जो निर्यात में 11 प्रतिशत की वृद्धि प्रदर्शित करता है। यह संकेत करता है कि अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारतीय रेशम की मांग बढ़ी है। सेरीकल्चर मुख्यतः ग्रामीण तथा छोटे उद्यम वाले क्षेत्रों में अवस्थित होता है जो सतत समृद्धिकारक रोजगार एवं ग्रामीण आय के लिए महत्वपूर्ण है तथा गैर–कृषि वाणिज्यिक फसल प्रदान करता है। यह उद्योग ग्रामीण आय के ऊंचे स्तर के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति भी करता है जिनकी निर्यात की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

रेशम उद्योग तथा रोजगार के अवसर

रेशम उद्योग श्रम–गहन तथा कृषि आधारित लघु उद्योग होने के कारण समाज के कमजोर वर्गों तथा ग्रामीण कृषक परिवारों को बहुतायत में रोजगार के अवसर प्रदान करता है। यह उद्योग वर्ष भर आय स्तर में वृद्धि व रोजगार का निर्माण करता है। भारत में 3 मिलियन से अधिक लोग सेरीकल्चर के विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार में संलग्न हैं जो उनके सामाजिक–आर्थिक स्तर को सुधारने में सहायक है। रेशम उद्योग भारत में 50,000 से अधिक गांवों में विस्तृत है और ग्रामीण व अर्धशहरी क्षेत्रों में 30 लाख परिवारों को समृद्धिकारक रोजगार प्रदान करता है। रेशम उद्योग के विभिन्न क्षेत्र स्थायी आय तथा अच्छे लाभ के साथ निरन्तर रोजगार उपलब्ध कराते हैं। रेशम उद्योग का आर्थिक लाभ कम निवेशयुक्त उच्च रोजगार क्षमता में निहित है। मलबरी सिल्क का एक हेक्टेयर 12 व्यक्तियों के लिए रोजगार का निर्माण करता है। एक किग्रा0 कच्चे रेशम का उत्पादन 11 व्यक्तियों को तथा फैब्रिक सिल्क का उत्पादन 30 व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करता है।

रेशम उद्योग तथा आय वितरण

रेशम उद्योग ग्रामीण परिवारों को कोकून के उत्पादन के लिए सिल्कवर्म के रिअरिंग द्वारा सहायक रोजगार तथा आय उपलब्ध कराता है। रेशम उद्योग में आय वितरण के सम्पूर्ण हिस्से में एक

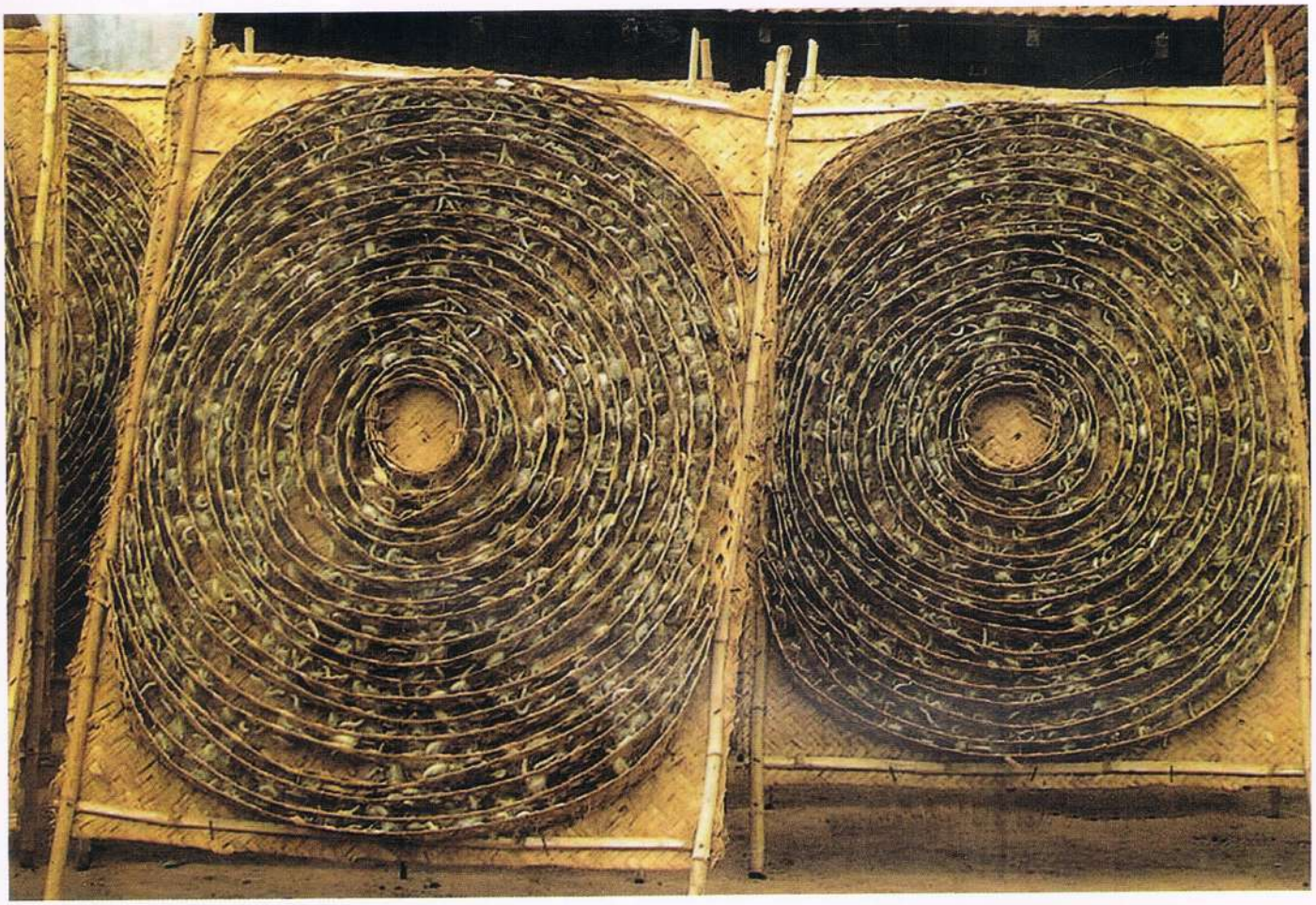

बड़ा भाग प्राथमिक उत्पादकों (किसानों 54.6 प्रतिशत) द्वारा ले लिया जाता है जो कोकून उत्पादित करते हैं। शेष में व्यवसायी (17.8 प्रतिशत), बुनकर (12.3 प्रतिशत), ट्विस्टर (8.7 प्रतिशत) तथा रीलर्स (6.6 प्रतिशत) ले लेते हैं।

रेशम उद्योग में स्त्रियों की सक्रियता

वर्तमान में रेशम उद्योग में स्त्रियों की महत्वपूर्ण भागीदारी है। रेशम उद्योग जोकि एक कुटीर उद्योग है ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्रियों को बहुतायत में कार्य उपलब्ध कराता है। वास्तव में सेरीकल्चर एक ऐसा उद्योग है जो स्त्रियों द्वारा किया जाने वाला व स्त्रियों के लिए ही है क्योंकि कार्यक्षमता में 60 प्रतिशत से अधिक व रेशम के उपभोग में 70 प्रतिशत से अधिक का योगदान स्त्रियों का ही है।

निष्कर्ष

भारत में वर्तमान में रेशम उद्योग जीविकोपार्जन के स्तर से वाणिज्यिक स्तर पर पहुंच गया है। रेशम उद्योग के विकास के लिए राज्य सरकारें विभिन्न विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन कर रही हैं जैसे चाकी की आपूर्ति, किसानों को सिल्क वर्म आर्थिक सहायता पर उपलब्ध कराना, मलबरी फार्मों का विकास, संयंत्रों की आपूर्ति, किसानों को उच्च गुणवत्ता युक्त मल्बरी पौधा उपलब्ध कराना तथा अतिरिक्त आर्थिक सहायता। रेशम उद्योग को सरकार द्वारा निरन्तर प्रोत्साहन के कारण विभिन्न तकनीकें इस उद्योग में संलग्न हैं जिसके कारण कोकून की उत्पादन लागत हाल के वर्षों में घटी है। तकनीकी नवप्रवर्तनों के कारण रेशम उत्पादन तथा सिल्क वर्म सम्बन्धी क्रियाएं किफायती हुई हैं तथा रेशम उद्योग अब ग्रामीण क्षेत्रों में मुख्य धंधे के रूप में स्थापित हो गया है। फिर भी भारत में रेशम की उत्पादकता दर नवीन तकनीकों के अपनाये जाने की धीमी गति तथा किसानों व ग्रामीण वर्ग की एक बड़ी संख्या के निम्न शैक्षिक स्तर के कारण धीमी है। उच्च गुणवत्ता युक्त रेशम उत्पाद प्राप्त करने के लिए तथा अपने कच्चे रेशम उत्पाद की वैश्विक मांग बढ़ाने के लिए सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य गांवों में सेरीकल्चर में शिक्षित व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि करना है। इस प्रकार भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था में आय व रोजगार की दृष्टि से रेशम उद्योग का स्थान सर्वोपरि प्रतीत होता है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार है)
ई–मेल : vpdubey19@gmail.com

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में महिलाओं का योगदान

डॉ. अनीता मोदी

वर्त्तमान में देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करते हुए प्रमुख रूप से कृषि, पशुपालन व कृषि संबंधित अन्य कार्यों से जीविकोपार्जन कर रही है। इन समस्त क्रियाओं में महिलाओं की भूमिका व भागीदारी महत्वपूर्ण है। सरकारी आंकड़ों में भी कृषि व पशुपालन कार्यों में ग्रामीण महिलाओं के योगदान को रेखांकित करते हुए स्पष्ट किया गया है कि देश में खेतिहर मजदूरों व स्वरोजगार में संलग्न व्यक्तियों में आधी संख्या महिलाओं की है। अतः 'गांवों को देश के विकास की धुरी' कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है। इसी भांति कृषि व पशुपालन कार्यों में महिलाओं की सशक्त व सक्रिय भागीदारी के कारण ग्रामीण विकास में महिलाओं का योगदान महत्वपूर्ण है। अतः ग्रामीण अर्थव्यवस्था की धुरी महिलाएं हैं।

सूरज की पहली किरण के साथ ही इन ग्रामीण महिलाओं की व्यस्त दिनचर्या प्रारम्भ हो जाती है जो अनवरत सूर्यास्त के बाद तक चलती रहती है। रोजमर्रा के घरेलू दैनिक कार्यों के अतिरिक्त ग्रामीण महिलाओं के द्वारा कृषि व पशुपालन से संबंधित अनेक कार्यों को सम्पादित किया जाता है। इन कार्यों में ये महिलाएं हर कदम पर, हर डगर पर पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करती हैं। खेतों की बुआई में, रोग–कीट व खरपतवारों के नियंत्रण में, फसलों की सिंचाई व्यवस्था तथा फसलों की कटाई से लेकर खलिहान व गोदामों में फसलोत्पाद की संग्रहण व्यवस्था में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इस तथ्य की पुष्टि एक सर्वेक्षण के इस निष्कर्ष से की जा सकती है कि खेती के कार्यों में महिलाओं का योगदान 55 प्रतिशत से भी अधिक है। कृषि कार्यों में महिलाओं के अहम् योगदान को रेखांकित करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने भी यह संकेत दिया है कि विकासशील देशों में अन्न उत्पादन क्षेत्र में महिलाओं का योगदान पचास प्रतिशत है तथा खाद्य निष्पादन का शत–प्रतिशत कार्य महिलाएं ही करती हैं। यही नहीं, कुछ कृषि संबंधित कार्यों को महिलाएं पुरुषों की अपेक्षा अधिक प्रभावी व अच्छे ढंग से संपन्न करती हैं–जैसे धान की रोपाई, निराई–गुड़ाई व पशुपालन आदि।

आज महिलाएं हर कदम पर, हर डगर पर पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही हैं। खेतों की बुआई में, रोग–कीट व खरपतवारों के नियंत्रण में, फसलों की सिंचाई व्यवस्था तथा फसलों की कटाई से लेकर खलिहान व गोदामों में फसलोत्पाद की संग्रहण व्यवस्था में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। खेती के कार्यों में महिलाओं का योगदान 55 प्रतिशत से भी अधिक है। आज विश्व में देश का दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से प्रथम स्थान है। इस उपलब्धि का श्रेय भी काफी हद तक महिलाओं को ही जाता है। देश की लगभग साढ़े सात करोड़ महिलाएं पशुपालन से संबंधित विविध कार्यों को संपादित करती है और प्रतिवर्ष दस करोड़ टन दुग्ध उत्पादन होता है।

सर्वविदित तथ्य है कि पशुपालन कार्य पर तो महिलाओं का ही एकाधिकार है। पशुपालन से संबंधित अधिकांश कार्यों यथा पशुओं को चारा खिलाना, बाटा बनाना, पशुओं को नहलाना, दूध दूहना, पशु–बाड़ों की सफाई करना, पशुओं की देखभाल करना आदि में महिलाओं की प्रमुख भूमिका होती है। इसके साथ ही दूध, दही व घी जैसे महत्वपूर्ण कार्यों को पूर्ण करने के अतिरिक्त गोबर के उपले बनाने का कार्य भी ग्रामीण महिलाओं के द्वारा ही किया जाता है।

गर्व का विषय है कि विश्व में देश का दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से प्रथम स्थान है। इस उपलब्धि का श्रेय भी काफी हद तक महिलाओं को ही जाता है। देश की लगभग साढ़े सात करोड़ महिलाएं पशुपालन से संबंधित विविध कार्यों

को संपादित करती है और प्रतिवर्ष दस करोड़ टन दुग्ध उत्पादन होता है जिसके माध्यम से देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को समृद्ध, खुशहाल व विकासयुक्त बनाने की दिशा में प्रयासरत हैं। इसी प्रकार, वानिकी क्षेत्र में भी महिलाओं का योगदान प्रशसंनीय है। इस क्षेत्र में महिलाओं की सक्रिय भूमिका का अनुमान इनके द्वारा संपादित विभिन्न कार्यों यथा वनोत्पादों को संग्रहित करना, वनोत्पादों पर आधारित अनेक वस्तुएं यथा टोकरी, पत्तल, बीड़ी, झाड़ू व रस्सी बनाना आदि से लगाया जा सकता है। ज्ञातव्य है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कुल महिला मजदूरों का लगभग 90 प्रतिशत भाग खेती तथा इससे संबंधित औद्योगिक क्षेत्रों में कार्य करते हुए ग्रामीण अर्थव्यवस्था को विकास की राह पर आगे बढ़ा रही है। महिलाओं की इस प्रभावी भूमिका व योगदान के कारण ही देश फल व सब्जियों के उत्पादन के संदर्भ में भी विश्व में प्रमुख स्थान बना पाया है।

ग्रामीण विकास में महिलाओं की सहभागिता व सक्रिय भूमिका को दृष्टिगत रखते हुए ही सरकार महिलाओं को कृषि व पशुपालन से संबंधित विविध नवीन तकनीक, अद्यतन सूचनाओं व नये कौशल व दक्षता के बारे में शीघ्र, सहज व सरल ढंग से जानकारी उपलब्ध करवा रही है। गौरतलब है कि कृषिगत व पशुपालन संबंधी कार्यों के संपादन में महिलाओं को अनेक प्रकार की परेशानियों व समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिनके समाधान हेतु सरकार सतत प्रयासरत है। इस दिशा में कदम बढ़ाते हुए सरकार ने कृषि क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ करने हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, दिल्ली के सौजन्य से 'राष्ट्रीय कृषक महिला अनुसंधान केन्द्र' उड़ीसा में स्थापित किया है। यह केन्द्र ग्रामीण महिलाओं के कौशल व दक्ष उन्नयन, खाद्य सुरक्षा व पौष्टिक आहार के लिए समुचित प्रावधान करते हुए ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को सुधारने हेतु कृत–संकल्प है। इसी भांति, सरकारी एवं गैर–सरकारी क्षेत्रों

द्वारा संचालित 'कृषि विज्ञान केन्द्र' भी महिलाओं को कृषि से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर शिक्षण–प्रशिक्षण व्यवस्था उपलब्ध करवा रहे है। ज्ञातव्य है कि देश में लगभग 503 कृषि विज्ञान केन्द्र समय–समय पर कृषि में संलग्न महिलाओं के कौशल व दक्षता उन्नयन व सुधार हेतु विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करते हैं।

राज्य कृषि विश्वविद्यालय और राज्य के कृषि विभाग भी ग्रामीण महिलाओं को कृषि व कृषि से संबंधित आर्थिक क्रियाओं के बारे में नवीन जानकारी, नवीन कृषि तकनीक, अद्यतन सूचना आदि प्रदान करते हुए ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान कर रहे हैं। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि वर्ष 2006–07 में लगभग 24,000 महिलाओं तथा 65,000 ग्रामीण बालिकाओं को बागवानी, गृह विज्ञान, पशु सम्पदा प्रबंधन तथा फसल उत्पादन हेतु विविध उन्नत व आधुनिक तकनीकों का प्रशिक्षण दिया गया जिसकी वजह से वे विकास व सशक्तिकरण के मार्ग पर आगे बढ़ पाई हैं। शहरी क्षेत्रों के सन्निकट अवस्थित ग्रामीण महिलाएं नवीन प्रौद्योगिकी व कृषि संबंधित नवीन व्यूह रचना व सूचनाओं से अधिक लाभान्वित होते हुए विकास के सोपानों पर तेजी से अग्रसर हो रही हैं।

उत्तर प्रदेश राज्य के बागपत जिले की उषा तोमर का उदाहरण अनुकरणीय व प्रशंसनीय हैं। इस महिला ने स्वसहायता समूह का गठन करके एक 'महिला कृषि प्रसार विद्यालय' की स्थापना की। यह विद्यालय महिलाओं को कृषि से संबंधित नूतन व अद्यतन जानकारी व ज्ञान प्रदान करते हुए महिला सदस्यों की सामाजिक-आर्थिक दशा सुधारने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। इस विद्यालय की बदौलत ही कृषक महिलाओं ने पुराने औजारों, यंत्रों व पुरातन कृषि विधियों व तकनीक के स्थान पर नवीन औजार व यंत्रों एवं विधियों का उपयोग करके अपनी आमदनी में पर्याप्त बढ़ोतरी दर्ज की है जिसके कारण इनके परिवार के जीवन-स्तर में आशातीत सुधार हुआ है।

वर्तमान में सरकार आधुनिक सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोगों के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को नवीन सूचना, ज्ञान तक कौशल के दृष्टिकोण से सशक्त व स्वावलंबी बनाते हुए उनको विकास की मुख्यधारा में समावेशित करने का प्रयास कर रही है। गौरतलब है कि आकाशवाणी का 'कृषि एवं गृह एकांश कार्यक्रम' कृषि क्षेत्र से संबंधित विविध उपयोगी व नवीन जानकारी उपलब्ध कराने के साथ ही श्रम तथा समय की बचत करने वाली विविध तकनीकों के बारे में भी सरल भाषा में समस्त महत्वपूर्ण जानकारी व सूचना उपलब्ध कराते हुए ग्रामीण महिलाओं का जीवन सुधार रहा है। इसी भांति, टेलीविजन भी ग्रामीण महिलाओं को नवीन तकनीक, कृषिगत पदार्थों के मूल्यों व मौसम आदि के बारे में उपयोगी जानकारी उपलब्ध कराते हुए इनके लिए 'वरदान' साबित हो रहा है। यही नहीं, टेलीविजन व रेडियो पशुपालन, जन स्वास्थ्य व स्वच्छ पेयजल, सामुदायिक विकास, महिला व बाल कल्याण, वानिकी, ग्रामीण आवास व ग्रामोद्योग जैसे विविध महत्वपूर्ण विषयों व योजनाओं पर अद्यतन जानकारी, सूचना व मार्गदर्शन प्रदान कर रहे हैं। इस प्रकार से ये संचार साधन ग्रामीण महिलाओं की धुंधली तस्वीर को चमकाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

बेसिक फोन, सेल्युलर फोन व इंटरनेट जैसे सशक्त व आधुनिक संचार माध्यमों का भी गांवों में तीव्र गति से विकास किया जा रहा है। इन संचार साधनों की सहायता से ग्रामीण लोग दुनिया के किसी भी कोने से कृषि व पशुपालन से संबंधित आवश्यक, उपयोग व नवीन जानकारी हासिल कर सकते हैं। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि गांवों में इंन्टरनेट व्यवस्था का प्रावधान होने से ग्रामीण महिलाएं अपने दुग्ध उत्पाद को उचित कीमतों पर बेचकर अपने परिवार की माली हालत सुधार रही है। उत्तर प्रदेश राज्य के झांसी का 'पुनावली कला' गांव इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है जहां इंटरनेट के कारण ही पूरे गांव का नक्शा ही बदल गया है। इसी भांति, भटिण्डा तथा केरल के कई गांवों के विकास में महिलाओं के द्वारा संपादित कृषि व दुग्ध उत्पादन के विकास में इंटरनेट की भूमिका सराहनीय रही है।

कृषि उत्पादकता वृद्धि व प्रौद्योगिकी के प्रचार–प्रसार में संचार साधनों की सशक्त व प्रभावी भूमिका को देखते हुए ही राष्ट्रीय किसान आयोग ने एक ग्राम संसाधन केंद्र (विलेज रिसोर्स सेन्टर) स्थापित करने की अनुशंसा की है। इन केंद्रों पर तेजी से कांफ्रेसिंग की सुविधा का प्रावधान भी है। इन खण्ड– स्तरीय केंद्रों को ग्राम स्तरीय केंद्रों या ज्ञान चौपालों से जोड़ा जाएगा ताकि ग्रामीण महिलाएं इंटरनेट या टेलीफोन के माध्यम से कृषि व पशुपालन संबंधित आवश्यक व उपयोगी जानकारी प्राप्त कर सकें।

गौरतलब है कि राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) भी खेती व पशुपालन से जुड़ी महिलाओं को नवविकसित प्रौद्योगिकी की जानकारी प्रदान करने एवं नवीन तकनीक को अपनाने हेतु आवश्यक ऋण सुविधाएं प्रदान कर रहा है। नाबार्ड स्वसहायता समूहों के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक स्थिति में सुधार करते हुए महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया को मजबूती प्रदान कर रहा है। ग्रामीण महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार होने पर ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के पहिए स्वतः ही घूमने लगेंगे।

ग्रामीण महिलाओं को सस्ती, सुगम और गुणवत्तायुक्त चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराने के लिए सरकार ने अप्रैल 2005 को "राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन" का शुभारम्भ किया। इस मिशन के तहत सभी गांवों में स्वास्थ्य और सफाई समितियां गठित की गई है, लगभग एक लाख 46 हजार उप–स्वास्थ्य केंद्र स्थापित किए जा चुके है। 'आशा' और सामुदायिक कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की गई है ताकि ग्रामीण महिलाएं स्वस्थ रहकर अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन समुचित प्रकार से कर सकें।

निसंदेह रूप से, कृषि क्षेत्र में हुए नवीन तकनीक विकास, हरित क्रांति व अनुसंधान से ग्रामीण महिलाओं की कार्यकुशलता, दक्षता व उत्पादकता में वृद्धि दर्ज की गई है। यही नहीं कुछ सीमा तक ग्रामीण महिलाओं के कंधों से कृषि कार्यों का बोझ भी कम हुआ है तथा समय की बचत भी हुई है। ग्रामीण महिलाओं के सिर से मटकों का बोझ कम करने हेतु सरकार विविध प्रकार की पेयजल योजनाओं को मूर्त्त रूप प्रदान कर रही है। इन सबकी वजह से ग्रामीण महिलाओं के कष्टसाध्य व मेहनत–कश जीवन में कुछ सकारात्मक परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं। महिलाओं की कार्यशैली–जीवनशैली व जीवन स्तर में पूर्वापेक्षा सुधार के लक्षण परिलक्षित हो रहे है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिला साक्षरता दर में वृद्धि हो रही है। लेकिन इन सब उपलब्धियों के बावजूद भी ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार करने, उनको विकास की मुख्यधारा में शामिल करने तथा महिलाओं के अनुकूल तकनीक के विकास व विस्तार करने के लिए अधिक प्रभावी, ठोस व सतत प्रयासों की नितान्त आवश्यकता है।

ज्ञातव्य है कि कृषि व पशुपालन कार्यों में संलग्न ग्रामीण महिलाएं निरक्षरता, परम्परागत बंधनों, रूढ़ियों व अंधविश्वासों के चक्रव्यूह में जकड़ी हुई है। इसके साथ ही, कृषि, पशुपालन व अन्य पारिवारिक दायित्वों को पूर्ण करने में ही उनका

छह करोड़ महिलाओं को पढ़ना–लिखना सिखाने का मिशन

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस (8 सितंबर) को साक्षर भारत मिशन की शुरूआत करने की घोषणा की। उन्होंने कहा कि साक्षर भारत मिशन का लक्ष्य अगले पांच साल में छह करोड़ महिलाओं सहित सात करोड़ लोगों को साक्षर बनाना है। उन्होंने यह भी कहा कि महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए शीघ्र ही राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण मिशन का गठन किया जाएगा। साथ ही, राष्ट्रीय महिला कोष भी पुनर्गठित होगा।

इस मिशन के तहत नई रणनीति और इन्फर्मेशन टेक्नॉलाजी का पूरा इस्तेमाल होगा। यह मिशन देश के चुनिंदा 365 जिलों में चरणबद्व तरीके से लागू होगा, जहां साक्षरता दर काफी कम है। खासकर महिला साक्षरता की दृष्टि से जो जिले काफी पिछड़े हैं। वे मिशन के केन्द्र बिंदु रहेंगे। प्रधानमंत्री ने कहा कि एक तो इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवेलपमेंट के समुचित अभाव और दूसरे महिलाओं में फैली निरक्षरता देश के विकास में गतिरोध पैदा कर रही है। इसे दूर करने के लिए दोनों ही पहलुओं पर विशेष ध्यान देना है। उन्होंने कहा कि आजादी के बाद 1950 में देश में 18 प्रतिशत लोग साक्षर थे। आज साक्षरों की संख्या 65 प्रतिशत है। फिर भी हम अपने लक्ष्य से काफी दूर हैं।

प्रधानमंत्री ने कहा कि इस साल संसद के संयुक्त अधिवेशन में राष्ट्रपति ने अगले पांच साल के अंदर देश की प्रत्येक महिला को साक्षर बनाने के लिए राष्ट्रीय साक्षरता मिशन को पुनर्गठित करने की घोषणा की थी। सरकार अपनी प्रतिबद्वता पर कायम है और उसी दिशा में तेजी से आगे बढ़ रही है।

'साक्षर भारत मिशन' साक्षरता के प्रयासों के स्तर को और सघन बनाएगा। मिशन अपने लक्ष्य को पाने के लिए पंचायती राज संस्थाओं और स्वयंसेवी संगठनों का सक्रिय सहयोग लेगा। साक्षर भारत मिशन पर कुल साढ़े छह हजार करोड़ रूपये खर्च किए जाएंगे। इस राशि में से केन्द्र का हिस्सा करीब पांच हजार करोड़ रूपये होगा। खर्च राशि का 25 प्रतिशत हिस्सा राज्य सरकारों को वहन करना होगा। पूर्वोत्तर राज्यों में केन्द्र मिशन पर 90 प्रतिशत खर्च करेगा। वहां राज्य सरकारों को कुल राशि का दस प्रतिशत ही खर्च करना होगा।

महत्वपूर्ण समय बीत जाता है। ऐसी स्थिति में निरक्षरता, समयाभाव व रुचि का अभाव होने की वजह से ये महिलाएं उन्नत कृषि उपकरणों, नवीन कृषि तकनीक व ज्ञान से अनभिज्ञ रह जाती हैं। कई बार नवीन तकनीक व विधियों की जानकारी होने के बावजूद भी महिलाएं इनका उपयोग करने का जोरिवम उठाने की हिम्मत नहीं जुटा पाती हैं। इन सबकी वजह से काफी ग्रामीण महिलाएं नवीन प्रौद्योगिकी नूतन, कृषि विधियों व उपकरणों के लाभों से वंचित रह जाती है। इस संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि नवीन तकनीक, यंत्र व औजार छोटे व सीमान्त किसानों व महिलाओं की परिस्थितियों के अनुकूल नहीं होने पर भी ग्रामीण कृषक व महिलाएं इनको अस्वीकृत कर देते है। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए यह आवश्यक है कि खोज की गई नवीन तकनीक, यंत्र, औजार व विधियां ऐसी होनी चाहिए जोकि खेती व पशुपालन से जुड़ी महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक व भौतिक परिस्थितियों के अनुरूप व अनुकूल हो, जिनको वे समझकर व्यवहार में ला सके तथा जिनका प्रयोग उनके सामर्थ्य की 'पहुंच' में हो।

ग्रामीण महिलाओं को अज्ञानता व निरक्षरता के जाल से निकालने में ग्रामीण शिक्षित महिलाएं व सन्निकट अवस्थित शहरी बालिकाएं, अध्यापिकाएं व पंचायतों में निर्वाचित महिला पदाधिकारी महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। यह शिक्षित व जागरूक वर्ग अंधविश्वासों व कुरीतियों के भंवरजाल में फंसी ग्रामीण महिलाओं में शिक्षा, चेतना व जागरुकता का दीप प्रज्वलित करके ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में इनका योगदान व सहभागिता और अधिक बढ़ा सकता है। इसके साथ ही यह भी जरूरी है कि ग्रामीण महिलाओं में भी नवीन तकनीक, नवीन कृषि व पशुपालन पद्धतियों व अन्य विधियों को समझने व अपनाने की जिज्ञासा, ललक व कटिबद्धता होगी, तभी ये ग्रामीण महिलाएं कृषि व पशुपालन जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सफलता का परचम लहराते हुए देश को विश्व में विकसित देशों की कतार में खड़ा कर पाएंगी।

(लेखिका जीएसएस कालेज चिड़ावा में अर्थशास्त्र की विभागाध्यक्ष हैं।)
ई–मेल : anita3modi@gmail.com

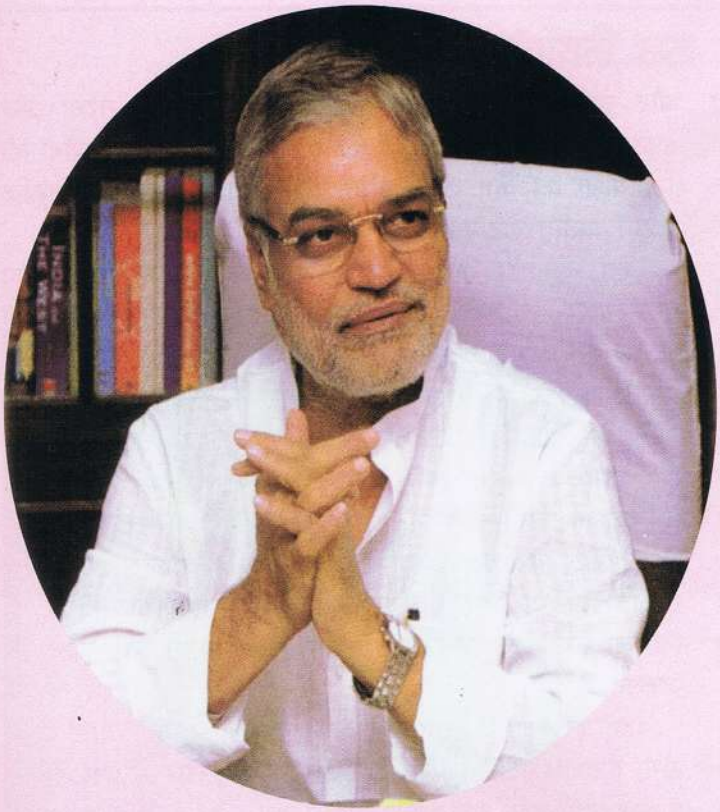

"नरेगा को प्रस्तावित ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरईजीए) के साथ जोड़ने की भी आवश्यकता है जिसमें ऐसे लोगों को शामिल किया जाएगा जिन्होंने प्रस्तावित एनआरएलएम के कार्यक्षेत्र में पिछले तीन से अधिक वर्षों तक नरेगा के तहत कार्य किया है। इससे ग्रामीण गरीबों की दक्षता को बढ़ाया जा सकेगा और उन्हें स्वरोजगार प्रदान किया जा सकेगा। नरेगा और एनआरएलएम के विलय तथा दक्षता विकास से ग्रामीण गरीबों की समस्याओं को कम करने में मदद मिलेगी और वे सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकेंगे।"

डॉ. सी.पी. जोशी
केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री

नरेगा-सफलता से आगे देखने की जरूरत

पिछले साढ़े तीन सालों से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (नरेगा) हमारे विस्तृत ग्रामीण इलाकों में गरीबी का उपशमन करने का प्रमुख कार्यक्रम रहा है। सरकार की वचनबद्धता के प्रमाण के रूप में तथा ग्रामीण गरीबों के हितों की ओर ध्यान देने की वजह से इसने अपने अनूठेपन और व्यापक कवरेज के कारण दुनिया भर का ध्यान अपनी ओर खींचा है।

निस्संदेह नरेगा ने शासन की संपूर्ण अवधारणा और दृष्टिकोण में क्रांति ला दी है तथा पहली बार एक अधिकार आधारित ढांचा लागू किया गया है। सरकार ने संरक्षक की अपनी भूमिका का त्याग करते हुए मददगार की भूमिका अपना ली है। यदि इस कार्यक्रम की विशालता पर नज़र डाली जाए तो यह देखकर हैरानी होती है कि इसके लाभार्थियों में 4.5 करोड़ से अधिक ग्रामीण परिवार हैं, इसके अंतर्गत 10 करोड़ जॉब कार्ड जारी किए गए है। बैंकों और डाकघर में इसके 7.33 करोड़ से अधिक खाते हैं। निस्संदेह नरेगा के लागू होने के बाद से कृषि मजदूर, जिसका बेहिसाब दोहन होता था, की मोल–तोल करने की क्षमता काफी बढ़ी है। अब वे अधिसूचित मजदूरी से कम पर काम करने के लिए तैयार नहीं होते हैं। नरेगा के अंतर्गत औसत अधिसूचित मजदूरी वर्ष 2006–07 में 65 रुपये प्रतिदिन से बढ़कर 2009–10 में 87 रुपये प्रतिदिन हो गई है। भविष्य में हम नरेगा के अंतर्गत 100 रुपये की वास्तविक मजदूरी दर उपलब्ध कराने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

लेकिन क्या अब हमें इससे संतुष्ट होकर अपनी निगरानी बंद कर देनी चाहिए और इस बात में गौरव महसूस करना चाहिए कि नरेगा ने अपना लक्ष्य हासिल कर लिया है? संभवतः हमें थोड़ा रुककर विचार करने की जरूरत है। आंकड़े हमेशा दो–धारी तलवार की तरह होते हैं और नरेगा का मूल्यांकन करें तो पता चलता है कि पिछले वित्तीय वर्ष के दौरान वास्तव में मात्र 14 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को ही पूरे 100 दिनों का काम मिला है। यदि ग्रामीण बेरोजगारों की कुल संख्या और बीपीएल परिवारों की तुलना की जाए तो कोई भी यह सोचने पर विवश हो सकता है कि क्या नरेगा ने वास्तव में अपना उद्देश्य पूरी तरह प्राप्त कर लिया है? हमें अपनी खामियों को दूर करना होगा और अपने कार्य–निष्पादन तथा दृष्टिकोण का पुनर्मूल्यांकन करना होगा ताकि ये अवसर व्यर्थ न चले जाएं। नरेगा के कार्यक्षेत्र का विस्तार करने की तत्काल आवश्यकता है। हमने विशेषज्ञों, भागीदारों, राज्यों, नागरिक समाज संगठनों के साथ विचार–विमर्श और परामर्श

प्रक्रिया प्रारंभ कर दी है ताकि नरेगा के कार्यक्षेत्र का पर्याप्त रूप से विस्तार किया जा सके। तत्काल आधार पर पता लगाए गए मुद्दों में से एक मुद्दा यह रहा है कि नरेगा को केवल अकुशल मजदूरी कार्य तक सीमित रखा गया है जिससे उन ग्रामीण बीपीएल बेरोजगार युवाओं की समस्याओं का निदान करना मुश्किल हो गया है जो शारीरिक श्रम नहीं कर सकते या करना नहीं चाहते।

एक अन्य मुद्दा जिस पर गंभीरतापूर्वक विचार किए जाने की जरूरत है, वह नरेगा का कृषि के साथ तालमेल स्थापित करना है। कृषि क्षेत्र भारत में सकल घरेलू उत्पाद में लगभग पांचवे हिस्से का योगदान करता है तथा साथ ही हमारी लगभग 68 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को आजीविका प्रदान करता है। इसलिए हमारे राष्ट्रीय विकास के लिए कृषि उत्पादकता की वृद्धि अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह गरीब और अपेक्षित लोगों के लिए खाद्य सुरक्षा का विस्तार करने की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

नरेगा को प्रस्तावित ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरईजीए) के साथ जोड़ने की भी आवश्यकता है जिसमें ऐसे लोगों को शामिल किया जाएगा जिन्होंने प्रस्ताविक एनआरएलएम के कार्यक्षेत्र में पिछले तीन से अधिक वर्षों तक नरेगा के तहत कार्य किया है। इससे ग्रामीण गरीबों की दक्षता को बढ़ाया जा सकेगा और उन्हें स्वरोजगार प्रदान किया जा सकेगा। नरेगा और एनआरएलएम के विलय तथा दक्षता विकास से ग्रामीण गरीबों की समस्याओं को कम करने में मदद मिलेगी और वे सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकेंगे।

हमें नरेगा के अंतर्गत शासन और कार्यान्वयन प्रक्रिया का पुनर्मूल्यांकन भी करना होगा। पंचायती राज संस्थाओं को नरेगा शासन में व्यापक भूमिका निभानी होगी। नरेगा में पारदर्शी प्रभावी शासन के अगले चरण का सृजन करने के लिए हम नरेगा को यूआईडी (अद्वितीय पहचान) पहल के साथ जोड़ रहे हैं। जागरुकता की कमी, कामगारों द्वारा लिखित में आवेदन (नौकरी के लिए) न दे पाने, मजदूरी का देरी से भुगतान करने, मस्टर रोल का रखरखाव न करने और कार्यक्रम के अंतर्गत सृजित घटिया परिसंपत्तियां कुछेक ऐसे कार्यान्वयन मुद्दे हैं जिनका भ्रष्टाचार उन्मूलन की दृष्टि से समाधान किए जाने की जरूरत है।

हमें इन मुद्दों का निपटान करने के लिए गंभीर प्रयास करने होंगे, हमारे प्रयासों से निस्संदेह नरेगा में नए सिरे से प्राण फूंकने में मदद मिलेगी जो इस कार्यक्रम को और अधिक गतिशील बनाएंगे जिससे यह लाखों लोगों के जीवन में बदलाव लाने का सही मायनों में पथ–प्रदर्शक बन जाएगा।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम पर अखिल पार्टी बैठक

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने 26 अगस्त, 2009 को नई दिल्ली में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम पर एक अखिल पार्टी बैठक का आयोजन किया। सरकार और राष्ट्रीय राजनीतिक दलों दोनों का यह मत था कि हालांकि नरेगा ने ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक प्रभाव डाला है, फिर भी विभिन्न स्तरों पर इसके कार्यान्वियन में सुधार करने की अभी भी काफी गुंजाइश है। डॉ. जोशी ने कहा कि मंत्रालय की प्राथमिकता नरेगा के साथ सामंजस्य स्थापित करना, पंचायतों के जरिए इसका कार्यान्वियन करना, सामाजिक लेखा-परीक्षा, जिला स्तरीय लोकपाल की स्थापना करना तथा लाभार्थियों के लिए एक अद्वितीय पहचान संख्या का सृजन करना है। उन्होंने यह भी बताया कि सरकार ने राज्यों को देश के 250 जिलों में सूखे से उत्पन्न संकट से निपटने के लिए पर्याप्त निधियां दी हैं।

यह बैठक ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा शुरू की गई राष्ट्रीय बातचीत का एक हिस्सा है जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि नरेगा का कार्यान्वियन पारदर्शी, जवाबदेह तथा जिम्मेदारीपूर्ण हो तथा इसके लाभ ग्रामीण क्षेत्रों में जरूरतमंद और गरीबों तक पहुंच सके।

नरेगा के जरिए पंचायती राज अभियान को आगे बढ़ाना

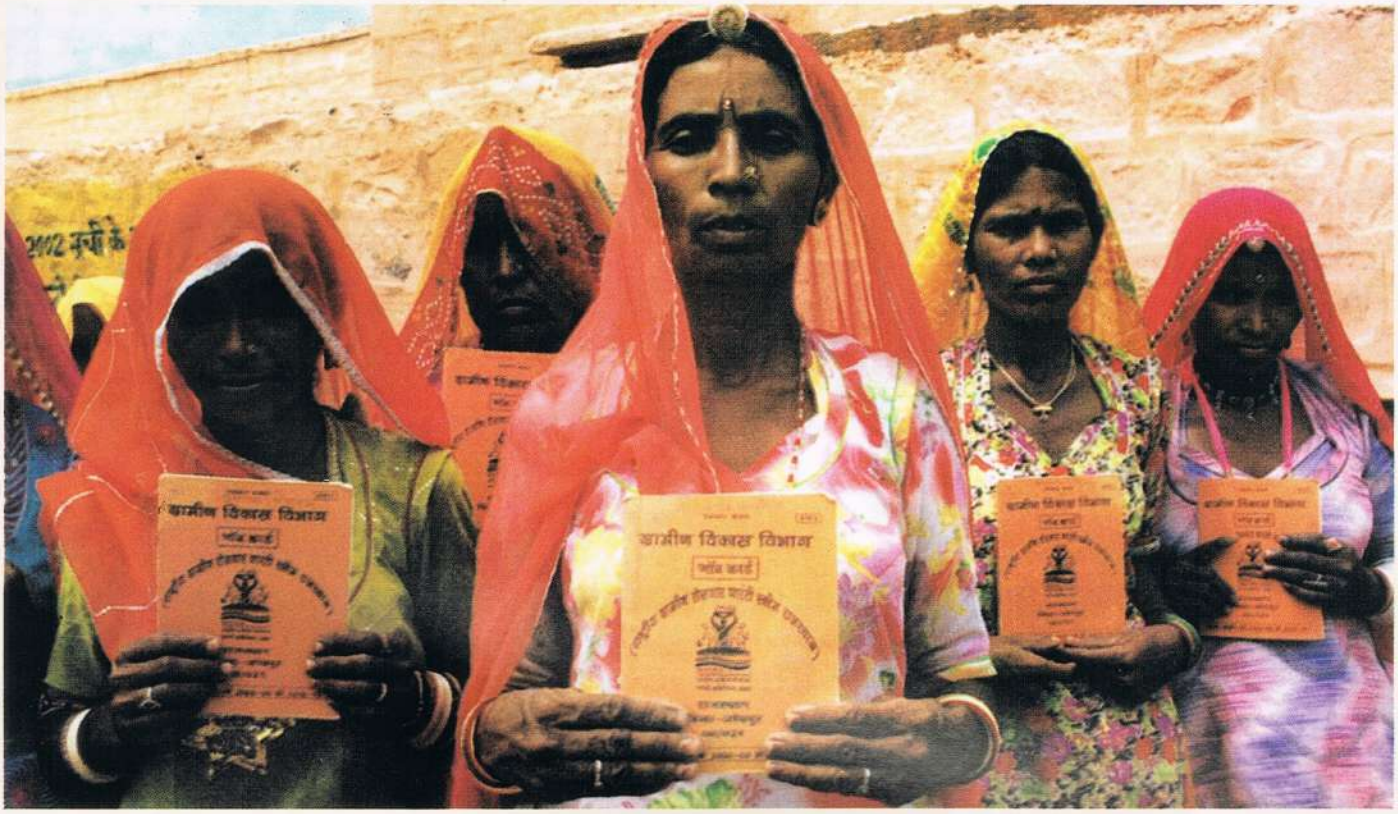

अगले तीन वर्षों में देश भर की सभी ग्राम पंचायतों में पंचायत घर और भारत निर्माण राजीव गांधी सेवा केन्द्र बनाए जाएंगे। केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्री डा. सी.पी. जोशी द्वारा इसकी घोषणा 20 अगस्त, 2009 को पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी के जन्म दिवस के अवसर पर केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा **"नरेगाः शासन सुधार, पारदर्शिता और जवाबदेही की दिशा में एक कदम"** विषय पर आयोजित राष्ट्रीय कार्यशाला में की गई। इस कार्यशाला में श्री राहुल गांधी सम्मानित अतिथि थे। इसमें ग्रामीण विकास राज्य मंत्रियों श्री प्रदीप जैन आदित्य, श्री शिविर अधिकारी, सुश्री अगाथा संगमा तथा अन्य ने भी भाग लिया।

पूरे देश में 2.52 लाख ग्राम पंचायतें हैं। पंचायत घरों की एक लघु सचिवालय के रूप में परिकल्पना की गई है–यह एक ऐसा मंच होगा जहां ग्रामीण लोग आपस में मिलेंगे–जुलेंगे, अपनी समस्याओं का आदान–प्रदान करेंगे तथा उन पर चर्चा करेंगे। उन्हें संभार–तंत्र सहायता उपलब्ध कराई जाएगी तथा यह रिकार्ड रखने के एक सुविधा केन्द्र के रूप में कार्य करेगा। भारत निर्माण राजीव गांधी सेवा केन्द्र द्वारा नरेगा पर सूचना प्राप्त की जा सकेगी और यह कार्यक्रम के कार्यान्वयन की गुणवत्ता संबंधी जानकारी उपलब्ध कराएगा। इसका उद्देश्य ग्रामीण गरीबों को दक्षता विकास सुविधाएं उपलब्ध कराकर धीरे–धीरे मजदूरी रोजगार से स्वरोजगार तक ले जाना है ताकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहित किया जा सके।

डा. जोशी ने राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम और इसकी प्रक्रिया के प्रभावी कार्यान्वयन की आवश्यकता पर जोर दिया। ई–शासन के नए मॉडल के रूप में नरेगा को परिभाषित करते हुए उन्होंने ग्रामीण गरीबों के लाभ के लिए प्रौद्योगिकी को इससे जोड़ने की जरूरत पर बल दिया। उन्होंने मजदूरी का भुगतान समय पर करने, नरेगा के संभावित लाभ का विस्तार करने तथा अधिनियम की योजना और कार्यान्वयन के लिए प्रमुख प्राधिकारियों के रूप में पंचायतों की भूमि को सुदृढ़ करने का भी आह्वान किया। डा. जोशी ने घोषणा की कि निम्नलिखित मुद्दों पर चार कार्यसमूहों द्वारा विकेन्द्रीकरण, स्थायी विकास, प्रौद्योगिकी की भूमिका और सार्वजनिक जवाबदेही पर आम सहमति बनाई गई है –

अगले तीन वर्षों में प्रत्येक पंचायत में एक पंचायत घर और भारत निर्माण राजीव गांधी सेवा केन्द्र होगा; मांग करने पर 100 दिनों का कार्य सुनिश्चित करना; मजदूरी का समय पर भुगतान करना; विभिन्न राज्यों में असमान भुगतान के मुद्दे का समाधान करना; जवाबदेही को और अधिक कारगर ढंग से लागू करना; जिला स्तर पर लोकपाल नियुक्त करना; मीडिया, कानून और सामाजिक कार्यकलापों में से 100 सुप्रसिद्ध व्यक्तियों का एक समूह बनाकर नरेगा की निगरानी करना; नरेगा को तकनीकी सहायता उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय रोजगार गारंटी मिशन का सृजन करना; आंध्र प्रदेश के सामाजिक लेखापरीक्षा–मॉडल को व्यापक स्तर पर दोहराना; कम वर्षा वाले क्षेत्रों में नरेगा के अंतर्गत निर्मित तालाबों और जलाशयों में बड़े पैमाने पर जल एकत्रीकरण को प्राथमिकता देना।

अपनी आंखों को जीवि

अपनी आं

किसी के देख

24वां राष्ट्रीय नेत्रदान पखवाड़ा

25 अगस्त से 8 सितंबर, 2009

नेत्रदान को अपने पि

NATIONAL RURAL HEALTH MISSION
राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन

नेत्रहीनता के नियंत्रण के लिए राष्ट्री
स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्र

दिल्ली

• **दिल्ली सेंट्रल रोटरी आई बैंक,** सर गंगाराम हास्पिटल, राजेंद्र नगर, नई दिल्ली–110060, फोन:42251356, 25861463,एक्स. 1356, मोबाइल–9811771213. • **रोटरी रिजेंसी गिफ्ट ऑफ साइट को–आर्डिने बैंक,** डा. राजेंद्र प्रसाद सेंटर फॉर ऑप्थेलमिक साइंस, एम्स, अंसारी नगर, नई दिल्ली–110029 फोनः 26589461,26588500,26593444, • **गुरु नानक आई सेंटर आई बैंक,** महाराजा रणजीत सिंह मार्ग, नई दिल्ली एक्स. 268, मोबाइल–9873208336/26. • **आर्मी हास्पिटल (आर एंड आर सेंटर) आई बैंक,** डिपार्टमेंट ऑफ आप्थेलमोलोजी, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली–110010, फोनः 23338181/23338183, 23338185 I/c डा विहार, दिल्ली–मथुरा रोड, नई दिल्ली–110044, फोन:26925858,26925801. • **सफदरजंग हास्पिटल एंड वर्धमान महावीर मेडिकल कालेज,** डिपार्टमेंट आफ आप्थेलमोलोजी, न्यू ओपीडी ब्लाक, नई दिल्ली– 11 1919 **एमटीएनएल टोल फ्री नंबर।**

रखें

ें दान करें

ं मदद के लिए

JOIN THE EYE DONATION MOVEMENT

नेत्रदान के बारे में तथ्य :

- भारत में कार्निया नेत्रहीनता से करीब 1.2 मिलियन लोग प्रभावित ।
- हम कार्निया (आंखों) की भारी कमी का सामना कर रहे हैं ।
- एक नेत्रदान कार्निया नेत्रहीनता से प्रभावित दो लोगों को रोशनी देता है।

नेत्रदान के लिए तत्काल की जाने वाली कार्रवाई :

यदि मृत्यु हो तो :

- घर पर/पड़ोस में मृत्यु हो तो शुल्क मुक्त न. 1919 (एमटीएनएल से, दिल्ली और मुंबई) या नजदीक के नेत्र बैंक को फोन करें ।
- यदि अस्पताल में मृत्यु हो तो ड्यूटी पर तैनात डाक्टर/नेत्रदान परामर्शदाता से संपर्क करें ।

ार की परंपरा बनाएं

davp 17138/13/0004/0910

NATIONAL PROGRAMME FOR CONTROL OF BLINDNESS

र्यक्रम, महानिदेशक, स्वास्थ्य सेवाएं
निर्माण भवन, नई दिल्ली-110011

सेसिंग सेंटर, वेनु आई इंस्टीट्यूट एंड रिसर्च सेंटर, 1/31, शेखसराय फेज-2, इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-110017, फोन:29250952/1155/1156एक्स. 135 मोबाइल-9899396838. • **नेशनल आई** फोन: 23234612,23234622,23235145, 23232400 एक्स.4376. **डा. श्रोफ्स चेरिटी आई बैंक.** • **डा. श्रोफ्स चेरिटी आई** हास्पिटल, 5027, केदार नाथ रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, फोन: 41564300-11) विजय माथुर मोबाइल- 9910523436. गुरु गोविंद सिंह इंटरनेशनल आई बैंक, 31, डिफेंस एन्क्लेव, विकास मार्ग, नई दिल्ली-110092, फोन: 22542325. • **इंद्रप्रस्थ अपोलो हास्पिटल, अपोलो आई बैंक,** सरिता 26198126, 26707217. • **सेवा आई बैंक,** यूनिट आफ सेवा संस्थान चेरिटेबिल सोसायटी, एम.एम आई टेक, 29 लिंक रोड, लाजपत नगर-3, नई दिल्ली-110024, फोन: 41551811, 29841919, 9212035119. डायल

गांवों में संचार क्रांति ने खोले रोजगार के नए द्वार

चंद्रभान 'चंदन'

कभी टेलीफोन राजशाही का अंग हुआ करता था, लेकिन अब ऐसा नहीं है। टेलीफोन न सिर्फ घर-घर पहुंच गया है बल्कि भारतीय अर्थव्यवस्था में अपना गहरा दखल रखता है। टेलीफोन ने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सैकड़ों लोगों को रोजगार दिया है। भारत में सेंसेक्स की चाल टेलीकॉम कंपनियों के इशारे पर चल रही है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को संचार क्रांति ने नई गति प्रदान की है। इसकी बदौलत ग्रामीण इलाकों में हजारों शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार मिला है।

अगर आप किसी वृद्ध व्यक्ति से टेलीफोन के बाबत अतीत की बात करें तो वह यादों के झरोखे से निहारता नजर आएगा। अगर आप 40 वर्ष से अधिक उम्र के हैं तो खुद अतीत को याद करें। टेलीफोन, मोबाइल और इंटरनेट एक सपना था। किसी को इस बात का अंदाजा नहीं था कि भविष्य में हर व्यक्ति के पास संचार संसाधन उपलब्ध होंगे, लेकिन आज सच्चाई सामने है। संचार क्रांति का असर है कि अब हर घर में टेलीफोन तो है ही, हर व्यक्ति के पास मोबाइल भी पहुंच गया है। यह कम लागत में रोजगार का साधन भी बन गया है।

भारत में संचार क्रांति ने 80 के दशक में पैर रखा। तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी का ध्यान संचार माध्यमों पर गया और उन्होंने देश में संचार सेवाओं के विस्तार का संकल्प लिया। 70 से 80 के दशक में यदि किसी व्यक्ति को दूसरे स्थानों पर निवास करने वाले किसी परिचित से बात करनी होती थी तो कई किलोमीटर दूर पैदल डाकघर जाना पड़ता जहां घंटों ट्रंककाल लगवाने के लिए इंतजार करना पड़ता। ज्यादातर लोग तो महंगी काल दर की वजह से इससे दूर ही रहते थे। लेकिन यह

सिलसिला 80 के उत्तरार्द्ध में खत्म हुआ। देश में एक नई क्रांति का सूत्रपात हुआ। प्रधानमंत्री ने सैम पित्रोदा नामक व्यक्ति को देश में संचार क्रांति लाने की जिम्मेदारी सौंपी। यह संचार क्रांति जल्द ही पीसीओ क्रांति में बदल गई। वर्ष 1985 में पोस्ट आफिस एवं टेलीग्राफ विभाग को विभाजित कर अलग–अलग जिम्मेदारी तय की गई। वर्ष 1989 में नया कमीशन बनाया गया, जिसे यह जिम्मेदारी सौंपी गई कि टेलीफोन सेवा का कैसे विस्तार किया जाए। कमीशन की रिपोर्ट पर काम शुरू हुआ और अब स्थिति सामने है। देशभर में पीसीओ खोलने को लेकर होड़ मच गई। तमाम युवाओं ने इसे रोजगार का जरिया बनाया और स्वावलंबन की राह पर आगे बढ़ते गए।

अब स्थिति यह है कि न तो लोगों को ट्रंककाल के लिए घंटों इंतजार करना पड़ता है और न ही महंगी काल दर चुकानी पड़ती है। देश ने इस क्षेत्र में जो कदम रखा तो आगे बढ़ता ही गया और अब टेलीफोन से थ्री जी सेवा तक पहुंच गए हैं। जनता के रूझान और अर्थव्यवस्था पर पड़ते इसके असर को देखते हुए वर्ष 1994 में नेशनल टेलीफोन नीति आई, जिसने इसके प्रसार की गति को तेज कर दिया। विभागीय आंकड़े बताते हैं कि 1986 में करीब एक लाख पीसीओ थे, जबकि 25 लाख लोग कनेक्शन के लिए लाइन में थे। इसमें ग्रामीण इलाके से सबसे अधिक आवेदन आए थे। वर्ष 1990 में भारत में जहां 50 लाख टेलीफोन धारक थे वहीं 1995 में यह संख्या बढ़कर 10 करोड़ से अधिक हो गई। विभाग की माने तो 1997 में देश के सभी गांव करीब–करीब टेलीफोन से जुड़ चुके हैं।

विश्व का दूसरा सबसे बड़ा टेलीफोन बाजार बना भारत

टेलीफोन सेवा का विस्तार इस कदर हो रहा है कि 2010 तक भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा टेलीफोन बाजार बन जाएगा। बीएसएनएल के सीएमडी कुलदीप गोयल ने कुछ दिन पहले दावा किया था कि टेलीफोन क्षेत्र में लगातार विस्तार हो रहा है। अब बीएसएनएल 5.50 लाख गांवों में पहुंच गया है।

देश में दूसरी बड़ी क्रांति

भारत में वर्ष 1995 में दूसरी सबसे बड़ी क्रांति हुई। कोलकाता में पहली मोबाइल सेवा शुरू हुई। करीब 40 हजार के हैंडसेट के जरिए 17 रुपये प्रति मिनट की दर से काल शुरू हुई। समय के साथ इस सेवा में विस्तार हुआ और अब स्थिति यह है कि काल दरें एक रुपये से कम तक पहुंच गई हैं। मोबाइल का विस्तार

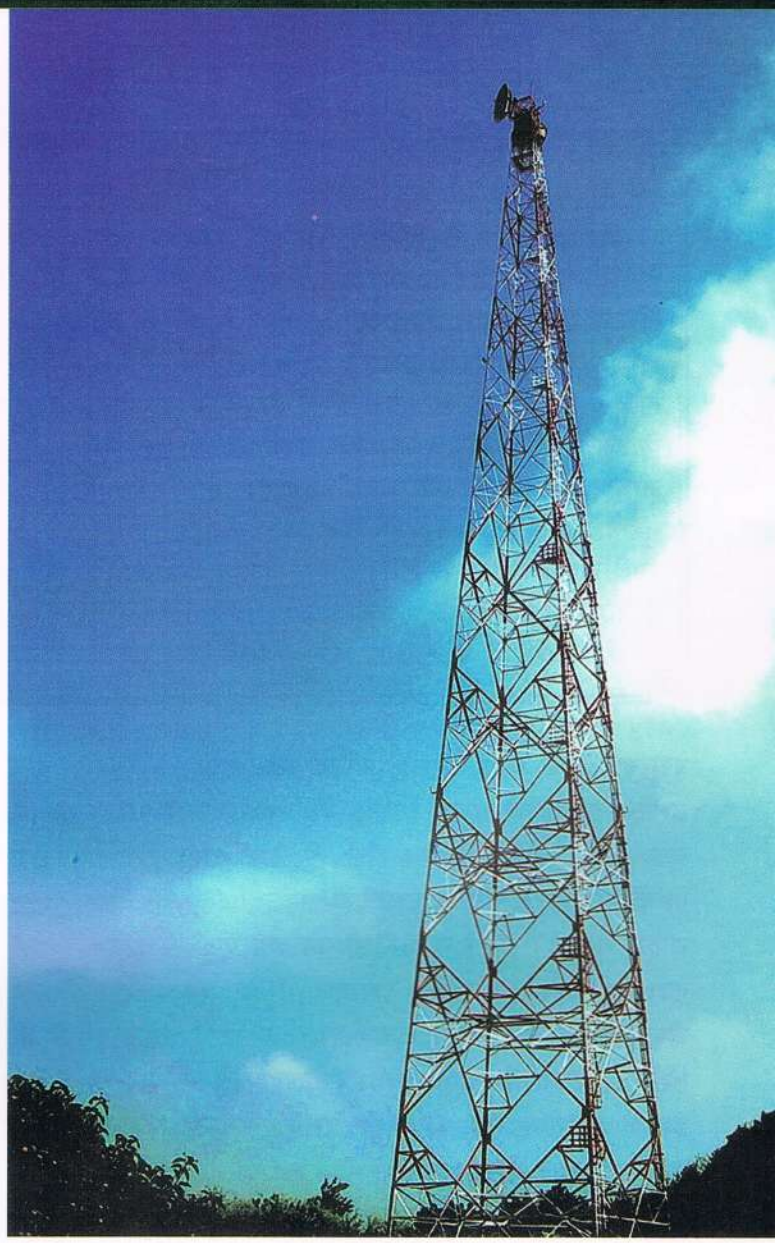

इतनी तेजी से हुआ कि वर्ष 2008 में देश में करीब 11.32 करोड़ उपभोक्ता जुड़ गए हैं। अप्रैल 2008 में भारत दुनिया के दूसरे सबसे बड़े बाजार वायरलैस पर कब्जा जमाने में सफल रहा। इतना ही नहीं करीब 95 लाख उपभोक्ताओं के हर माह जुड़ने की बात कही जा रही है। अब थ्री जी सेवा का विस्तार हो रहा है। इससे मोबाइल के जरिए ही टीवी और संचार के अन्य संसाधनों का भी फायदा उठाया जा सकेगा। यह एक बड़ी उपलब्धि होगी।

खोले रोजगार के नए द्वार

संचार क्रांति के बाद ग्रामीण एवं शहरी इलाके में पीसीओ एक उद्योग के रूप में विकसित हुआ। आंकड़ों के मुताबिक अब करीब एक हजार की आबादी वाले गांव में कम से कम तीन पीसीओ चल रहे हैं। जाहिर–सी बात है कि ये पीसीओ शिक्षित

गांवं-गांव में कम्प्यूटर सिखाने की तैयारी

केंद्र सरकार गांव-गांव में 'कम्प्यूटर' सिखाने की तैयारी में जुट गई है। इसके लिए बाकायदा क्षेत्रीय भाषा में साफ्टवेयर तैयार किए गए हैं। 22 भाषाओं के इन साफ्टवेयरों को देशभर में बांटा जा रहा है। इन साफ्टवेयरों के आने के बाद हिन्दी व अंग्रेजी नहीं जानने वाला व्यक्ति भी कम्प्यूटर का उपयोग आसानी से कर सकेगा। केंद्रीय संचार एवं प्रौद्योगिकी राज्य मंत्री सचिन पायलट ने बताया कि देशभर में सभी पंचायतों को 'ब्रांडबैंड' से जोड़ दिया जाएगा। इसके बाद छोटे-छोटे गांवों में रहने वाला व्यक्ति भी आसानी से अपनी भाषा में कम्प्यूटर का इस्तेमाल कर सकेगा। उन्होंने कहा कि उनका लक्ष्य दूरदराज के उन सभी गांवों को मोबाइल से जोड़ने का है जहां पर यह सुविधा अभी तक नहीं पहुंची है। इसके लिए इस साल 10 हजार मोबाइल टावर छोटे-छोटे कस्बों में लगाए जाएंगे। उन्होंने बताया कि मोबाइल की मांग शहर और गांव में बराबर है। अब तक पूरे देश में 43.5 करोड़ मोबाइल कनेक्शन लगाए जा चुके हैं। बीते साल 13 करोड़ से ज्यादा कनेक्शन दिए गए थे, इसमें से आधे ग्रामीण क्षेत्रों में लगे। श्री पायलट ने बताया कि आधुनिक पोस्ट आफिस- 'प्रोजेक्ट एरो' के तहत देशभर में 500 जिलों के 1000 पोस्ट आफिसों को इंटरनेट, फोन बैंकिंग और कम्प्यूटर जैसी सुविधाओं से लैस किया जा रहा है। इसके माध्यम से छोटे कस्बों में रहने वाले ग्रामीण शहर से सीधे संपर्क कर अपने काम को करा सकेंगे।

बेरोजगारों के लिए सबसे अधिक लाभकारी साबित हुए है। ग्रामीण इलाके के तमाम शिक्षित बेरोजगार नौकरी की तलाश में इधर–उधर भटक रहे थे। जैसे ही गांवों तक टेलीफोन सेवा पहुंची उन्होंने इसके व्यावसायिक पहलू पर नजर दौड़ाई और सफल भी रहे। लागों ने पीसीओ को कम पूंजी मे अधिक मुनाफे का धंधा समझा और इस रोजगार में लग गए। हालांकि अब बीएसएनएल के अलावा टाटा, एयरटेल आदि कंपनियों ने भी विभिन्न स्कीमों के तहत पीसीओ खुलवाए हैं। चूंकि यह ग्रामीण इलाके के लिए नई चीज थी इसलिए सबसे अधिक फायदा ग्रामीण इलाके में हुआ।

छबीलेपुर में पीसीओ संचालक सूबेदार निषाद का कहना है कि उन्होंने वर्ष 2003 में पीसीओ खोला। शुरुआती दौर में स्थिति यह थी कि शाम के वक्त फोन करने वालों को लाइन लगानी पड़ती थी। कोई दूसरे स्थानों से आने वाले फोन रिसीव करने के लिए तो कोई फोन करने के लिए बैठा रहता था। स्नातक तक शिक्षा हासिल करने वाले सूबेदार ने सरकारी नौकरी के लिए भी खूब हाथ–पांव मारे, लेकिन सफलता नहीं मिली तो इस रोजगार में हाथ डाला और आज सफल है। हालांकि मोबाइल का क्रेज बढ़ने पर पीसीओ पर भीड़ कम हुई। आय भी घटी, लेकिन इसके विकल्प के रूप में उन्होंने अपनी दुकान पर मोबाइल के रीचार्ज कूपन रखना शुरू कर दिया। इससे पीसीओ की तो कमाई कम हुई, पर वह दूसरे माध्यम से आने लगी। अशोक कुमार, पंकज सिंह भी पीसीओ के जरिए अपनी जीविका चला रहे हैं। इन पीसीओ संचालकों का कहना है कि कई बार मोबाइल काम करना बंद कर देता है। ऐसे में दूरसंचार विभाग की ओर से लगाया गया उनका पीसीओ ही सभी के काम में आता है। सूबेदार अशोक जैसे तमाम ग्रामीण युवा हैं जो पीसीओ के जरिए स्वावलंबी बने हुए हैं।

रिपेयरिंग का कारोबार भी

देश में मोबाइल का चलन बढ़ने से तमाम लोगों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार मिला है। उसकी रिपेयरिंग के क्षेत्र में भी तमाम युवाओं की रोजी–रोटी चल रही है। ग्रामीण इलाके में रिपेयरिंग का कारोबार कम लागत में युवाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार ला रहा है। अगर हम ग्रामीण अर्थव्यवस्था की बात करें तो मोबाइल मेंटेनेंस के काम में सैकड़ों युवा लगे हुए हैं। उत्तर प्रदेश के जौनपुर जिले के बदौवां गांव निवासी अजय कुमार बताते हैं कि उन्होंने टीवी, ट्रांजिस्टर, कम्प्यूटर आदि की रिपेयरिंग का डिप्लोमा कर रखा है। इधर कुछ दिन से मोबाइल का काम आने लगा। ऐसे में उन्होंने एक निजी संस्थान से मोबाइल रिपेयरिंग में भी डिप्लोमा कर लिया। अब गांव में ही मुख्य मार्ग पर स्थित उनकी दुकान पर ग्राहकों की भीड़ लगी रहती है। आसपास के दूसरे गांवों से तमाम लोग मोबाइल ठीक कराने के लिए उनके पास आते हैं। उनके अलावा तीन अन्य युवक भी काम सीख रहे हैं। उन्हें सुबह से लेकर शाम तक फुर्सत नहीं मिलती है। टीवी, ट्रांजिस्टर के साथ ही मोबाइल का काम होने के कारण उनके यहां हर तरह के ग्राहक आते हैं।

फिलहाल ग्रामीण इलाके के लोगों में बार–बार नए मोबाइल बदलने का क्रेज नहीं है। इसके पीछे मूल कारण आर्थिक स्थिति है। चूंकि शहरी लोग नए मॉडल बाजार में आते ही पुराने मोबाइल कम दाम मे बेच देते हैं। ऐसे में वह पुराने मोबाइल

खरीद कर अपनी दुकान पर रखते हैं और गांव के लोग कम पैसे में खरीद कर ले जाते हैं। ग्रामीण इलाके में मोबाइल रिपेयरिंग का काम बढ़ने का एक बड़ा कारण यह भी है। शहर में पुराना मोबाइल खराब होते ही लोग नया खरीद लेते हैं, लेकिन गांव के लोग उसे रिपेयर कराकर काम चलाते हैं। ऐसे में उन जैसे इस कारोबार में लगे तमाम लोगों को रोजगार मिला हुआ है। इस तरह देखा जाए तो ग्रामीण इलाके के तमाम युवा मोबाइल रिपेयरिंग के कारोबार से जुड़े हैं और स्वरोजगार अपनाए हुए है। इससे साबित होता है कि मोबाइल क्रांति ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को काफी सुदृढ़ किया है।

खुले इंस्टीट्यूट

पहले जहां विभिन्न इंस्टीट्यूट टीवी, ट्रांजिस्टर की ट्रेनिंग देते थे वही मोबाइल क्रांति आने के बाद मोबाइल रिपेयरिंग की भी ट्रेनिंग दे रहे हैं। स्थिति यह है कि छोटे–छोटे बाजारों में मोबाइल रिपेयरिंग ट्रेनिंग सेंटर खुले हुए हैं जहां ग्रामीण ट्रेनिंग ले रहे हैं। शारदा कम्युनिकेशन ट्रेनिंग सेंटर के डायरेक्टर अखिलेश कुमार सिंह का कहना है कि पहले वह जिला मुख्यालय पर भी ट्रेनिंग सेंटर चलाते थे। लेकिन अब विभिन्न बाजारों में भी उनके सेंटर चल रहे हैं। इसके लिए उन्होंने दिल्ली के एक इंस्टीट्यूट से फ्रेंचाइजी ले रखा है। वह बताते हैं कि गांव के तमाम शिक्षित युवक हैं, जो नौकरी न मिलने के कारण खेती–बाड़ी में जुटे हैं। बाजारों में ट्रेनिंग सेंटर होने के कारण वे घर का काम निबटाने के बाद ट्रेनिंग भी ले रहे हैं। उनके सेंटर से ट्रेनिंग पाए करीब आधा दर्जन से अधिक युवाओं को विभिन्न मोबाइल कंपनियों में नौकरी भी मिली है।

इंटरनेट के जरिए मिली जानकारी

गांवों में संचार क्रांति के पहुंचने से इंटरनेट का चलन बढ़ा है। साइबर कैफे छोटे–छोटे बाजारों तक पहुंच गए हैं। जहां से शिक्षित बेरोजगार विभिन्न प्रकार की जानकारी हासिल कर रहे हैं। साथ ही इन साइबर कैफे को चलाने वालों को भी रोजगार मिल रहा है। परिया से अवध नारायण बताते हैं कि वे कृषि में स्नातक हैं। इंटरनेट प्रयोग करना भी जानते थे, लेकिन खेतीबाड़ी का काम इतना अधिक होता था कि इंटरनेट पर जानकारी लेने के लिए शहर नहीं जा पाते थे। अब उनके बाजार में इंटरनेट ढाबा की व्यवस्था हो गई है। वह मात्र 10 रुपये खर्च कर घंटे भर का समय इंटरनेट पर देते हैं। इससे उन्हें सिर्फ 10 रुपये में खेती एवं पशुपालन संबंधी विभिन्न प्रकार की जानकारी मिल जाती है। वह कुछ कृषि विशेषज्ञों से भी इंटरनेट के जरिए मेल भेजकर जानकारी मांगते हैं। समय से जानकारी मिल जाने के कारण उनका कृषि कारोबार पहले से बेहतर हुआ है।

इस तरह देखा जाए तो संचार क्रांति ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने में सबसे सशक्त माध्यम साबित हुई है। इस माध्यम से ग्रामीण युवाओं के लिए रोजगार के नए द्वार खुले हैं। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से देश के हजारों लोग परिवार का भरण–पोषण कर रहे हैं। अब समय के साथ संचार प्रणाली और सुदृढ़ हो रही है। गांव–गांव में इंटरनेट ढाबे खुल रहे हैं। इससे लोगों को इंटरनेट के जरिए देश–दुनिया की खबरें मिल रही हैं। साथ ही वे देश–दुनिया में रोजगार के अवसरों के बारे में भी जानकारी हासिल कर पा रहे हैं। निश्चित रूप से संचार क्रांति ने भारतीय अर्थव्यवस्था को नए आयाम प्रदान किए हैं। खासतौर से ग्रामीण इलाके का विकास हुआ है। जहां तमाम युवा जानकारी के अभाव में हार मान लेते थे और पढ़े–लिखे होने के बाद भी निराशा के बीच जीवनयापन कर रहे थे। कई बार उन्हें विभिन्न अवसरों की जानकारी ही नहीं मिल पाती थी। वही अब वे इंटरनेट के जरिए अपने मार्ग खुद तलाश रहे हैं। ग्रामीण युवाओं का पलायन भी रुका है। वे गांव में ही इंटरनेट से जानकारी हासिल कर बेहतर तरीके से कृषि एवं उससे जुड़े अन्य उद्योग चला रहे हैं।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

ई–मेल : chandrabhan,chandan@gmail.com

गांवों की बदलती तस्वीर

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना

अखिलेश चन्द्र यादव

किसी भी देश, गांव व समाज के विकास में सड़कों का बहुत बड़ा योगदान होता है। यही वजह है कि प्राचीन काल में उन्हीं शहरों में उद्योग पनप पाए, जहां आवागमन के समुचित साधन थे। अगर कोलकाता अथवा मुंबई औद्योगिक शहर के रूप में सबसे पहले विकसित हुए तो एक बड़ा कारण यह है कि यहां सड़कों के साथ ही बंदरगाह मौजूद थे। जहां से कच्चा माल और तैयार माल आसानी से गंतव्य तक पहुंच सकता था। वर्तमान परिवेश में जहां भी इंडस्ट्रियल एरिया विकसित किया जा रहा है वहां पहले आवागमन की सुविधा तैयार कराई जाती है। कंपनियां भी सड़क मार्ग अथवा रेलमार्ग की व्यवस्था होने के बाद ही संबंधित स्थान पर अपना प्रोजक्ट शुरू करती है। यानी विकास में सड़क एक महत्वपूर्ण अंग है। यही वजह है कि हमारी सरकार ने भी सड़क को तवज्जो दिया। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना ने गांवों की तस्वीर बदल दी है। सड़क बनने के बाद गांवों में तेजी से विकास हुए हैं। यहां आर्थिक स्थिति काफी मजबूत हुई है। सड़क का निर्माण होने के साथ ही ग्रामीण उद्योगों को काफी फायदा हुआ है। साथ ही कई परिवारों का भरण–पोषण आसान हुआ है। कह सकते है कि सड़कों ने कई लोगों को रोजगार से जोड़ने का कार्य किया है।

उत्तर प्रदेश के जौनपुर जिले की ग्रामसभा नदियापारा में करीब छह साल पहले लोगों को बाजार तक आने के लिए पगडंडियों का सहारा लेना पड़ता था और रोजमर्रा का सामान खरीदने के लिए पैदल ही छबीलेपुर बाजार आना पड़ता था। लेकिन प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के जरिए सड़क बनने के बाद तस्वीर ही बदल गई है। इससें न केवल गांव के मजदूरों को रोजगार मिला। साथ ही रोजगार के नए–नए साधन विकसित हुए। अच्छी सड़क बनने से अब लोगों को गांव में ही सामान मिलने लगा है तो दूसरी ओर कई लोगों को आटोरिक्शा चालक का रोजगार मिल गया है।

उदाहरण के तौर पर हम बता रहे है उत्तर प्रदेश के जौनपुर जिले की ग्रामसभा नदियापारा की कहानी, जहां प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के जरिए सड़क बनने के बाद अब पूरी तस्वीर ही निराली नजर आती है। ग्रामसभा नदियापारा जिला मुख्यालय से करीब नौ किलोमीटर दूर नदी के किनारे बसा हुआ गांव है। इस गांव में ठाकुर, ब्राह्मण, यादव एवं दलित जातियां रहती हैं। यहां पहुंचने के लिए पहले छबीलेपुर बाजार से करीब तीन किलोमीटर पैदल जाना पड़ता था। करीब छह साल पहले गांव में सड़क की व्यवस्था नहीं थी। लोगों को बाजार तक आने के लिए पगडंडियों का सहारा लेना पड़ता था। और रोजमर्रा के सामान खरीदने के

लिए पैदल छबीलेपुर बाजार आना पड़ता। आवागमन की सुविधा न होने के कारण दोपहिया वाहन भी दो–चार लोगों के पास ही था। बारिश होते ही वाहन को छबीलेपुर बाजार में ही खड़ा कर देना पड़ता था। अधिकारी ही नहीं जनप्रतिनिधि भी इस गांव में जाने की जहमत नहीं उठाते थे।

समय के साथ परिवर्तन हुआ। ग्रामीणों ने हर चुनाव में सिर्फ सड़क का ही मुद्दा उठाया। ग्रामीणों के अथक प्रयास से इस गांव का चयन प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना में हुआ। सड़क का निर्माण शुरू हुआ। इससे गांव के मजदूरों को रोजगार मिला। सड़क का निर्माण पूरा हुआ कि रोजगार के नए–नए साधन विकसित हो गए। लोगों के पास दोपहिया से लेकर चार पहिया तक वाहन हो गए हैं। एक व्यक्ति ने आटो रिक्शा ले लिया और इसके जरिए वह सवारी ढोकर परिवार का भरण–पोषण कर रहा है।

आटो चालक ओमप्रकाश का कहना है कि उसने बैंक से ऋण लेकर आटो खरीदा। पहले छबीलेपुर से जिला मुख्यालय के लिए वह चलता था। आटो की संख्या अधिक होने के कारण दोनों स्टैंडों पर नंबरवार व्यवस्था की गई है। इससे दिनभर में दो चक्कर ही लग पाते थे। इसे परिवार का खर्च चलाने के साथ ही बैंक की किस्त देने की चिंता थी। ऐसे में उसने नदियापारा गांव से चलना शुरू किया। सड़क अच्छी होने के कारण मात्र पांच से सात मिनट में वह मुख्य सड़क पर पहुंच जाता है।

लोगों को गांव से ही सवारी मिल जाती है, इसलिए वे किराया भी अधिक देते हैं। यानी एक तरफ लोगों को आवागमन की सुविधा मिली तो दूसरी तरफ आटो चालक को रोजगार मिला। इसी तरह सड़क बनने के बाद अशोक गुप्ता एवं बाढू सिंह ने किराने की दुकानें खोल ली है। व्यवसायी अशोक गुप्ता के मुताबिक पहले भी उसने दुकान चलाने की कोशिश की, लेकिन दुकान तक माल लाने में काफी परेशानी होती थी। पहले माल छबीलेपुर मिलता था फिर वहां से ढेला आदि के सहारे दुकान तक लाता था। ऐसे में पल्लेदारी व वाहन भाड़ा बढ़ जाता था और वह ग्राहकों को उचित दर पर सामान नहीं दे पाता था। अब एक ही भाड़े में शहर में स्थित गोदाम से दुकान तक माल पहुंच जाता है। वह उतने पैसे में ग्रामीणों को सामान दे पाता है, जितने में छबीलेपुर बाजार के दुकानदार बेच रहे हैं। इससे दोहरा फायदा हुआ। ग्रामीण को नजदीक से सामान मिल रहा है और हमें भी आमदनी हो रही है।

इसी तरह गांवों के जो किसान अनाज बेचना चाहते थे। पहले उनका अनाज काफी कम दाम में बिकता था क्योंकि गांव तक व्यापारी कम जाते थे। ऐसे में किसान को भी अपना अनाज मंडी तक ले जाने में परेशानी होती थी। अब मंडी जाने में जहां किराया कम लगता है वहीं तमाम व्यापारी किसानों के पास खुद पहुंच रहे हैं। ग्रामसभा के प्रधान (सरपंच) गजरात हरिजन का कहना है कि पहले स्थिति काफी गंभीर थी। आवागमन की समस्या होने के कारण गांव की पूरी व्यवस्था चौपट थी। यह गांव कहने के लिए भले जिला मुख्यालय से मात्र नौ किलोमीटर की दूरी पर था, लेकिन यहां के लोगों को कोई सुविधा नहीं मिल पा रही है। गांव में सड़क बनते ही खुशहाली ही खुशहाली नजर आ रही है। छबीलेपुर बाजार से गांव तक आने वाली मुख्य सड़क प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना में बन गई है, जबकि विभिन्न बस्तियों को जाने वाली सड़के स्थानीय निधि से तैयारी कराई गई है। अब इस गांव में जिला से लेकर ब्लॉक स्तर तक के अधिकारी भ्रमण करते रहते हैं। पहले सड़कें न होने से लोग यहां आने से कतराते थे। अधिकारियों के आते–जाते रहने से लोगों की काफी समस्याएं हल हो रही हैं। सांसद व विधायक भी आसानी से इस गांव में पहुंच जाते हैं। इसका भी फायदा लोगों को मिल रहा है। ग्रामीणों का कहना है कि सड़क बनने के बाद गांव की सबसे बड़ी समस्या समाप्त हो गई है। अब यहां रोजगार के साधन भी विकसित हुए हैं। सड़क के किनारे कुछ लोगों ने आटा चक्की लगा रखी है। कई लोग दूसरे प्रोजेक्ट पर कार्य कर रहे हैं। आवागमन की सुविधा चौकस होने से कई लोग लघु उद्योग लगाने की तैयारी में हैं। जल्द ही गांव की आर्थिक स्थिति और मजबूत हो जाएगी।

ग्रामसभा नदियापारा तो उदाहरण मात्र है। इस तरह के तमाम गांव है, जहां सड़क का निर्माण होने के बाद आर्थिक स्थिति भी बदल गई है। रोजगार के नए साधन विकसित हुए हैं। ग्रामसभा की अर्थव्यवस्था समृद्ध हुई है। यही वजह है कि केंद्र सरकार का पूरा ध्यान सड़कों पर है। सड़कों के निर्माण के लिए इस बार बजट में 12 हजार करोड़ की व्यवस्था की गई है। जो गत वर्ष की अपेक्षा 59 फीसदी अधिक है। अकेले प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना में 59,564 गांवों को जोड़ने की तैयारी है। इससे निश्चित रूप से गांवों की आर्थिक स्थिति मजबूत होगी। जब गांव की अर्थव्यवस्था में सुधार आएगा तो देश की आर्थिक स्थिति अपने आप सुधर जाएगी। भारत गांवों का देश है। इसलिए सरकार की ओर से गांवों की समृद्धि के लिए सबसे पहले सड़कों पर ध्यान दिया जाना काबिले तारीफ है। इसी बात को ध्यान में रखकर केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना की शुरुआत की। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना की शुरुआत 25 दिसंबर 2000 में हुई थी। तय किया गया कि मैदानी इलाके में जिस भी गांव की आबादी एक हजार से अधिक है और अभी तक वहां सड़कों की व्यवस्था नहीं है, वहां तत्काल सड़क बनवाई जाएगी। इसी तरह पहाड़ी इलाके में जनसंख्या का मानक पांच सौ रखा गया हैं। इस योजना के तहत जुलाई 2008 तक 86,146 गांवों को जोड़ा जा चुका है। इसी तरह केंद्र सरकार ने भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के राष्ट्रीय राजमार्ग विकास कार्यक्रम के लिए वर्ष 2008–09 की अपेक्षा 2009–10 में 23 फीसदी अधिक बजट का प्रावधान है। सरकार का यह भी मानना है कि गांवों की सड़कों के साथ ही राजमार्गों का भी सुदृढ़ होना जरूरी है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

ई–मेल : acyjnp@gmail.com

ग्रामीण क्षेत्रों में फैलाती नया उजाला

राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना

ग्रामीण विद्युतीकरण को ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम माना जाता है। यह अब सहज स्वीकार्य है कि बिजली अब एक बुनियादी मानवीय आवश्यकता बन चुकी है और प्रत्येक घर में बिजली की सुविधा होनी ही चाहिए। ग्रामीण भारत में, व्यापक प्रभाव वाले आर्थिक और मानव विकास हेतु विद्युत आपूर्ति की आवश्यकता है। राष्ट्रीय विद्युत नीति में ग्रामीण क्षेत्रों में 24 घंटे बिजली देने की बात कही गई है। ग्रामीण विद्युतीकरण नीति का उद्देश्य सभी घरों में बिजली की सुविधा प्रदान करना है।

राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना का (आरजीजीवीवाई) उद्देश्य एक लाख अविद्युतीकृत गांवों में बिजली पहुंचाना और 2.31 करोड़ ग्रामीण बीपीएल परिवारों को मुफ्त बिजली कनेक्शन प्रदान करना है। इस योजना के तहत जो बुनियादी ढांचा खड़ा किया जा रहा है, वह सभी घरों में बिजली का कनेक्शन देने के लिए पर्याप्त है। ऊर्जा मंत्रालय ने अब तक 534 जिलों के 1,18,146 गांवों में बिजली पहुंचाने और 2.45 करोड़ ग्रामीण बीपीएल परिवारों को निःशुल्क कनेक्शन देने को मंजूरी दी है। 15 जुलाई, 2009 तक 63,040 गांवों में बिजली पहुंचाई जा चुकी है और 63.6 लाख बीपीएल परिवारों को बिजली के मुफ्त कनेक्शन दिए जा चुके थे। मार्च 2012 तक सभी स्वीकृत परियोजनाओं को पूरा करने का लक्ष्य है।

ग्रामीण विद्युतीकरण की परिभाषा को अब सख्त बना दिया गया है ताकि किसी गांव को विद्युतीकृत घोषित करने के पूर्व पर्याप्त विद्युतीय अधोसंरचना की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सके। जनगणना 2001 के अनुसार देश में करीब 1.2 लाख गांवों में बिजली की सुविधा उपलब्ध नहीं थी। राज्यों द्वारा ग्रामीण विद्युतीकरण की मंथर गति को

देखते हुए भारत सरकार ने मार्च 2005 में अपना अग्रगामी कार्यक्रम राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना (आरजीजीवीवाई) की शुरुआत की। इसका उद्देश्य एक लाख अविद्युतीकृत गांवों में बिजली पहुंचाना और 2.31 करोड़ ग्रामीण बीपीएल (गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले) परिवारों को मुफ्त बिजली कनेक्शन प्रदान करना है। इस योजना के तहत जो बुनियादी ढांचा खड़ा किया जा रहा है, वह सभी घरों में बिजली का कनेक्शन देने के लिए पर्याप्त है। एपीएल (गरीबी रेखा से ऊपर) परिवारों को बिजली आपूर्ति करने वाली कम्पनी की शर्तों आदि के फार्म भर उन्हें बिजली के कनेक्शन लेने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है।

योजना– योजना में परियोजनाओं के लिए 9 प्रतिशत पूंजीगत राज सहायता (सब्सिडी) दी जाती है और इसमें निम्नलिखित गतिविधियां शामिल हैं–ग्रामीण विद्युत वितरण मेरुदंड (बैकबोन) (आरईडीबी), ग्रामीण विद्युतीकरण अधोसंरचना का सृजन (वीईआई), विकेन्द्रीकृत वितरित उत्पादन (डीडीजी) और आपूर्ति तथा गरीबी रेखा से नीचे परिवारों को ग्रामीण परिवार विद्युतीकरण। विकेन्द्रीकृत वितरण उत्पादन (डीडीजी) योजना के तहत राज्य उन क्षेत्रों में नवीन एवं नवीकरणीय स्रोतों पर आधारित परियोजनाओं को भी हाथ में ले सकते हैं, जहां इनको लगाने के लिए विस्तृत दिशानिर्देश जारी किए जा चुके हैं।

ग्यारहवीं योजना में भी आरजीजीवीवाई जारी है– योजना के अंतर्गत 68,763 गांवों में बिजली पहुंचाने और 83.1 लाख बीपीएल परिवारों को बिजली के मुफ्त कनेक्शन के लिए 97 अरब 32 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से 234 जिलों की 235 परियोजनाओं की मंजूरी दी गई थी। दसवीं योजना के अंत तक 38,525 गांवों में बिजली पहुंचाई जा चुकी थी।

ग्यारहवीं योजना में आरजीजीवीवाई को जारी रखने की मंजूरी भारत सरकार ने 3 जनवरी, 2008 को दी और इसके लिए 2 लाख 80 अरब रुपये की पूंजीगत सब्सिडी देने का प्रावधान किया गया है। वे राज्य जिसमें अविद्युतीकृत गांवों और परिवारों की संख्या काफी ज्यादा है, उन पर इस योजना के तहत ज्यादा जोर दिया गया है। ये राज्य हैं–असम, बिहार, झारखंड, उड़ीसा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिमी बंगाल। जिन अन्य क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है, वे हैं पूर्वोत्तर के विशेष श्रेणी वाले राज्य, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर तथा उत्तराखंड, अंतर्राष्ट्रीय सीमा से लगने वाले जिले और नक्सल प्रभावित जिले। सौ से अधिक जनसंख्या वाली आबादियों को योजना में शामिल किया गया है।

ऊर्जा मंत्रालय ने अब तक 534 जिलों के 1,18,146 गांवों में बिजली पहुंचाने और 2.45 करोड़ ग्रामीण बीपीएल परिवारों को निःशुल्क कनेक्शन देने को मंजूरी दी है। 15 जुलाई, 2009 तक 63,040 गांवों में बिजली पहुंचाई जा चुकी है और 63.6 लाख बीपीएल परिवारों को बिजली के मुफ्त कनेक्शन दिए जा चुके थे। मार्च 2012 तक सभी स्वीकृत परियोजनाओं को पूरा करने का लक्ष्य है।

क्रियान्वयन– ग्रामीण विद्युतीकरण निगम योजना पर अमल करने वाली नोडल एजेंसी है। परियोजना पर तेजी से अमल के लिए पावर ग्रिड, एनटीपीसी, एनएचपीसी, और डीवीसी जैसे केंद्रीय विद्युत उपक्रमों की सेवाओं को 4 राज्यों की बिजली कम्पनियों को उपलब्ध कराया गया है। परियोजनाओं पर प्रभावी और उम्दा क्रियान्वयन के लिए मंत्रालय ने क्रियान्वयन की टर्न की (पूर्ण रूप से तैयार करके दी जाने वाली) पद्धति, त्रि–स्तरीय निगरानी व्यवस्था और मील का पत्थर आधारित परियोजना निगरानी का तरीका अपनाया है। इस योजना के तहत राज्यों से विद्युतीकृत गांवों को न्यूनतम 6 से 8 घंटे बिजली देने को कहा गया है। आरजीजीपीवाई के तहत विद्युतीकृत गांवों में वितरण के प्रभावी प्रावधान के लिए फ्रैंचाइजियों (अधिकृत एजेटों) की नियुक्ति अनिवार्य कर दी है। वितरण प्रबन्धन के लिए अधिकृत एजेंसियों (फ्रैंचाइजी) की व्यवस्था से ग्रामीण युवाओं को रोजगार के अच्छे अवसर मिल रहे हैं। अब तक 99,643 गांवों में अधिकृत एजेंट नियुक्त किए जा चुके हैं।

एसजीएसवाई होगा अब राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका अभियान

सरकार स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (एसजीएसवाई) का लाभ ज्यादा लोगों तक पहुंचाने के लिए इसके ढांचे में परिवर्तन करने जा रही है। इसे राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका अभियान का रूप दिया जा रहा है, ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों के उत्थान कार्यक्रम को ज्यादा केंद्रित बनाया जा सके। ग्रामीण विकास मंत्रालय योजना के तहत ऋण वितरण प्रक्रिया के सरलीकरण पर भी काम चल रहा है। एसजीएसवाई के नियमों के तहत अधिकतम 75 हजार के परियोजना मूल्य पर 30 फीसदी की सब्सिडी दी जाती है, वहीं अनुसूचित जाति-जनजाति के लिए अधिकतम 10 हजार तक के परियोजना मूल्य पर 50 फीसदी की सब्सिडी दी जाती है।

और 40,000 फ्रैंचाइजियों (एजेंटों) को प्रशिक्षण देने का लक्ष्य रखा गया है। वर्ष 2009–10 के दौरान 2500 कर्मचारियों और 5000 एजेंटों को प्रशिक्षण देने का लक्ष्य है।

आरजीजीवीवाई के अन्तर्गत राज्यों से न्यूनतम 6 से 8 घंटों के लिए बिजली की आपूर्ति करने, लाइनों में बिजली दौड़ाने के लिए पर्याप्त विद्युत (ऊर्जा) का प्रबंध करने और योजनान्तर्गत सृजित वितरण अधोसंरचना को विद्युत आपूर्ति के लिए उप–पारेषण अधोसंरचना की स्थापना करने की प्रतिबद्धता के तौर पर अपनी ग्रामीण विद्युतीकरण योजनाएं अधिसूचित करने को कहा गया है। दस राज्यों को ग्रामीण विद्युतीकरण की अपनी अधिसूचनाएं अभी जारी करनी बाकी हैं। ये राज्य हैं– आंध्र– प्रदेश, बिहार, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, जम्मू–कश्मीर, कर्नाटक, केरल, सिक्किम, त्रिपुरा और उत्तराखंड।

निगरानी– मंत्रालय ने राज्यों से मुख्य सचिव की अध्यक्षता में राज्यस्तरीय समन्वय समिति गठित करने और त्वरित क्रियान्वयन पर विपरीत प्रभाव डालने वाली अन्तर्विभागीय समस्याओं के निराकरण के लिए इसकी नियमित बैठक आयोजित करने को कहा है। मंत्रालय ने स्थानीय मुद्दों को निपटाने और परियोजनाओं की प्रगति की समीक्षा के लिए राज्यों को संसद सदस्यों और विधायकों सहित सभी दावेदारों (स्टैक होल्डर) को लेकर जिला–स्तरीय समितियां गठित करने को कहा है। यह अनुभव रहा है कि जिन राज्यों में ये समितियां सक्रिय हैं और जिनकी नियमित बैठकें होती रहती हैं, वहां प्रगति अन्य के मुकाबले बेहतर है।

योजनान्तर्गत मंत्रालय ने राज्यों के बिजली उपक्रमों और उनके एजेंटों के 'ग' और 'घ' वर्ग के कर्मचारियों को प्रशिक्षण देना भी शुरू किया है। ग्यारहवीं योजना के दौरान 75,000 कर्मचारियों

वेबसाइट– मंत्रालय ने एक वेबसाइट http:èrggvy.gov.in शुरू की है, जिसमें आरजीजीवीवाई परियोजनाओं के बारे में सम्पूर्ण ब्यौरा जैसे योजना के तहत शामिल विद्युतीकृत गांवों आदि का विवरण दिया है। 'पब्लिक फोरम' नाम से एक पृथक विन्डो बनाई गई है, जिसमें अपने विचार और शिकायतें दर्ज कराई जा सकती हैं। इस वेबसाइट पर व्यापक विचारों एवं प्रश्नों का उत्तर संबंधित जिले में परियोजना पर अमल की उत्तरदायी एजेंसी तुरंत देती है।

(पसूका के सौजन्य से)

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (Krutidev 010 CD में) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख वरिष्ठ संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

लाल मिर्च अर्थव्यवस्था की नई शक्ति

आर.बी.एल. गर्ग

भारतीय मिर्च विश्व बाजार में महत्वपूर्ण स्थान रखती है लेकिन इसकी अपरिमित सम्भावनाओं को देखते हुए उत्पादन व निर्यात की एकीकृत योजना की आवश्यकता है। बढ़ती आंतरिक मांग को पूरा करने तथा निर्यात बढ़ाने के लिए सतत एवं स्थायी आधार पर मिर्च का उत्पादन बढ़ना जरूरी है। मिर्च उत्पादन में वृद्धि के लिए पोषण प्रबंधन की भी आवश्यकता है चूंकि बिना भूमि की उर्वरकता बनाए मिर्च पौधों की रक्षा नहीं की जा सकती।

ऐसा माना जाता है कि मैक्सिको एवं गुटेमाला मसाला मिर्च (केप्सिकम एनुअम) के मूल जनक हैं जिसे 14वीं शताब्दी में पुर्तगालियों द्वारा गोवा लाया गया। शनैः शनैः भारत में अनेक राज्यों में मिर्च की खेती होने लगी। वर्तमान में मूलतः आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, तमिलनाडु, कर्नाटक, राजस्थान व बिहार में मिर्च की खेती की जाती है। भारत में मिर्च का वार्षिक उत्पादन लगभग 12 लाख टन है जिसका 46 प्रतिशत उत्पादन अकेले आंध प्रदेश के सूखे क्षेत्र यथा गुंटूर, काम्मम व बारंगल में होता है। मिर्च उत्पादन में कर्नाटक के धारावाड़ जिले का भी महत्वपूर्ण स्थान है।

भारत के अलावा मैक्सिको, अर्जेन्टीना, इण्डोनेशिया, मोरोक्को, सूडान, हंगरी, रोमानिया, पाकिस्तान, श्रीलंका आदि मिर्च उत्पादक देश है लेकिन क्षेत्र एवं उत्पादन की दृष्टि से भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। वैश्विक मिर्च जीन्स बैंक में 6000 किस्म की मिर्चों का उल्लेख है जो 9 अलग–2 प्रजातियों से सम्बन्धित है। इसमें केवल तीन प्रजातियों की कृषि व्यावसायिक दृष्टि से व्यवहार्य है। कैप्सीकम एनुअम सबसे अधिक लोकप्रिय प्रजाति है क्योंकि यह तीखी लाल मिर्च नहीं है। इसकी सर्वाधिक कृषि होती है। लाल मिर्च की तीखी प्रजाति कैप्सीकम फ्रूटेंसिंस है। वानस्पतिक दृष्टि से अन्य प्रचलित प्रजातियों में कैप्सीकम चैनेन्सिस तथा कैप्सीकम पैन्डुलम हैं।

वर्तमान में मिर्च भारत की प्रमुख मसाला फसल है जो लगभग 10 लाख हेक्टेयर सिंचित एवं वर्षा आश्रित दोनों ही प्रकार की भूमि पर की जाती है। मिर्च का उपयोग हरी व पकी (लाल) दोनों अवस्थाओं में ही किया जाता है। कच्ची सलाद के रूप में, अचार बनाकर एवं

पकी लाल मिर्च को सुखाकर पाउडर के रूप में मिर्च का प्रयोग किया जाता है। शिमला मिर्च का प्रयोग सब्जी के रूप में किया जाता है। विकसित देशों में मिर्च से निकाले गए प्राकृतिक रंगों की बड़ी मांग है।

गरीब से लेकर पांचतारा होटल के किचन में मिर्च की उपस्थिति अपरिहार्य है। यही कारण है कि भारत मिर्च का सबसे बड़ा उत्पादक देश होने के साथ सबसे बड़ा निर्यातक व उपभोक्ता भी है। नेशनल सीड्स कॉर्पोरेशन के अनुसार भारत में मिर्च की उन्नतशील किस्मों में पम्प चिली–1, तेजस्विनी, आन्ध्र ज्योति, जी–4, एक्स–235, पूसा ज्वाला तथा पूसा सदाबहार प्रमुख रूप से आती हैं। इनमें से अधिकांश को उत्तर भारत में नवम्बर–जनवरी या मई–जून महीनों में बोया जा सकता है। उत्तर–पूर्वी राज्यों में अन्य किस्मों में सबसे तीखी मिर्च भूत–जोलकिया की खेती भी की जाती है जिसे 9 सितम्बर, 2006 को गिनीस बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स में मसालों में सबसे तीखी मिर्च दर्ज किया गया है।

लाल मिर्च का निर्यात

भारतीय मसाला निर्यातों में मिर्च का महत्वपूर्ण स्थान बनता जा रहा है। मात्रा की दृष्टि से लाल मिर्च का मसाला निर्यात में प्रथम तथा मूल्य की दृष्टि से दूसरा स्थान है। वर्ष 2008–09 में कुल मसालों के निर्यात में मिर्च का अंश मात्रा की दृष्टि से 40 प्रतिशत तथा मूल्य की दृष्टि से 20 प्रतिशत था। मिर्च व

मिर्च का निर्यात

वर्ष	मूल्य (करोड़ रुपये)	मात्रा (लाख टन)
2001–02	256.00	.76
2005–06	403.01	1.13
2006–07	807.75	1.48
2007–08	1097.50	2..09
2008–09	1080.95	1.88

मिर्च उत्पादनों के गुणवत्ता परीक्षण की अनिवार्यता ने भारतीय मिर्च को अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में शीर्ष स्थान प्रदान किया है। वर्ष 2001–02 में भारत में मात्र 256 करोड़ रुपये मूल्य की मिर्च व मिर्च उत्पादों का निर्यात किया गया था जो 2008–09 में बढ़कर 1080.95 करोड़ रुपये हो गया तथा इनकी मात्रा 1.88 लाख टन हो गई। भारतीय मिर्च व मिर्च उत्पादों के पारम्परिक आयातकर्ता देश इण्डोनेशिया, मलेशिया, बांग्लादेश व श्रीलंका हैं। अन्य देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका, संयुक्त अरब अमीरात व पाकिस्तान प्रमुख हैं।

मसाला फसलों में लाल मिर्च बहूपयोगी, नकदी व मुख्य निर्यातोन्मुखी फसल है। समूचे विश्व उत्पादन का लगभग 50 प्रतिशत भारत में ही होता है। कुल उत्पादन (12 लाख टन) का बड़ा अंश आंतरिक उपभोग के काम आता है तथा शेष (लगभग 4 प्रतिशत) का निर्यात कर दिया जाता है। अपनी विविधता के कारण भारत के लिए मिर्च प्रकृति की अनुपम भेंट है। मसालों के पश्चिमी उपभोक्ता जब भारतीय मसालों के बारे में सोचते हैं तो उसमें लाल मिर्च सबसे पहले आती है। लेकिन मिर्च के बारे में सामान्य धारणा यह है कि अन्य मसालों की तरह यह उपयोगी नहीं है जबकि यह विटामिन ए.सी. व ई का विश्वस्त स्रोत है तथा पाचन उद्दीप्त करती है। मिर्च में विद्यमान कैप्साइकिन एल्केलाइड तीखापन भी लाता है तथा स्वाद भी बढ़ाता है। भारतीय मिर्च अपने मूल्य वृद्धि उत्पाद जैसे मिर्च चून, मिर्च तेल, मिर्च राल तथा केपसेंथिन के कारण पूरी दुनिया में लोकप्रिय होती जा रही है।

भारतीय मिर्च का विश्व बाजार में आज महत्वपूर्ण स्थान है। लेकिन इसकी अपरिमित सम्भावनाओं को देखते हुए उत्पादन व निर्यात की एकीकृत योजना की आवश्यकता है। सतत एवं स्थायी आधार पर मिर्च का उत्पादन बढ़े– यह जरूरी है ताकि बढ़ती जा रही आंतरिक मांग को पूरा किया जा सके तथा निर्यात भी बढ़ सके। मिर्च उत्पादन में वृद्धि के लिए पोषण प्रबंधन की आवश्यकता है। बिना भूमि की उर्वरकता बनाये मिर्च पौधों की रक्षा नहीं की जा सकती। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम आदि के अभाव में पौधे अल्पपोषित ही रह जाते हैं। इसका कारण रासायनिक उर्वरकों का अधिक लागत मूल्य है।

दूसरी ओर मिर्च का उत्पादन फफूंद, वायरस, बैक्टीरिया एवं सूत्रकृमि आदि के कारण भी प्रभावित होता है जिन पर नियंत्रण आवश्यक है। मिर्च उत्पादन में वृद्धि एवं फसल की सुरक्षा के लिए रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यक है लेकिन इनके अत्यधिक प्रयोग के खतरे सामने आ रहे हैं। स्पाइसेस बोर्ड की एकीकृत कीट प्रबंधन योजना के अन्तर्गत रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के स्थान पर बायो कीटनाशक एवं वानस्पतिक उर्वरकों (वर्मीकल्चर सहित) के प्रयोग को प्रोत्साहित किया जा रहा है जो निश्चित रूप से लाभकारी होगा।

(लेखक श्रीबालाजी कालेज, घाटा मेहंदीपुर के पूर्व प्रधानाचार्य हैं।)

पशुपालन के जरिए समृद्धि लाता किसान

सुधेन्द्र सिंह

यदि पशुपालन को व्यावसायिक उद्देश्य से किया जाए तो किसान इससे अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकता है। ऐसी ही एक मिसाल पेश की है किसान नरेंद्र सिंह पटेल ने । श्री पटेल कृषक होने के साथ-साथ पशुपालक भी हैं। इन्होंने दुग्ध उत्पादन में नया कीर्तिमान स्थापित किया है और इन्हें इनके कार्य के लिए कई पुरस्कार भी मिल चुके हैं। दूसरे किसानों के लिए प्रेरणा बने श्री पटेल की भावी योजना ग्रामीण सहभागिता से एक बायोगैस प्लांट के निर्माण की है जिससे ईंधन की समस्या के साथ-साथ धुएं से भी निजात मिल सके।

गांव की जीविका का प्रमुख साधन कृषि है परन्तु कृषि की अनिश्चितता के कारण कृषकों की स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं आ रहा है। कृषकों की अतिरिक्त आय का पशुपालन अच्छा साधन है। यदि पशुपालन को व्यावसायिक उद्देश्य से किया जाए तो पशुपालन से अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है। ऐसी ही एक मिसाल पेश कर रहे है नरेन्द्र सिंह पटेल, जो ग्राम शिवदीन खेड़ा पोस्ट मगरायर जिला उन्नाव उत्तर प्रदेश के निवासी है। वह एक कृषक होने के साथ पशुपालक भी हैं। इनके पास दुधारू नस्ल की गाये हैं। श्री नरेन्द्र सिंह पटेल ने दुग्ध उत्पादन में नया कीर्तिमान स्थापित किया है। वर्ष 2000 में इन्होंने पशुपालन के व्यवसाय को अपनाया। एक वर्ष के दौरान इन्होंने मात्र पांच गायें खरीदी जिनका मौद्रिक मूल्य मात्र 75 हजार रुपये था। वर्ष 2008 में उनका व्यवसाय बढ़कर 2.5 लाख रु. हो गया है। वर्तमान समय में औसत दूध उत्पादन 70 ली./दिन है जिससे लगभग 12000 रु. प्रति महीना बचत होती है। श्री नरेन्द्र सिंह को उ.प्र. सरकार द्वारा वर्ष 2004-05 एवं 2005-06 का गोकुल पुरस्कार प्रदान किया गया। कई बार इन्होंने पशु प्रदर्शनियों में प्रथम पुरस्कार प्राप्त कर क्षेत्र के लोगों को प्रोत्साहित किया। श्री पटेल के भागीरथ प्रयास से अब क्षेत्र में कई लोग पशुपालन को व्यावसायिक स्तर पर अपना रहे हैं।

श्री पटेल को यूं ही अचानक सफलता नहीं मिली इसके लिए उन्होंने काफी अध्ययन और मेहनत की।

- पशुपालन के साथ ही श्री पटेल ने पशुओं में होने वाले रोगों की जानकारी प्राप्त की।
- समय-समय पर पशुओं की चिकित्सीय जांच करवायी।
- होम्योपैथी चिकित्सा पद्धति को स्वयं पढ़कर एवं अनुभव द्वारा रोगों का उपचार किया जिससे पशुओं का प्राथमिक उपचार घर पर ही संभव हो सका।
- गौशाला में प्रत्येक पन्द्रह दिन पर कीटनाशकों का छिड़काव कर पशुओं को होने वाले रोगों से दूर रखा।

- सदैव कृत्रिम गर्भाधान द्वारा अच्छी नस्ल की गायें प्राप्त की।
- पशुओं के अच्छे स्वास्थ्य के लिए सदैव मिनरल मिक्स्चर दिया।
- पशुओं में कैल्शियम की कमी को दूर करने के लिए चारे को चूने के पानी में मिलाकर देना।
- पशुओं को लगभग सदैव हरा चारा उपलब्ध कराना।
- पूरे परिवार का सक्रिय सहयोग प्राप्त होना।
- पशुओं से प्राप्त गोबर का प्रयोग जैव उर्वरक के रूप में खेतों में करना जिससे खेतों की उर्वरकता में वृद्धि हुई तथा रासायनिक खाद पर होने वाले व्यय में बचत आयी।
- गोमूत्र का खेतों में कीटनाशक के रूप में प्रयोग करना।

श्री नरेन्द्र सिंह पटेल

श्री नरेन्द्र सिंह की भावी योजना ग्रामीण सहभागिता से एक बायोगैस प्लांट का निर्माण करने की है। इस प्लांट के लगने से जहां एक ओर ईंधन की समस्या दूर होगी वहीं महिलाओं को किचन किलर रूपी धुएं से निजात मिलेगी।

इसलिए कृषकों के लिए पशुपालन अतिरिक्त आय का अच्छा साधन हो सकता है। गांव में सहकारी डेयरी होने से दूध की बिक्री की समस्या नहीं रहती है। श्री नरेन्द्र सिंह पशुपालन से स्वयं लाभ ले रहे हैं। साथ ही अन्य किसान भी पशुपालन अपनाते हेतु प्रेरित हो रहे है। श्री अरूण कुमार कुशवाहा के शब्दों में "श्री पटेल से प्रेरित होकर मैंने कृत्रिम गर्भाधान जैसी वैज्ञानिक पद्धति अपनाकर एक देशी गाय से अच्छी नस्ल की गाय प्राप्त की।" इसी तरह कई लोग प्रोत्साहित होकर पशुपालन को व्यावसायिक स्तर पर प्रारंभ कर रहे हैं। श्री पटेल होम्योपैथिक ज्ञान होने के कारण किसानों को निःशुल्क चिकित्सकीय परामर्श भी देते हैं। इनका दावा है कि "मनुष्य केवल दूध पीकर सिर्फ जीवित ही नहीं अपितु पूर्णतः स्वस्थ रह सकता है।" हम आशा करते हैं, इनकी भावी योजनाएं सफल होंगी जिनसे गांव, क्षेत्र एवं प्रदेश का निरन्तर विकास होता रहेगा।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

पशुपालन से होने वाले सामाजिक लाभ

- श्री पटेल गाय के मरने के बाद ब्लॉक में स्थित पशु विच्छेदन गृह को सूचित करते है जहां पर पशु के चमड़े को शोधित कर जूते, बैग आदि का निर्माण किया जाता है तथा अस्थिओं से उर्वरक बनाया जाता है। इस प्रक्रिया द्वारा पर्यावरण को भी नुकसान नहीं पहुंचता है।
- गोबर गैस प्लांट से प्राप्त गोबर अधिक उर्वर होता है।
- गांव से शहर की ओर ग्रामीण पलायन में कमी आती है जिससे शहरी समस्या से निजात पाने में मदद मिलती है।
- गायों के सम्पर्क में रहने, शुद्ध दूध व खीस का सेवन करने से रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है।

उन्नाव जनपद की बहुतायत भूमि ऊसर होने के कारण नकदी फसलों का उत्पादन अपेक्षाकृत कम होता है

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता
विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड–4, तल–7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

गांधी जयंती पर विशेष

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में गांधीयन मॉडल की भूमिका

कन्हैया त्रिपाठी

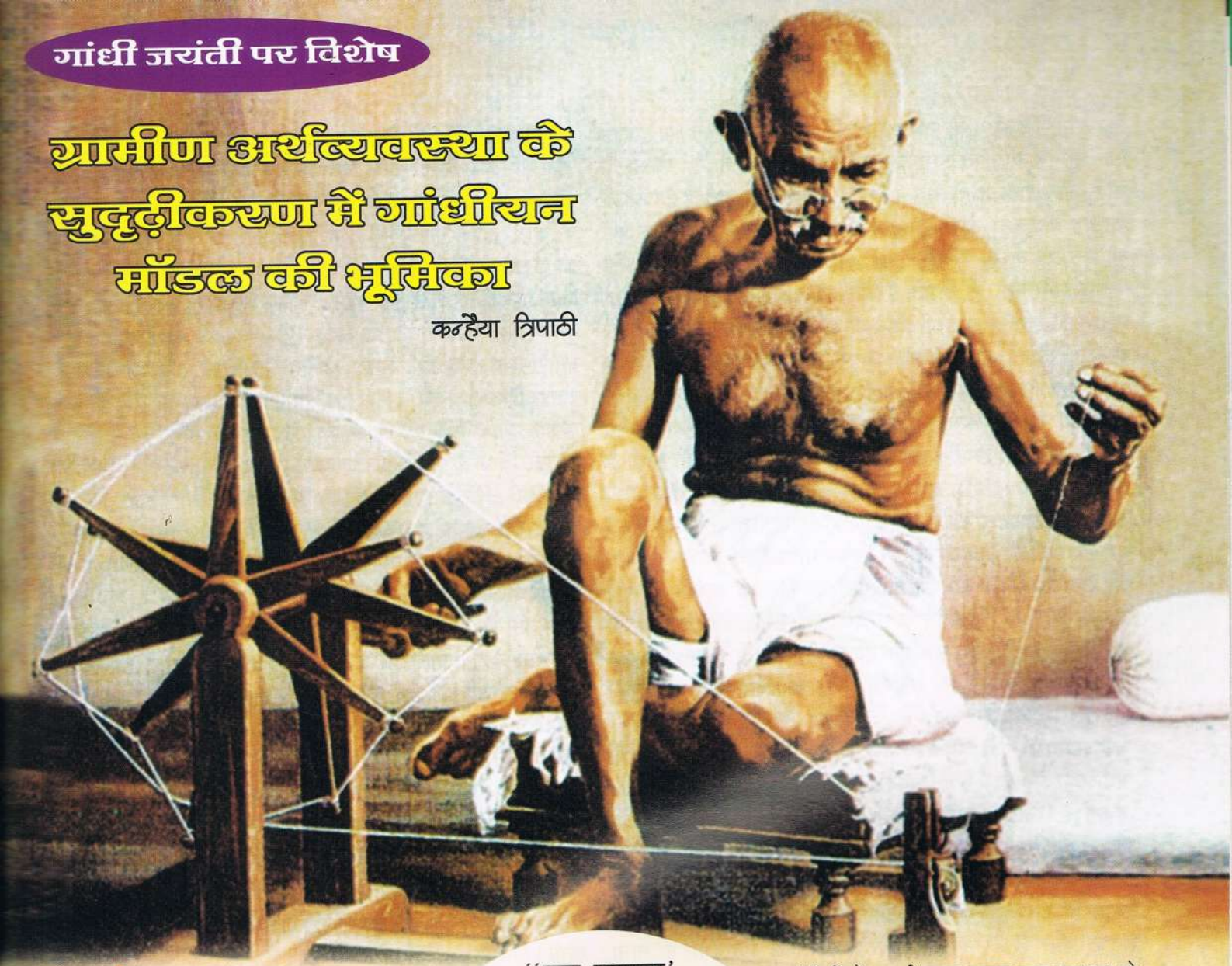

गांधीजी अपनी मृत्यु से एक दिन पूर्व 29 जनवरी, 1948 को अपने 'आख़िरी वसीयतनामा' में लिखते हैं, "शहरों और कस्बों से भिन्न उसके (हिन्दुस्तान के) सात लाख गांवों की दृष्टि से हिन्दुस्तान की सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आज़ादी हासिल करना अभी बाकी है (दृष्टव्यः हरिजन सेवक, 22 फरवरी, 1948)।" यानी एक चीज स्पष्ट है कि गांधीजी 15 अगस्त, 1947 को मिली आजादी में गांवों को भी आजादी प्राप्त हुई, ऐसा नहीं मानते। फिलहाल उनके स्वराज्य की बात की जाए। हरिजन सेवक के ही 2 अगस्त, 1942 के अंक में गांधीजी ने अपनी कुछ इच्छा ग्राम स्वराज के विषय में प्रकट की जिसका वर्णन किया गया है। इस प्रकार गांधीजी का जो गांव है उसका सौन्दर्य बघारते मन नहीं अघाता। गांधीजी ने इसके अतिरिक्त जो गांव की आवश्यकता विचारी वह एक 'सम्पूर्ण गांव' का आधार है। मसलन नाटकशाला, पाठशाला, सभा भवन, शुद्ध पान हेतु 'वाटर वर्क्स, कुएं, तालाब आदि । इसके साथ ही वह कहते हैं कि "जात–पात और क्रमागत अस्पृश्यता जैसे भेद आज हमारे समाज में पाए जाते हैं, वैसे इस ग्राम समाज में बिल्कुल नहीं रहेंगे।"

''ग्राम–स्वराज्य' की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा और फिर बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिसमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वह परस्पर सहयोग से काम लेगा। इस तरह हर एक गांव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरत के अनाज और कपड़े के लिए कपास खुद पैदा कर ले। उसके पास इतनी सुरक्षित जमीन होनी चाहिए, जिसमें ढोर (जानवर) चर सके और गांवों के बड़ों और बच्चों के लिए मन बहलाव के साधन और खेलकूद के मैदान वगैरा का बन्दोबस्त हो सके। इसके बाद भी जमीन बची तो उसमें वह ऐसी उपयोगी फसल बोएगा, जिन्हें बेचकर वह आर्थिक लाभ उठा सके।'' – महात्मा गांधी

ग्रामीण प्रबंधन के मर्मज्ञ गांधीजी का यह 'विज़न' वास्तव में एक 'सम्पूर्ण ग्राम स्वराज्य' का स्ट्रक्चर खड़ा करता है। किसी भी गांव की खुशहाली के सूत्र सम्पूर्ण सम्पन्नता में होते हैं। गांधीजी का यह मॉडल न केवल ग्राम समाज की आवश्यक आवश्यकताओं की भरपायी करता है बल्कि यह कहा जाए कि गांधी आदर्श गांव 'समग्र सम्पन्नता' में देखते हैं और 'गैरबराबरी के खात्मे में,' तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। अस्पृश्यता जैसी समस्या से छुटकारे के लिए उनकी अपील इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। देश भर में नमक आन्दोलन हो या 1942 में चरखे व खादी से सबको जोड़ने के प्रयास, गांधी जी ने यह सिद्ध किया कि सामाजिक व आर्थिक आजादी हमारे 'समभाव' में छुपे हुए हैं। उसमें ही गांधीजी सम्भावनाएं देखते हैं जहां पर गैर–बराबरी मिट जाए और सभी समान उन्नति कर रहे हो। गांधीजी की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण की अवधारणा इन असमानताओं के खात्मे के बाद नई समानताओं को उद्‌भूत करती हैं क्योंकि जब प्रत्येक के हांथ में काम होगा, सभी अपने कर्म करेंगे तो सभी की उन्नति होगी वर्‌ना यदि अछूत के नाम पर एक बड़ी आबादी अपनी आर्थिक सम्पन्नता से वंचित रह जाएगी तो कदाचित हम समृद्ध हो सकेंगे।

'सर्वोदय' की अवधारणा यही है। सर्वोदय का अर्थ गांधी जी के शब्दों में – सबकी उन्नति, सबका विकास, सबका उत्कर्ष है। जाहिर–सी बात है सबकी उन्नति, सबका उत्कर्ष और सबका विकास समतामूलक समाज में सम्भव है। समतामूलक समाज की परिकल्पना गांधीजी गांव के सभ्य समाज में ही देखते हैं जो सहज संस्कृति और सामान्य आर्थिक सम्पन्नता में संतुष्ट होते हैं। उनके हिसाब से ग्लैमरस जिन्दगी में नाना प्रकार के लोभ होते है किन्तु गांव का किसान–मजदूर अपने छोटे उद्योगों से उपार्जित धन में अपना परिवार अहिंसक तरीके से चला लेता है। उसे न धन संचय में ज्यादा अभिरुचि होती है और न ही धन पशु बनने की लालसा । वह समन्वय और सहयोग में रुचि लेता है। प्रेम व अनुराग का अद्‌भुत आदान–प्रदान करता है। ऐसे 'शिष्ट समाज' के लिए गांधीजी की फिलॉसफी ने उसके नए विकास मॉडल को समृद्ध करने हेतु कुछ अपनी दृष्टि दी है जो न केवल उसको आर्थिक समृद्धता प्रदान करते हैं बल्कि पूर्णतया आध्यात्मिक व नैतिक भी बनाते हैं जो आधुनिकता ने नहीं दिया। तथा –

- लघु एवं कुटीर उद्योग,
- नई बुनियादी तालीम,
- ग्रामीण विपणन व्यवस्था,
- उन्नत कृषि कर्म तथा
- गोसेवा

गांव व गरीब के लिए यह सभी वरदान है। इसे 'स्वराजिस्ट–इकोनॉमिक–मॉडल' नाम दिया जा सकता है। दरअसल, गांधी जी का यह मानना था कि जब छोटे–छोटे उद्योग जिसमें लकड़ी के कार्य, कपड़े की बुनाई तथा छोटे–छोटे औजारों के कार्य होंगे तो इससे व्यक्ति स्वावलम्बी होगा। स्व–उद्यम के द्वारा व्यक्ति अपनी आर्थिक गुलामी से मुक्ति पा लेगा। दूसरी चीज, नयी बुनियादी तालीम इन छोटे लघु, कुटीर उद्योगों तथा स्वावलम्बन की पाठशाला होगी। इससे व्यक्ति किसी भी तरह उन्नति की समझ विकसित करेगा। तीसरा, ग्रामीण विपणन की व्यवस्था की परिकल्पना जो गांधीजी ने दी, उसके भी महत्व थे। उनका मानना था कि छोटे–छोटे हाट जब दो–चार गांव मिलकर विकसित कर लेंगे तो निश्चित ही जरूरत की चीजें गांव के लोगों को मुहैया हो जाएंगी तथा उत्पादन का मूल्य भी लोगों को समझ में आएगा। चौथा, उन्नत कृषि कर्म के पीछे गांधी जी का विचार यह था कि इससे मनुष्य एक तो श्रम करेगा तथा दूसरे श्रम से उत्पादित वस्तुएं देश की तरक्की में अपना महत्वपूर्ण योगदान देंगी। गांधीजी जो गो–सेवा की बात करते हैं वह भी किसान व सर्वहारा वर्ग की आर्थिक समृद्धता से जुड़ी चीज थी। हम जानते हैं कि सेवा कर्म से व्यक्ति में सहयोग की प्रवृत्ति जन्म लेती है, इससे यह भी फायदे होंगे। इस प्रकार गांधी जी की यह अवधारणाएं आर्थिक विकास की तो अवधारणा थी ही, साथ ही जो मेरी समझ में आता है वह यह थी कि गांधीजी यह समझते थे कि नियो–डेवलपमेंण्ट मॉडल में ग्राम्य विकास की नीतियां जब लागू होंगी तो राज्य गांव की उनकी आजादी को ध्यान में रखकर ही नीतियां तैयार करेगा जिसमें यह सब व्यवस्थाएं होंगी।

आजादी के छः दशक बाद हम 11वीं पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से लाभान्वित हो रहे हैं। सरकार ने वेल्फेयर पॉलिसीज के तहत ही छोटे उद्योगों, जो गांधी जी के विकास का प्राथमिक मॉडल था, को बढ़ावा दिया है। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय द्वारा स्थापित राष्ट्रीय उद्यमिता विकास संस्थान से प्रकाशित रिपोर्टें इसका जबर्दस्त उदाहरण हैं। इस संस्थान से प्रशिक्षित लोग न केवल प्रशिक्षण प्राप्त किए हैं बल्कि स्व–उद्यमी बनकर अपने जीवन में नया सवेरा भी कायम करने में कामयाब हुए हैं। खादी ग्रामोद्योग आयोग और कॅयर बोर्ड के माध्यम से खादी, ग्रामोद्योग एवं कॅयर क्षेत्र के विकास एवं सवर्धन के लिए भी विभिन्न योजनाएं चलायी जा रही हैं। खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग क्षेत्र को सुदृढ़ करने और रोजगार सृजित करने के लिए योजनाएं, ब्याज, सब्सिडी पात्रता प्रमाणपत्र योजना, उत्पाद विकास, डिजाईन मध्यस्थता एवं पैकेजिंग, ग्रामीण उद्योग सेवा केन्द्र, खादी कारीगर, जनश्री बीमा योजना इत्यादि का

कार्यान्वयन कर रहा है। एक रिपोर्ट के मुताबिक खादी एवं ग्रामोद्योग क्षेत्र में अनुमानित 11.18 लाख रोजगार के अवसर सृजित हुए हैं जिसमें खादी क्षेत्र में 9.15 लाख तथा ग्रामोद्योग क्षेत्र में 10.03 लाख का आंकड़ा शामिल है।

गांधीजी ने प्रथम बार जब खादी को भारत में अपनाने पर बल दिया था तो सोचा भी न होगा कि हम एक ऐसी क्रांति का बिगुल बजाने जा रहे हैं जो लाखों लोगों के मुंह का निवाला बन जाएगा। सरकार ने गांधीयन मॉडल का जहां भी कहीं प्रयोग किया, उसके बहुत ही अच्छे परिणाम आए। सरकार की चरखा योजना का ही हम उदाहरण लें। खादी उद्योग और कारीगरों की उत्पादकता और उनकी प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाने के लिए एक अन्य योजना को हाल ही में स्वीकृति दी गयी जिसके अन्तर्गत 200 संस्थाओं के चरखे और करघे को बदलने तथा खादी उद्योग को अधिक प्रतियोगी और लाभप्रद बनाने के लिए 84 करोड़ रुपये की सहायता हुई, इसका मायने ही हुआ कि सरकार के जेहन में गांधीयन मॉडल के प्रसार की चिंता है। उसकी उपयोगिता, उपादेयता और अवदान की समझ है। सरकार ने महिलाओं के सशक्तिकरण की बात स्वीकार की है। यह उसकी रिपोर्ट में अंकित है कि कृषि आधारित, पारिश्रमिक, श्रम–गहन, निर्यात उन्मुखी उद्योग है जिसमें 80 प्रतिशत महिलाएं कार्यरत हैं। निःसंदेह यह महिलाओं के सशक्तिकरण का एक जबरदस्त अभियान है जो सफल हुआ है।

भारत की राष्ट्रपति प्रतिभा देवीसिंह पाटील ने 14 अगस्त, 2007 को राष्ट्र को संबोधित संदेश में महात्मा गांधी को याद करते हुए यह बात दुहराई थी कि ''राष्ट्रपिता गांधी ने एक बार कहा था 'महिलाओं का सशक्तिकरण ही भारत को शिखर पर पहुंचा सकता है।'' हमारी सरकारें इसके लिए प्रतिबद्ध हैं, इससे बड़ी खुशी क्या हो सकती है। लेकिन 19 नवम्बर 2007 के अभिभाषण में वह कहती हैं कि नवीनीकरण प्रगति की कुंजी है। आज प्रारम्भ किया गया इलैक्ट्रानिक चरखा खादीकर्मियों की सहायता के लिए बहूद्देशीय उपयोग वाला एक ऐसा ही नवीन उपयोग है। हमें गांवों और लघु उद्योग क्षेत्र में ऐसे अनेक नवीन अनुसंधानों और उसके विकास पर ध्यान देना चाहिए। ग्रामोद्योग को भी नए कृषि आधारित उत्पादों के उत्पादन के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जिन्हें देशी और विदेशी बाज़ारों में बेचा जा सके।' उनका मानना है कि हमें सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों की भूमिका पर ध्यान देना चाहिए जो रोजगार देने वाले हों और जिन्हें व्यापक प्रादेशिक विस्तार दिया जा सके।

ग्रामीण क्षेत्रों के निकट स्थापित होने से यह स्थानीय जनसंख्या के लिए रोजगार उपलब्ध करवाने में सफल होंगे। महात्मा गांधी ने कहा था कि, भारत की आत्मा गांवों में बसती है। आज हमें ग्रामीण उद्योगों और निरन्तर ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देकर इस सत्य को सम्मान और पहचान देनी चाहिए।

खादी हमारे अन्तःकरण की भावनाओं का हिस्सा, आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरता का प्रतीक है। खादी एवं ग्रामोद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने का माध्यम है एवं इसमें रोजगार की विपुल संभावनाएं हैं।

कहना गलत न होगा कि देश की महामहिम राष्ट्रपति ने जो संभावनाएं देखी हैं वह गांधीयन डेवलपमेण्ट मॉडल का स्वप्न है इसको बढ़ावा देने के लिए सरकार की प्रतिबद्धता जितनी जरूरी है उतना ही आवश्यक यह है कि शहरी तंग ज़िन्दगी की व्यामोह से छुटकारा पाने की आकांक्षा रखने वाली जनता को इस दिशा में और कैसे प्रगाढ़ता से जोड़ा जा सकता है, उस पर भी विचार हो। इसका प्रमुख कारण यह है कि गांव जिस कारण आज बचे हुए हैं वह हमारी प्राकृतिक सहजता का प्रतिफल है। प्रकृति से लगाव का प्रतिफल है। गांधी आधुनिक मशीनीकरण की सभ्यता से सामान्य जनता का सम्पर्क सिर्फ़ इतना चाहते हैं जितने से उसके ज्ञान में इजाफा हो। वह बड़े उद्योग जो हिंसा का गर्भगृह हैं, उससे गांव को न जोड़ना चाहते हैं और न आर्थिक सुदृढ़ता चाहते हैं। गांधी का सहज गांव आर्थिक विकास की नई नीति में खादी व चरखा से उस आध्यात्मिक गांव की तस्वीर पेश कर रहा है जो अहिंसा और सर्वोदयी समाज की अवधारणा पर आधारित होंगे। महामहिम राष्ट्रपति महोदय के इस ओर सुदृढ़ता से उठाए जाने वाले कदम के लिए अपील इसका संकेत है कि गांधी का विकास मॉडल ज्यादा देर के लिए टिकाऊ व अहिंसक हैं और इस पर हमें अमल करने की आवश्यकता है।

अब यह निर्भर करता है कि हम एक अहिंसक गांव की अहिंसक अर्थव्यवस्था के पक्षघर बनते हैं या फिर ग्लैमर में खो जाना पसन्द करते हैं जहां हमारी कीमत बाज़ार और उपभोक्ता के रूप में आंकी जाती है। इसके आलोक में यह कहना युक्तिसंगत लगता है कि हमें गांधी की अर्थव्यवस्था की ओर सक्रियता से बढ़ना होगा जो मनुष्य की गरिमा को प्रतिष्ठित करती है और एक प्रकार से मानवाधिकारों से आच्छादित भी करती है। एक नई सुबह की शुरुआत हमारे विवेक पर निर्भर करती है। अब यह निर्भर है हमारे विवेक पर कि हम अपने गांव में सह–अस्तित्व, सदभावना और प्रेम चाहते है, हम अपने गांव में अहिंसक छोटे सरोकारों की इण्डस्ट्री से अपने जीवन को उन्नत बनाना चाहते हैं अथवा अपने गांव की अस्मिता को बिल्कुल खत्म कर देना चाहते हैं। उम्मीद गांधीयन डेवलपमेंण्ट मॉडल और उसकी अहिंसक अर्थव्यवस्था में है तो निश्चित ही हम उसमें अपना उत्कर्ष तलाशेंगे।

(लेखक महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हैं।)
ई–मेल : kanhaiyatripathi@yahoo.co.in

बढ़ते बुजुर्ग घटती सुरक्षा

डा. उमेश चन्द्र अग्रवाल

समय के साथ संयुक्त परिवारों के बिखराव व एकल परिवारों के उदय ने बुजुर्गों में एक प्रकार की रिक्तता पैदा करना शुरू कर दिया है। बुजुर्गों के मामले में समस्या केवल उनके लालन–पालन की या उनके लिए गुजारा भत्ता सुनिश्चित करने तक ही सीमित नहीं है बल्कि उनके स्वास्थ्य एवं मनोरंजन के लिए संस्थागत उपाय करने के अलावा उनकी भावनात्मक जरूरतों को पूरा करने और उससे भी बढ़कर बुढ़ापे में भी उन्हें सक्रिय बनाए रखने और उनके जीवन को अर्थपूर्ण बनाए रखने की है।

विश्व भर के अधिकांश भागों में एक तरफ पोषण की सुधरती स्थिति, स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार तथा सभी क्षेत्रों में शिक्षा और मीडिया की जनसामान्य तक पहुंच और दूसरी तरफ स्वास्थ्य के प्रति लोगों की बढ़ती जानकारी और चेतना के चलते मृत्युदर में निरन्तर कमी हो रही है जिस कारण पिछले कुछ वर्षों में आनुपातिक तौर पर पूरे विश्व में ही वृद्ध नागरिकों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हो रही है। भारत में भी अच्छी चिकित्सकीय सुविधाओं की व्यवस्था, खाद्यान्न और पोषण की समुचित उपलब्धता और तेजी से होते आर्थिक सुदृढ़ीकरण ने देशवासियों की जीवन प्रत्याशा को तुलनात्मक रूप से काफी बढ़ा दिया है जिसके परिणामस्वरूप पिछले चार–पांच दशकों में भारत में भी बुजुर्गों की संख्या में तेजी से बढ़ोतरी हुई है। "सेन्टर फॉर सोशल रिसर्च" की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में वर्तमान में बुजुर्गों की संख्या 9 करोड़ से भी अधिक होने का अनुमान लगाया गया है और बताया गया है कि यहां यदि वृद्धिदर यही रही तो वर्ष 2011 तक देश में 11 करोड़ 26 लाख वृद्ध होंगे जो कि देश की सम्पूर्ण आबादी का नौ प्रतिशत होंगे।

आजादी के समय अर्थात वर्ष 1951 की जनगणना के मुताबिक भारत में वृद्ध व्यक्तियों की संख्या मात्र एक करोड़ 95 लाख थी जो कुल आबादी का 5.41 प्रतिशत हिस्सा मात्र थी। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में यदि देखें तो "विश्व स्वास्थ्य संगठन" द्वारा हाल ही में प्रकाशित की गई एक रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान में विश्व में वृद्ध नागरिकों की संख्या 60 करोड़ के करीब है जो वर्ष 2021 तक 100 करोड़ तक पहुंच जाने के कयास लगाए गए हैं। पिछले 50 वर्षों में पूरे संसार में जीवन प्रत्याशा की दर में औसतन 20 वर्ष की वृद्धि हुई है। आज विश्व में प्रत्येक 10 लोगों में से 1 व्यक्ति 60 वर्ष अथवा उससे अधिक आयु का है। औसत आयु में इसी गति से हो रही वृद्धि दर से अगले 50 वर्षों में अर्थात वर्ष 2060

* भारत सहित पूरे विश्व में एक अक्टूबर को 'वृद्धजन दिवस' मनाया जाता है।

तक प्रत्येक 10 व्यक्तियों में से 5 व्यक्ति 60 वर्ष अथवा उससे अधिक आयु के होंगे।

वर्तमान जनसांख्यिकी आंकड़ों से यह भी स्पष्ट होता है कि सम्पूर्ण विश्व में बुजुर्ग पुरुषों की तुलना में बुजुर्ग महिलाओं की संख्या अधिक है और इस अनुपात में भी बढ़ोतरी ही हो रही है। "हेल्थ एज" द्वारा हाल ही में प्रकाशित की गई रिपोर्ट से यह तथ्य भी उभरकर आया है कि इस शताब्दी के प्रारम्भ में दुनिया में 100 वर्ष की उम्र वाले लोगों की संख्या मात्र 13 लाख थी जबकि आज अकेले भारत में ही इनकी संख्या 15 लाख है। इस रिपोर्ट में वर्ष 2050 तक सम्पूर्ण विश्व में सौ बरस के लोगों की कुल संख्या 33 लाख तक पहुंच जाने के अनुमान भी लगाए गए हैं। इस सम्बन्ध में यह तथ्य भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि पश्चिमी देशों में बुजुर्गों के लिए उपयुक्त व्यवस्थाएं तथा सुरक्षा योजनाओं के फलस्वरूप वहां उनकी वर्तमान औसत आयु विश्व भर की औसत आयु से अधिक अर्थात 80 वर्ष है और अनुमान है कि वर्ष 2080 तक यह बढ़कर 100 वर्ष तक पहुंच जाएगी। वर्तमान में उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार यूरोप दुनिया का सबसे बूढ़ा महाद्वीप है जहां वृद्धों की संख्या कुल जनसंख्या का लगभग पांचवां भाग है।

भारत में लोगों की औसत आयु 100 साल पहले जहां करीब 25 वर्ष थी वह अब बढ़कर करीब 65 वर्ष हो गई है और मृत्युदर प्रति हजार में 25 से घटकर 8 रह गई है जिसके फलस्वरूप वर्तमान में प्रत्येक 12 भारतीयों के पीछे एक वृद्धजन का अनुपात हो गया है। वृद्धों की जनसंख्या के सन्दर्भ में भारत आज विश्व का दूसरा सबसे बड़ा देश हो गया है। यहां 80 लाख लोग 80 वर्ष की आयु पूरी कर चुके हैं। करीब 2.9 करोड़ बुजुर्ग लोग 70 वर्ष से ऊपर की आयु के हैं। बदलता हुआ सामाजिक परिवेश एवं पारिवारिक संरचना वृद्धों के जीवन को कठिन बनाता जा रहा है। हाल ही में किए गए एक अध्ययन के अनुसार देश के शहरी क्षेत्रों में 64 प्रतिशत बुजुर्ग महिलाएं और 46 प्रतिशत बुजुर्ग पुरुष अपनी मूलभूत आवश्यकताओं के लिए भी पूर्ण रूप से दूसरों पर निर्भर पाए गए हैं।

भारत सहित पूरे विश्व में 1 अक्टूबर को "वृद्धजन दिवस" मनाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 1982 में ही इस समस्या को पहचान कर वरिष्ठ नागरिकों के लिए एक सार्वभौमिक नीति बनाने की पहल की गई थी। उसके बाद से दुनिया के अनेक देशों के साथ भारत में भी इस दिशा में कुछ जागरुकता बढ़ी और इस दिशा में सरकार द्वारा कुछ छुटपुट योजनाएं और कुछ आर्थिक सहायता व सशक्तिकरण सम्बन्धी कार्य शुरू किए, हालांकि इनका प्रभाव बहुत कम क्षेत्रों और पहुंच बहुत कम लोगों तक ही हो सकी। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वर्ष 1999 को "वरिष्ठ लोगों के देखभाल वर्ष" के रूप में मनाते हुए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वृद्ध लोगों के कल्याण और सुरक्षा के लिए दुनिया के लोगों का ध्यान आकर्षित करने और इस दिशा में उपयोगी प्रयास करने के उद्देश्य से वृद्धों के लिए समर्पित किया गया। हमारे देश में भी पहली बार वृद्धों की बढ़ती हुई समस्याओं के प्रति सोचने और उनके निराकरण के लिए समुचित उपाय करने हेतु सभी देशवासियों का ध्यान आकर्षित करने के पुनीत उद्देश्य से सरकार द्वारा वर्ष 2000 को "राष्ट्रीय वृद्ध वर्ष" के रूप में मनाया गया। इसके बाद से जरूरतमंद वृद्धजनों के लिए विशेष रूप से कारगर उपाय किए जाने पर जोर दिया गया है। इसी क्रम में पिछले कई वर्षों से हमारे यहां सरकार द्वारा तथा स्वयंसेवी संगठनों और त्रिस्तरीय पंचायतों के माध्यम से उन्हें सामाजिक–आर्थिक रूप से सशक्त बनाने तथा समुचित संरक्षण प्रदान करने हेतु अनेक उपयोगी कदम भी उठाए गए हैं।

इस तथ्य से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि हमारे देश में पिछले कुछ दशकों तक भारतीय समाज के आदर्शों और मूल्यों के अनुरूप अपने परिवारजनों के अतिरिक्त समाज के द्वारा भी वृद्धजनों को समुचित आदर, उचित देखभाल, पर्याप्त संरक्षण और सहायता प्रदान करने पर विशेष रूप से बल दिया जाता रहा है लेकिन साथ ही साथ यह भी सत्य है कि वर्तमान में तेजी से बदलती सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों, संयुक्त पारिवारिक प्रणाली के विघटन, विदेशी संस्कृति का संक्रमण तथा भौतिकता की बढ़ती दुष्प्रवृत्ति ने हमारे अनेक वरिष्ठजनों को एकाकीपन के साथ–साथ सामान्य जीवन जीने हेतु जरूरी आवश्यकताओं तक को पूरा करने के लिए बेबस बना दिया है। ऐसी परिस्थितियों के मद्देनजर वैसे तो सरकार द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से ही वरिष्ठ जनों के कल्याण व उनके संरक्षण के लिए धीरे–धीरे विभिन्न व्यवस्थाओं को निर्धारित करते हुए उनके समुचित क्रियान्वयन का प्रयास किया जाता रहा है।

भारत में कुल वृद्ध नागरिकों की संख्या वर्ष 2011 तक 11.26 करोड़ तक पहुंच जाने का अनुमान हैं। वर्तमान में यह संख्या 9 करोड़ के करीब है। चिन्ता का विषय यह है कि जिस तीव्र गति से भारत में वृद्ध नागरिकों की संख्या बढ़ रही है, उस अनुपात में उनकी समुचित देखभाल हेतु सुविधाओं में वृद्धि नहीं हो पा रही है जिसके लिए तेजी से कदम उठाए जाने की आवश्यकता है।

सरकार द्वारा वृद्धों की पारिवारिक और आर्थिक समस्याओं को देखते हुए क्रिमिनल प्रोसीजर कोड (सी.आर.पी.सी.) तथा प्रतिपालन एवं निर्वाह अधिनियम (एडॉप्शन एण्ड मेंटीनेन्स एक्ट) में भी कुछ वर्ष पहले ही आवश्यक संशोधन करते हुए सन्तान को वृद्ध माता–पिता के भरण–पोषण का उत्तरदायित्व उठाने के लिए कानूनी रूप से बाध्य किया गया है जिससे बुजुर्गों को वृद्धावस्था में भरण–पोषण की समुचित व्यवस्था सुनिश्चित हो सके। साथ ही सरकार द्वारा कुछ विशिष्ट योजनाओं का संचालन भी इन लोगों की विशिष्ट परिस्थितियों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया गया है। हाल के वर्षों में संचालित की गई ऐसी कुछ विशेष योजनाओं में–अन्नपूर्णा योजना (2001), वरिष्ठ नागरिक

वरिष्ठजनों के लिए प्रमुख योजनाएं

क्र.स.	प्राविधान/कार्यक्रम	वर्ष	उद्देश्य
1.	भारतीय संविधान का अनुच्छेद 41	1950	राज्य द्वारा बुढ़ापा, बीमारी और निःशक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता प्रदान कराने का उपबन्ध किया जाना।
2.	एडोप्शन एण्ड मेन्टीनेंस एक्ट की धारा 20	1956	वरिष्ठ नागरिकों द्वारा अपने बच्चों से भरण–पोषण की मांग किए जा सकने के प्रावधान निर्धारित करना।
3.	क्रिमिनल प्रोसीजर कोड की धारा 125	1973	बच्चों द्वारा अपने माता–पिता को भरण–पोषण दिए जाने की बाध्यता का निर्धारण करना।
4.	वृद्धों हेतु समन्वित कार्यक्रम	1986	वृद्धों के कल्याणार्थ विविध सेवाओं को उपलब्ध कराने हेतु स्वयंसेवी संगठनों को लागत का 90 प्रतिशत आर्थिक अनुदान उपलब्ध कराना।
5.	वृद्धजनों हेतु राष्ट्रीय परिषद	1997	वृद्ध व्यक्तियों के कल्याण हेतु नीति तैयार करने तथा कार्यक्रमों के क्रियान्वयन आदि पर सरकार को सलाह देना।
6.	वृद्धों हेतु राष्ट्रीय नीति	1999	वरिष्ठजनों के प्रति परिवार, समाज व सरकार के योगदान व उत्तरदायित्व को दिशा प्रदान करना।
7.	अन्नपूर्णा योजना	2001	निराश्रित वृद्धों को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने हेतु निःशुल्क खाद्यान्न उपलब्ध कराना।
8.	वरिष्ठ नागरिक बचत योजना	2004	पोस्ट ऑफिस व बैंकों के माध्यम से वृद्ध लोगों को उनकी बचत पर एक निश्चित रिटर्न देकर उन्हें आर्थिक सुरक्षा प्रदान करना।
9.	रिवर्स मोर्टगेज योजना	2007	60 वर्ष व इससे अधिक आयु के वरिष्ठजनों को उनके आवास को बन्धक बनाकर प्रतिमाह समानुपातिक रूप से आजीवन धनराशि उपलब्ध कराना।
10.	माता–पिता व वरिष्ठ नागरिक भरण–पोषण और कल्याण अधिनियम	2007	बच्चों द्वारा माता–पिता व वरिष्ठजनों को उनकी देखभाल व संरक्षण के लिए कानूनी रूप से उत्तरदायी बनाना।
11.	वरिष्ठ मेडीक्लेम योजना	2008	60 से 90 वर्ष तक के वृद्धजनों के लिए विशिष्ट मेडीक्लेम की बीमा सुविधा प्रदान करना।
12.	इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेन्शन योजना	2008	65 वर्ष या इससे अधिक आयु के सभी गरीब वृद्धों को नियमित मासिक पेंशन देकर आर्थिक–सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना।
13.	विशिष्ट नूतन सुविधाएं		आयकर की न्यूनतम सीमा में छूट; मेडीक्लेम पर दिए गए प्रीमियम पर आयकर में छूट; रेलवे/सरकारी बसों/वायु सेवाओं में किराए में छूट; निःशुल्क/रियायती दरों पर चिकित्सा व स्वास्थ्य सुविधाएं; बैंकों में जमाराशियों पर अतिरिक्त ब्याज की सुविधाएं; निःशुल्क/रियायती दरों पर आवासीय सुविधाएं आदि।

बचत योजना (2004), रिवर्स मोर्टगेज योजना (2007), वरिष्ठ मेडीक्लेम योजना (2008), इन्दिरा गान्धी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेन्शन योजना (2008) मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। बुजुर्गों का सम्मान और सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से सरकार द्वारा उन्हें रेल, बस एवं वायुयान किराए में छूट, वरीयता के आधार पर आरक्षण, विभिन्न मेडिकल कॉलेजों और प्रमुख अस्पतालों में वृद्धों के लिए अलग चिकित्सीय विभाग व निःशुल्क/रियायती दरों पर चिकित्सा व्यवस्था, साधनविहीन व आर्थिक दृष्टि से कमजोर वृद्ध नागरिकों हेतु निःशुल्क आवास व्यवस्था, राष्ट्रीयकृत बैंकों में वृद्ध नागरिकों को बचत खातों में जमा धनराशि पर एक प्रतिशत अधिक ब्याज देने जैसे अनेक प्रावधान भी किए गए हैं।

एक विशेष कदम के रूप में 31 दिसम्बर, 2007 को केन्द्र सरकार द्वारा माता–पिता एवं वरिष्ठ नागरिक देखभाल और कल्याण विधेयक को अधिनियमित भी कर दिया गया है। यह कानून जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर देश के सभी अन्य राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में लागू हो गया है। इस प्रकार इस कानून के पारित हो जाने से अब मां–बाप की सेवा करना न केवल बच्चों का नैतिक व सामाजिक कर्तव्य हो गया है, बल्कि भारतीय संविधान द्वारा लागू कानून के अन्तर्गत यदि मां–बाप या वरिष्ठ नागरिक अपनी देखभाल करने में असमर्थ हों तो ऐसे में उनके बच्चों या रिश्तेदारों को उनकी पूरी जिम्मेदारी उठानी होगी। यदि बच्चे ऐसा करने से इन्कार करते हैं तो इसकी शिकायत सम्बन्धित प्राधिकरण से की जा सकती है और वहां से न्याय के रूप में अपने बच्चों/रिश्तेदारों से भरण–पोषण पाने के लिए व्यवस्था कराई जा सकती है।

उल्लेखनीय है कि इस नवीन अधिनियम की धारा–5 के अन्तर्गत यदि मां–बाप या वरिष्ठ नागरिक स्वयं की आय से भरण–पोषण में असमर्थ हैं तो वे अपने बालिग बच्चों या रिश्तेदारों

को अपनी देखभाल न करने की सम्बन्धित कोर्ट से शिकायत कर समुचित न्याय की आशा कर सकते हैं। यदि वे स्वयं आवेदन भेजने में समर्थ नहीं हैं तो उनकी ओर से कोई अन्य व्यक्ति भी यह कार्य कर सकता है। इसके बाद कोर्ट की ओर से बच्चों या रिश्तेदारों को नोटिस भेजकर उन्हें कोर्ट में व्यक्तिगत रूप से भी तलब किए जाने की व्यवस्था रखी गई है। यदि इसके बावजूद वे "मेंटेनेंस अलाउन्स" देने से इन्कार करते हैं तो कोर्ट जुर्माने के साथ–साथ उन्हें जेल की सलाखों के पीछे भी भेज सकता है। दोषी को जेल में कैद रखने की समयावधि को एक माह अथवा तब तक के लिए बढ़ाया जा सकता है जब तक कि वे कोर्ट द्वारा निर्धारित धनराशि का भुगतान करने के लिए राजी न हो जाएं। इस अधिनियम के अन्तर्गत एक खास बात यह भी रखी गई है कि यदि किसी वृद्धजन के बच्चे या रिश्तेदार देश से बाहर भी रह रहे हैं तो भी वे अपनी जिम्मेदारी से पल्ला नहीं झाड़ सकते। अधिनियम के अन्तर्गत कोर्ट द्वारा न्यूनतम और अधिकतम मासिक मेंटेनेंस अलाउन्स का निर्धारण सम्बन्धित राज्य सरकार द्वारा प्रस्तावित राशि के आधार पर ही किए जाने की व्यवस्था रखी गई है, लेकिन यह धनराशि दस हजार रुपये मासिक से अधिक नहीं हो सकती। वरिष्ठ नागरिक की अपनी सन्तान न होने की दशा में उसकी मृत्यु के बाद जो भी रिश्तेदार उनकी सम्पत्ति का वारिस होगा, अधिनियम के अन्तर्गत उसी को देखरेख की जिम्मेदारी उठानी होगी। यदि एक से अधिक दावेदार है तो सभी को मिलकर समान रूप से वरिष्ठ नागरिक को इतनी मासिक धनराशि देनी होगी ताकि वह सामान्य रूप से अपना गुजारा कर सकें। इसके अलावा यदि वरिष्ठ नागरिक को समय से भुगतान नहीं किया जाता है तो 5 प्रतिशत से अधिक और 18 प्रतिशत से कम की ब्याज सहित राशि का भुगतान किए जाने की व्यवस्था भी निर्धारित की गई है।

माता–पिता एवं वरिष्ठ नागरिक देखभाल और कल्याण अधिनियम, 2007 के प्रमुख प्रावधान

- इस अधिनियम के अन्तर्गत 60 वर्ष या इससे अधिक आयु के व्यक्ति को वरिष्ठ नागरिक की श्रेणी में रखा गया है।
- वरिष्ठ नागरिकों में वे अभिभावक भी शामिल किए गए हैं जो अपना गुजारा करने में असमर्थ है। अधिनियम में की व्यवस्थाओं के अनुसार ऐसे व्यक्ति भी अपनी वयस्क सन्तान पर भरण–पोषण का दावा कर सकते हैं।
- इस अधिनियम में कल्याण से आशय वरिष्ठ नागरिकों के लिए भोजन, स्वास्थ्य की देखभाल तथा मनोरंजन केन्द्रों और अन्य आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था सुनिश्चित करने से लगाया गया है।
- अधिनियम के अन्तर्गत सभी राज्य सरकारों द्वारा अपने–अपने राज्य में प्रत्येक सब–डिवीजन के लिए एक या अधिक न्यायाधिकरण (कोर्ट) की आवश्यक रूप से स्थापना किए जाने की व्यवस्था रखी गई है।

- न्यायाधिकरण के प्रमुख के रूप में राज्य के सब–डिवीजनल अधिकारी के स्तर से कम का अधिकारी नहीं रखे जाने की व्यवस्था निर्धारित की गई है।
- अधिनियम में निहित प्रावधानों के अन्तर्गत पीड़ित वरिष्ठ नागरिक या अभिभावक न्यायाधिकरण में अपने गुजारे भत्ते के लिए आवेदन कर सकता है। यदि वह किसी प्रकार से असमर्थ है तो उसके द्वारा नामजद कोई प्रतिनिधि उसकी तरफ से आवेदन कर सकता है।
- कुछ विशिष्ट मामलों में न्यायाधिकरण स्वयं संज्ञान लेकर भी किसी मामले में विचार करने के लिए अधिकृत किया गया है।
- अधिनियम के अन्तर्गत न्यायाधिकरण में दिए गए गुजारे भत्ते के आवेदन पर नोटिस जारी होने के बाद 90 दिनों में मामले का निपटारा कर दिया जाना आवश्यक बनाया गया है।
- न्यायाधिकरण द्वारा किसी मध्यस्थ की मदद से समझा–बुझाकर फैसला कराने के लिए प्राथमिकता के आधार पर प्रयास किए जाने की व्यवस्था रखी गई है।
- इस अधिनियम के अन्तर्गत गठित किए गए न्यायाधिकरण द्वारा मामले की सुनवाई के दौरान किसी भी पक्ष की तरफ से वकील नहीं रखने का प्रावधान है।
- इस अधिनियम में निर्धारित व्यवस्था के अन्तर्गत न्यायाधिकरण द्वारा स्वीकृत किए जाने वाले गुजारे भत्ते की अधिकतम सीमा रुपये 10,000 रुपये प्रति माह तक ही निर्धारित की गई है।
- यदि वृद्धजनों के बच्चे या निकट सम्बन्धी न्यायाधिकरण के आदेश का पालन नहीं करते हैं तो उन्हें एक माह तक की या तब तक की जेल हो सकती है अथवा उस अवधि तक के लिए भी उन्हें जेल में निरूद्ध किया जा सकता है, जब तक कि वे कोर्ट द्वारा निर्धारित किए गए गुजारे भत्ते का भुगतान नहीं करते।

- न्यायाधिकरण में वरिष्ठ नागरिक के बच्चों/रिश्तेदारों की हाजिरी सुनिश्चित करने के लिए न्यायाधिकरण को दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अन्तर्गत प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट जैसे अधिकार प्रदत्त किए गए हैं।
- राज्य सरकारों द्वारा आवश्यकतानुसार अपने–अपने राज्यों में वृद्धाश्रमों की स्थापना और रखरखाव सुनिश्चित किए जाने की व्यवस्था रखी गई है। प्रारम्भ में राज्य के हर जिले में एक ऐसे आश्रय स्थल की स्थापना किया जाना अनिवार्य बनाया गया है जिसमें 150 लोगों के लिए रहने का पर्याप्त स्थान उपलब्ध हो।
- अधिनियम के अन्तर्गत राज्य सरकारों द्वारा यथासम्भव सरकारी अस्पतालों या उसके द्वारा वित्तीय सहायता प्राप्त अस्पतालों में वरिष्ठ नागरिकों के लिए बिस्तर की व्यवस्था सुनिश्चित किए जाने के प्रावधान भी किए गए है।
- अस्पतालों में वरिष्ठ नागरिकों के लिए अलग लाइन रखने के लिए दिशा–निर्देश निर्धारित किए जाने हेतु व्यवस्था रखी गई हैं तथा उनके उपचार की विशेष व्यवस्था के निर्धारण हेतु भी प्रावधान रखे गए हैं।
- जिस व्यस्क परिजन पर वरिष्ठ नागरिक की देखरेख की जिम्मेदारी बनती है यदि वह उसे बेसहारा छोड़ कर अपना दायित्व नहीं निभाता तो उसे तीन माह की जेल और 5,000 रुपये के जुर्माने की सजा दिए जाने के प्रावधान निर्धारित किए गए हैं।

इस अधिनियम में किए गए उपरोक्त विशिष्ट प्रावधानों से देश के उन वरिष्ठ जनों को विशेष रूप से एक आशा की किरण दिखाई दी है जो अपनी सन्तानों से अपना वाजिब हक तो दूर बल्कि उनकी उपेक्षाओं का शिकार होकर एक अभिशप्त जीवन जीने को मजबूर रहे हैं। हालांकि इस सम्बन्ध में इस सत्यता से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि अधिनियम के भली–भांति क्रियान्वित होने से बुजुर्गों को अपनी ही संतानों के अत्याचारों व पूर्ण उपेक्षा से बचाने में मदद अवश्य मिलेगी परन्तु उनके लिए यही पर्याप्त नहीं है। बुजुर्गों को अच्छे आवास स्थल, स्वास्थ्य सेवाओं और भावनात्मक संबल की जरूरत फिर भी बनी ही रहेगी ताकि वे सम्मान के साथ अपने जीवन के शेष वर्षों को बिता सकें। वास्तव में भारत जैसे देश में परिवार ही वह संस्था है जो बुजुर्गों को समुचित देखभाल, सेवा और सम्मान देती रही है। समय के साथ संयुक्त परिवारों के बिखराव व एकल परिवारों के उदय ने बुजुर्गों में एक प्रकार की रिक्तता पैदा करना शुरू कर दिया है। हालांकि एकल परिवारों की कुछ मजबूरियां तो समझ में आने वाली हैं लेकिन बुजुगों की मजबूरियां भी ऐसे परिवारों को आत्मसात करनी चाहिए। इसके अलावा जीवनशैली व जीवन मूल्यों में बदलाव ने भी आज सामान्य तौर पर बुजुर्गों के प्रति उपेक्षा का वातावरण पैदा किया है।

अपने स्वार्थों में लिप्त अनेकों सन्तानें आज अपने संस्कारों को झुठलाकर व परम्पराओं को भुलाकर अपने मां–बाप के प्रति शर्मनाक व्यवहार व क्रूरता का आचरण करते हुए देखी जा रही है। ऐसे उदाहरण भी कम नही है कि मां–बाप की अर्जित सम्पत्ति मिलने के बाद ही सन्तान की तरफ से उनकी उपेक्षा का सिलसिला शुरू हो जाता है। सम्पत्ति के लालच में मां–बाप को प्रताड़ित करने के अनेक उदाहरण भी आज हमें अपने समाज में देखने को मिल जाएंगे। कई बार दूर के सम्बन्धी भी सम्पत्ति हथियाने के लालच में कुचक्र रचते हुए देखे गए हैं और इस प्रकार के लालची लोगों से भी हमारे बुजुर्गों की सुरक्षा खतरे में पड़ती है। इस पृष्ठभूमि में जहां गलती करने वाली सन्तान को राह पर लाने की जरूरत होती है वहीं असहाय व असुरक्षित बुजुर्गों की देखभाल के लिए समाज की तरफ से संस्थागत उपायों की जरूरत भी उजागर होती है।

इस सम्बन्ध में यह ध्यान भी रखा जाना चाहिए कि देश में बुजुर्गों की संख्या निरन्तर बढ़ने के कारण सरकार और समाज की तरफ से भी व्यापक प्रयासों व बड़े पैमाने पर उपयोगी कार्यक्रमों और योजनाओं को संचालित करने और भली प्रकार क्रियान्वित किए जाने की महती आवश्यकता है। केवल राज्य सरकारों की तरफ से अधिक संसाधन लगाए जाने के अलावा अमली तन्त्र को अधिक कुशल बनाने और समाज की अच्छी भागीदारी सुनिश्चित करने पर भी विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करना होगा। इन वर्गों के लिए नीतियां निर्धारित करने या उनका क्रियान्वयन सुनिश्चित किए जाने के इस तथ्य को सदैव ध्यान में रखना होगा कि बुजुर्गों के मामले में समस्या केवल उनके लालन–पालन की या उनके लिए गुजारा भत्ता सुनिश्चित करने तक ही सीमित नहीं है बल्कि उनके स्वास्थ्य, मनोरंजन के लिए संस्थागत उपाय करने के अलावा उनकी भावनात्मक जरूरतों को पूरा करने और उससे भी बढ़कर बुढ़ापे में भी उन्हें सक्रिय बनाए रखने और उनके जीवन को अर्थपूर्ण बनाए रखने की है।

इन कसौटियों पर केन्द्र सरकार द्वारा पारित विधेयक के प्रावधानों को देखा जाए तो कहा जा सकता है कि अमीर व मध्यम वर्गीय परिवारों और वेतन भोगियों के अभिभावक यदि सन्तान की तरफ से उपेक्षा के शिकार हों तो वे आसानी से गुजारा भत्ता पा सकते हैं परन्तु गरीब व साधनहीनों के लिए इस विधेयक से किसी प्रकार की ठोस राहत की उम्मीद करना सम्भव दिखाई नहीं देता। ऐसे लोगों के लिए सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम योजनाएं तथा वृद्धावस्था पेंशन योजनाओं जैसे उपाय अधिक कारगर व प्रभावी हो सकते हैं। अतः सरकार को इस प्रकार के और अधिक कार्यक्रमों और योजनाओं को शुरू किए जाने पर भी विशेष जोर देना जरूरी है। साथ ही यह कार्यक्रम और योजनाएं आवश्यकताओं पर आधारित अर्थात व्यावहारिक हो तथा इनके क्रियान्वयन पर पैनी नजर बनाए रखने हेतु खासतौर पर निगरानी की पक्की व्यवस्था सुनिश्चित किया जाना उससे भी ज्यादा जरूरी है ताकि जरूरतमंद वृद्धजनों की जरूरतों को उनकी जरूरत के अनुसार पूरा किया जाना सम्भव हो सके।

(लेखक राज्य नियोजन संस्थान, उत्तर प्रदेश में संयुक्त निदेशक हैं।)
ई–मेल : umeshagarwal215@yahoo.com

मसूर उत्पादन बढ़ाने की नवीन पद्धति

ओमवीर सिंह मलिक

मसूर जाड़े के मौसम की एक प्रमुख दलहनी फसल है। दलहनी वर्ग में मसूर सबसे प्राचीनतम फसलों में से एक है। मसूर मध्य व उत्तर भारत के बरानी क्षेत्रों में आसानी से उगायी जा सकती है। यह फसल शुष्क व अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में मृदा क्षरण रोकने में भी सहायक है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से दाल के रूप में किया जाता है। इसके अलावा मसूर का प्रयोग नमकीन व अन्य शाकाहारी व्यंजनों में भी किया जाता है। दाल के रूप में यह आसानी से पक जाती है। अतः यह रोगियों के लिए भी अच्छी मानी जाती है। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और पश्चिमी बंगाल में मसूर की खेती बहुतायत में की जाती है। मसूर की खेती कम वर्षा और विपरीत परिस्थितियों वाली जलवायु में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। मसूर की फसल में रोग व कीटों का भी कम प्रकोप होता है। बाजार में मसूर की बढ़ती मांग के कारण इसका उत्पादन बढ़ाना नितांत आवश्यक है।

मसूर जाड़े के मौसम की एक प्रमुख दलहनी फसल है। यह फसल शुष्क व अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में मृदाक्षरण रोकने में भी सहायक है। मसूर में 22–25 प्रतिशत प्रोटीन के साथ–साथ अन्य आवश्यक पोषक तत्त्वों जैसे कैल्शियम, लोहा व नाईसीन भी पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। दाल के रूप में यह आसानी से पक जाती है। मसूर प्रोटीन और आवश्यक अमीनों अम्लों की आपूर्ति के साथ–साथ जमीन की उपजाऊ शक्ति को भी बढ़ाती है। मसूर की फलियों से दाना निकालने के पश्चात् प्राप्त सूखा चारा पशुओं का स्वादिष्ट, पौष्टिक व ताकतवर भोजन है। मसूर की खेती कम वर्षा और विपरीत परिस्थितियों वाली जलवायु में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है।

मसूर की पैदावार में गिरावट के प्रमुख कारण

- प्रायः किसानों द्वारा रोगग्रस्त व पुरानी प्रजातियों के बीज प्रयोग किए जाते हैं जिससे जमाव से लेकर बनने तक विभिन्न प्रकार की बीमारियों का प्रकोप होने के कारण उत्पादकता काफी कम हो जाती है।
- चयन किए गए प्रजाति क्षेत्र का परिस्थिति के अनुकूल न होना।
- उन्नत व उपयुक्त प्रजातियों के प्रचार–प्रसार का अभाव।
- मसूर की उत्पादकता में कमी का प्रमुख कारण उन्नत प्रजातियों का गुणवत्ता वाला बीज पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होना है।
- असिंचित दशाओं में अन्तः फसल प्रणाली की अपेक्षा एकल फसल प्रणाली को बढ़ावा देना।
- मसूर की पैदावार में गिरावट का एक मुख्य कारण किसानों द्वारा मसूर की फसल में उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग करना है।
- मसूर खेती आमतौर पर शुष्क व असिंचित क्षेत्रों में की जाती है।
- मसूर की फसल में जैविक उर्वरकों मुख्यतः राइजोबियम व फास्फेट सोल्यूबिलाइजिंग बैक्टरिया के प्रयोग को नजर–अंदाज करना।

मसूर की उन्नतशील प्रजातियां

पिछले 15 वर्षों में भारतीय अनुसंधान संस्थान, कानपुर, कृषि विश्वविद्यालयों व अन्य शोध केन्द्रों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों के लिए मसूर की अनेक प्रजातियां विकसित की गयी हैं। इनमें से अधिकांश प्रजातियां प्रमुख रोगों

के प्रति अवरोधी हैं। ये उन्नतशील प्रजातियां अधिक उपज देने वाली हैं। इनमें से कुछ शीघ्र पकने वाली तथा कुछ बड़े आकार के दानों वाली हैं। इनकी उपज क्षमता परम्परागत प्रजातियों की अपेक्षा 20–25 प्रतिशत अधिक है। इनका बीज पर्याप्त मात्रा में किसानों को उपलब्ध कराने की नितान्त आवश्यकता है। मसूर की कुछ नवीनतम व उन्नतशील प्रजातियों का विवरण निम्नलिखित है :

- **एच.यू.एल.–57–** इस प्रजाति का विकास बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी द्वारा किया गया है। इस किस्म के बीज छोटे होते हैं। इसे उत्तर–पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए वर्ष 2005 में संस्तुत किया गया है। यह किस्म 121 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इस किस्म की औसत पैदावार 14.0 क्विंटल/हे. है। यह किस्म रतुआ प्रतिरोधी है।
- **वी.एल.–507 –** इस प्रजाति का विकास विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधानशाला, अल्मोड़ा द्वारा किया गया है। यह किस्म बड़े दाने वाली है। इसे वर्ष 2006 में उत्तर पहाड़ी क्षेत्रों के लिए अनुमोदित किया गया है। इसकी फसल अवधि 160–170 दिन है। यह किस्म उकठा रोग के प्रति प्रतिरोधी है। इसकी औसत पैदावार 12.4 क्विंटल/हे. है।
- **के.एल.एस.–218 –** इस किस्म का विकास चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा किया गया है। इस किस्म को वर्ष 2005 में उत्तर–पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए अनुमोदित किया गया है। यह किस्म छोटे दाने वाली है। इसके पकने की अवधि 120–125 दिन है। इस किस्म की औसत पैदावार लगभग 14.0 क्विंटल/हे. है। यह रतुआ रोग के प्रति प्रतिरोधी है।
- **लेन्स 4076 (शिवालिक) –** इस प्रजाति का विकास भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा किया गया। इसे 1995 में उत्तर–पश्चिम के मैदानी क्षेत्रों व मध्यम क्षेत्र के लिए संस्तुत किया गया है। इस प्रजाति की औसत उपज 16 क्विं./हे. व पकने की अवधि 135 दिन हैं तथा यह रतुआ रोगरोधी है। इसके 100 दानों का वजन 3.2 ग्राम है।
- **डी.पी.एल.–15 –** इस प्रजाति को भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित किया गया है। इसे 1995 में उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों के लिए संस्तुत किया गया है। इस प्रजाति की औसत उपज 15.5 क्विं./हे. है। यह 135 दिन में पककर तैयार हो जाती है तथा यह रतुआ और उकठा रोग के लिए प्रतिरोधी है। यह प्रजाति बड़े दानों वाली है।
- **पूसा वैभव (एल.–4147) –** यह एक छोटे दाने वाली प्रजाति है। इसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित किया गया है। इस प्रजाति को संस्तुत किया गया है। पूसा वैभव की औसत पैदावार 18.0 क्विं./हे. है। यह प्रजाति रतुआ प्रतिरोधी है। यह 134 दिन में पककर तैयार हो जाती है।
- **जे.एल.–3 –** इस प्रजाति को जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, सिहौर द्वारा विकसित किया गया है। इसे 1999 में मध्य क्षेत्र के लिए संस्तुत किया गया। इसके पकने की अवधि 113 दिन है। यह प्रजाति बड़े दाने वाली है। यह उकठा रोग से प्रतिरोधी है। इस प्रजाति की औसत पैदावार 14.0 क्विं./हे. है।
- **आई.पी.एल.–81 –** इस किस्म को भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा विकसित किया गया है। इस प्रजाति को सन् 2001 में मध्य क्षेत्र के लिए अनुमोदित किया गया है। यह किस्म बड़े दाने वाली है। यह रतुआ एवं उकठा रोग के प्रति सहनशील है। यह किस्म 113 दिन में पककर तैयार हो जाती

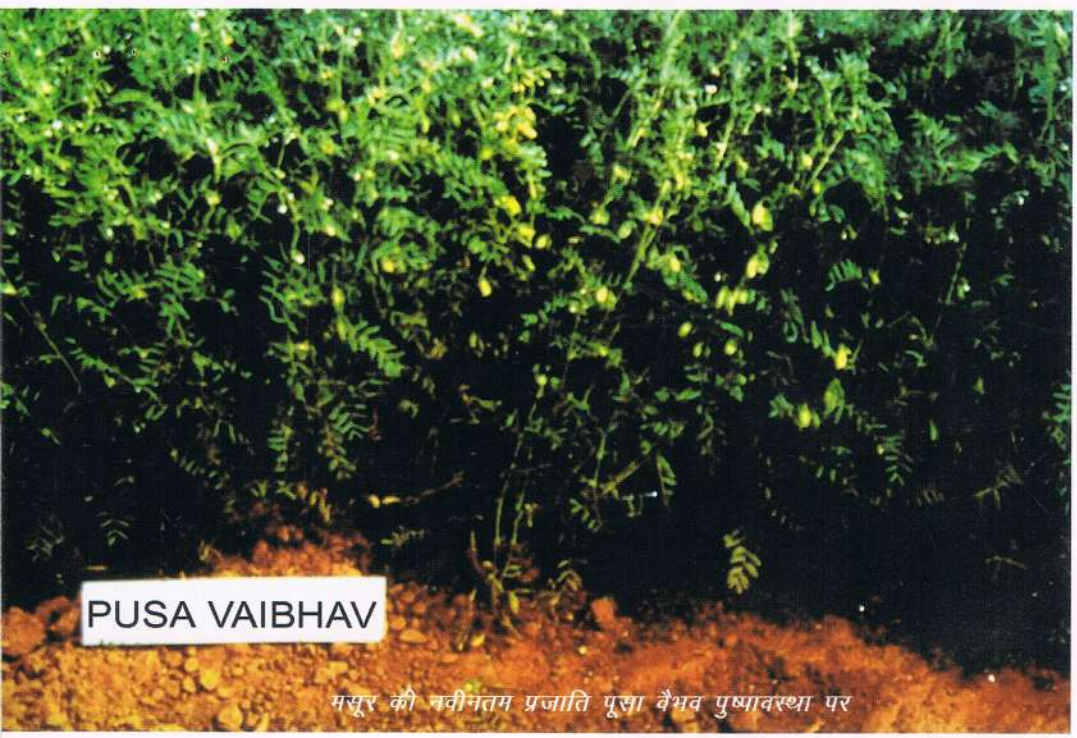

मसूर की नवीनतम प्रजाति पूसा वैभव पुष्पावस्था पर

है। इस किस्म की औसत पैदावार 12.5 क्विं./हे. है।

- **पूसा मसूर–5 (एल. 4597)** – मसूर की इस किस्म का अनुमोदन वर्ष 2006 में दिल्ली क्षेत्र के लिए किया गया है। यह मसूर की अधिक पैदावार देने वाली किस्म है। जिसकी औसत पैदावार 17.2 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह मध्यम बढ़वार वाली किस्म है, जिसका दाना छोटा तथा दाल संतरी रंग की होती है। यह किस्म रतुआ रोग के प्रति प्रतिरोधी है।
- **शेरी** – मसूर की 'शेरी' किस्म जो कि बड़े दाने तथा उकठा अवरोधी है, किसानों द्वारा बड़े पैमाने पर अपनायी जा रही है। यह सिंचित व बरानी दोनों क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है।
- **डी.पी.एल.–62** – इस प्रजाति का विकास भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा वर्ष 1997 में किया गया। यह बुंदेलखंड क्षेत्र के लिए उपयुक्त है। दाने बड़े आकार के व बाजार में ज्यादा मांग है। इसकी औसत उत्पादकता 17.9 कुन्टल/हे. है। यह प्रजाति रतुआ और उकठा रोग की प्रतिरोधी है।
- **जे.एल.–1** – बुंदेलखंड क्षेत्र के लिए उपयोगी व उकठा अवरोधी है। स्थानीय प्रजातियों के तुलना में 42 प्रतिशत अधिक उपज देने की क्षमता रखती है।

उपर्युक्त मसूर की प्रजातियों के अलावा एच.यू.एल.–57, पी. एल.–406, जे.एल.–3, पी.एल.–4, पी.एल.–5, पन्त एल.–236, पन्त एल.–406, नरेन्द्र मसूर–1, डी.पी.एल.–15, डी.पी.एल.–62, आदि नवीनतम प्रजातियां है।

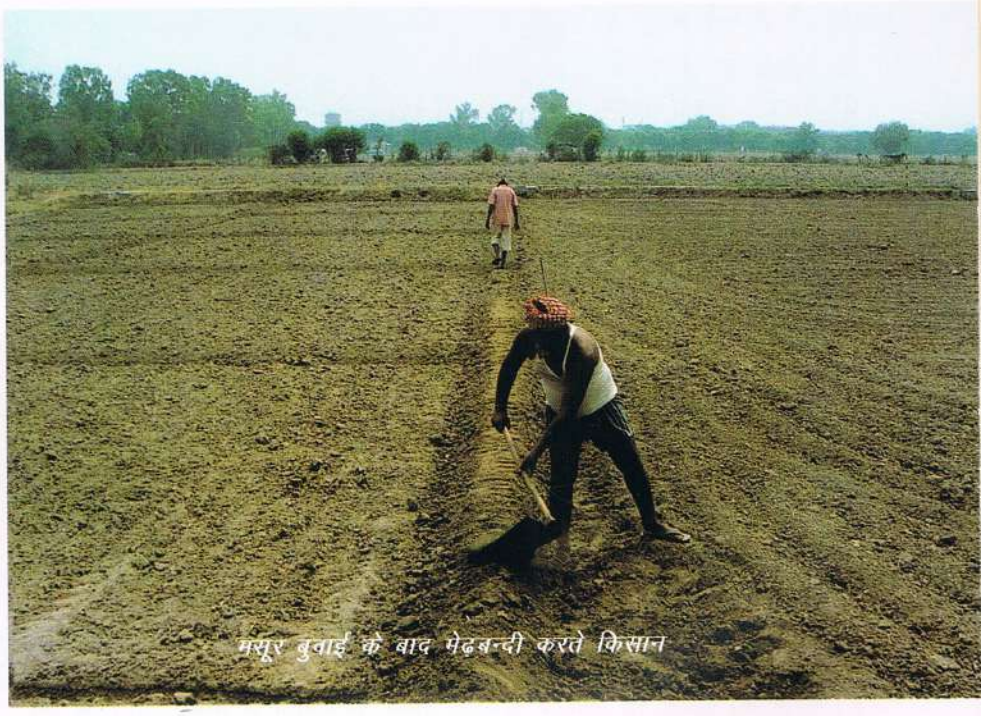

मसूर बुवाई के बाद मेढ़बन्दी करते किसान

जलवायु

मसूर की फसल के लिए ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी बुवाई रबी की फसल के रूप में सर्दियों में की जाती है। यह पाला तथा कम तापमान को भी सहन करने की क्षमता रखती है। इसको समुद्र तल से 300 मीटर की ऊंचाई तक आसानी से उगाया जा सकता है। अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा यह अत्यधिक वर्षा को भी सहन कर लेती है। शुष्क व वर्षा आधारित क्षेत्रों में वर्षा ऋतु की संरक्षित नमी पर भी इसकी अधिक पैदावार ली जा सकती है। वानस्पतिक वृद्धि के समय इसे कम तापमान की आवश्यकता होती है, जबकि पकने के समय अपेक्षाकृत अधिक तापमान की जरूरत होती है। इसकी वृद्धि के लिए उपयुक्त तापमान 20–30 डिग्री सेल्सियस है। गर्म आर्द्र क्षेत्रों में इसकी फसल अच्छी नहीं होती है। दाने भरने की अवस्था पर रात का कम तापमान उपयुक्त रहता है। बादल रहित चमकीली धूप से फसल की वृद्धि व उपज पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

भूमि का चुनाव

मसूर की खेती रेतीली दोमट भूमि से लेकर गहरी काली मिट्टी तक सभी प्रकार की भूमियों में आसानी से की जा सकती है। मसूर की फसल को अच्छे जल निकास वाली मध्यम क्षारीय व लवणीय मृदाओं में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। जलभराव वाले क्षेत्रों में भी धान की कटाई के बाद मसूर को बोया जा सकता है क्योंकि ऐसी परिस्थिति में कोई अन्य धान्य या दलहनी फसल आसानी से नहीं उगायी जा सकती है। अम्लीय मृदाएं मसूर की खेती के लिए उपयुक्त नहीं मानी जाती हैं।

खेती की तैयारी

सिंचित क्षेत्रों में मसूर की बुवाई के लिए पलेवा करके डिस्क हैरो व कल्टीवेटर से दो–तीन जुताइयां करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगायें। जिससे मिट्टी भुरभुरी व चूर्णित हो जाये। बारानी क्षेत्रों में वर्षा ऋतु की संरक्षित नमी पर मसूर की बुवाई की जाती है। इसके लिए खरीफ फसलों की कटाई उपरान्त मौका मिलते ही खेत की आरपार जुताई करके तुरन्त पाटा लगाना चाहिए जिससे वर्षा ऋतु की पर्याप्त नमी संरक्षित की जा सके। पिछली फसल के अवशेषों व खरपतवारों

के डंठलों को नष्ट कर दें। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए जिससे बीजों का जमाव शीघ्र व एक समान रूप से हो सके।

बुवाई के समय

मसूर की फसल से भरपूर पैदावार लेने हेतु बुवाई सही समय पर करना अति आवश्यक है। मसूर की बुवाई के लिए उपयुक्त समय अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से लेकर नवम्बर का प्रथम सप्ताह है। यद्यपि 15 नवम्बर तक इसकी बुवाई की जा सकती है। मसूर की बुवाई 15 नवम्बर के बाद करने पर उपज में भारी गिरावट आ जाती है। बारानी क्षेत्रों में मसूर की बुवाई अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े में अवश्य कर देनी चाहिए। अगेती बुवाई से फसल वानस्पतिक वृद्धि अधिक हो जाती है। परन्तु इसका दाने की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। देर से बुवाई करने पर पौधों की वृद्धि कम होती है। साथ ही पौधों में कम शाखाएं निकलती है। अतः जहां तक हो सके, बुवाई समय पर करनी चाहिए।

पानी की कमी वाले क्षेत्रों के लिए एक्वाफर्टी सीडड्रिल द्वारा बुवाई

बीज और बीजोपचार

समय से बुवाई हेतु मसूर की छोटे दाने वाली प्रजातियों का 25–30 कि.ग्रा. और बड़े दानों वाली प्रजातियों के लिए 35–40 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। बारानी क्षेत्रों व देर से बुवाई हेतु 50–60 कि.ग्रा. बीज आवश्यक होता है। मसूर को मिश्रित फसल के रूप में बोने के लिए बीज की मात्रा आधी कर देनी चाहिए। मसूर की फसल को भूमि व बीजजनित बीमारियों से बचाव के लिए फफूंदीनाशक रसायन जैसे बीनोमाइल 0.3 प्रतिशत अथवा 2.5 ग्राम से प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप हो, वहां पर बीजों को क्लोरोपायरीफोस (20 ई.सी.) 800 मि.ली. दवाई प्रति कुन्टल बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए। इस बात का ध्यान रखें कि जिस खेत में मसूर पहली बार बोई जा रही हो तो वहां पर बीजों को राइजोबियम जीवाणु से उपचारित करना अति आवश्यक है। इसके लिए राइजोबियम जीवाणु की विशिष्ट प्रजाति को ही लेना चाहिए। इससे फसल द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन यौगिकीकरण प्रक्रिया पर अच्छा प्रभाव पड़ता है जो फसल उत्पादन बढ़ाने में सहायक है। बीज उपचार बुवाई के 10–12 घन्टे पहले कर लेना चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्र में बुवाई करने हेतु राइजोबियम जीवाणु के दो पैकेट पर्याप्त होते हैं। इसके अलावा फास्फेट सोलूबिलाइजिंग बैक्टीरिया (पी.एस.बी.) द्वारा बीजोपचार से मृदा में उपलब्ध फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ाने में मदद मिलती है। इस प्रकार कम लागत में मसूर की अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है। यदि बीज किसी विश्वसनीय संस्था से खरीदा गया है तो उसे फफूंदीनाशक दवा से उपचारित करने की आवश्यकता नहीं है। यह बीज पहले से ही उपचारित होता है।

बुवाई की विधि

मसूर की बुवाई लाइनों में हल से या सीडड्रिल की सहायता से करनी चाहिए। बुवाई की छिटकवां विधि काफी प्रचलित है परन्तु बेहतर पैदावार के लिए यह विधि सबसे नुकसानदायक है। मसूर के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25–30 से.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 1–2 से.मी. रखनी चाहिए। बीज को 3–4 से.मी. की गहराई पर बोना चाहिए। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। रबी ऋतु में मसूर सामान्यतः संरक्षित नमी में उगायी जाती है। उपयुक्त नमी के अभाव में बीजों का अंकुरण ठीक तरह से नहीं हो पाता है। ऐसी अवस्था में बीजों को 6–8 घंटे तक पानी में भिगोकर बुवाई करनी चाहिए जिससे बीज का जमाव शीघ्र व पर्याप्त मात्रा में हो सके। इससे प्रति इकाई क्षेत्र पौधों की उचित संख्या बनाये रखने में मदद मिलती है। साथ ही उत्पादन पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। बुवाई पूरब–पश्चिम दिशाओं में करनी चाहिए जिससे सभी पौधों को सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में और लम्बी अवधि तक मिलता रहे।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

दलहनी फसल होने के कारण मसूर की फसल में खाद एवं उर्वरकों की कम आवश्यकता पड़ती है। मसूर की अच्छी फसल के लिए 8–10 टन अच्छी सड़ी–गली गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की तैयारी के समय समान रूप से छिटक देनी चाहिए। इसके अलावा मसूर के बेहतर उत्पादन के लिए 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 30–40 कि.ग्रा.

पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। जिंक की कमी वाले क्षेत्रों में 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर प्रयोग करना चाहिए। जिन क्षेत्रों से सल्फर की कमी हो वहां पर 30 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय देना लाभदायक पाया गया है। वैसे मिट्टी परीक्षण के आधार पर ही खाद एवं उर्वरकों की मात्रा सुनिश्चित की जानी चाहिए। उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा अन्तिम जुताई के समय प्रयोग करनी चाहिए। आजकल सघन फसल प्रणाली के कारण भूमि में कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे आयरन, जस्ता व बोरोन की कमी होती जा रही है। खड़ी फसल में जस्ते की कमी दूर करने के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट + 0.25 प्रतिशत चूने के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाई प्रबंधन

सामान्तः मसूर की खेती असिंचित क्षेत्रों में की जाती है परन्तु मसूर की भरपूर पैदावार हेतु इसमें एक या दो सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। प्रति इकाई क्षेत्र पौधों की पर्याप्त संख्या सुनिश्चित करने के लिए बुवाई से पूर्व पलेवा करना चाहिए। पहली सिंचाई बुवाई के 40–45 दिन बाद (फूल बनने से पूर्व) तथा दूसरी सिंचाई बुवाई के 70–80 दिनों बाद (फलियां बनने पर) करनी चाहिए। इससे फसल में उकठा बीमारी आने की सम्भावना बहुत कम हो जाती है। यदि एक ही सिंचाई की व्यवस्था है तो 60–65 दिनों बाद करनी चाहिए। जिससे जड़ों के आसपास वायु का संचरण आसानी से हो सके ताकि पौधे नत्रजन का सुचारू रूप से स्थिरीकरण कर सकें। इसी प्रकार अत्यधिक सिंचाई करने से फसल की वानस्पतिक बढ़वार अधिक हो जाती है जिसका दाने की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

खरपतवार नियंत्रण

मसूर की फसल में खरपतवारों द्वारा अत्यधिक हानि होती है। इनके कारण उपज में 30–35 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है। खरपतवार फसल में दिए गए पोषक तत्वों, सिंचाई जल के अवशोषण के साथ–साथ वायु व प्रकाश के लिए भी स्पर्धा करते हैं। इसके लिए मसूर की बुवाई की 25–30 दिन बाद हैंड हो या कसोले की मदद से एक निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। इससे भूमि में वायु का संचार भी अच्छा होता है। साथ ही नमी संरक्षण में भी मदद मिलती है। यदि नवम्बर–दिसम्बर में वर्षा हो जाये या सिंचाई की गयी हो तो समय पर निराई–गुड़ाई अवश्य करनी चाहिए इससे जड़ों का विकास व बढ़वार अच्छी होती है जिसका पैदावार पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। मसूर की फसल में मुख्यताः प्याजी, बथुआ, गजरी, चटरी–मटरी, पीली सैंजी, सफद सैंजी, कटहैली व कृष्णनील खरपतवार पाये जाते हैं। खरपतवारों को प्रभावी ढंग से नियन्त्रण करने के लिए आजकल बहुत से शाकनाशी बाजार में उपलब्ध हैं इसके लिए पेंड़ी मेथालिन (30 ई.सी.) का 1.25 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से 600–700 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त फ्लूक्लोरोलिन (45 प्रतिशत ई.सी.) का 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से 500–700 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई से पूर्व सतही मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें व फिर मसूर की बुवाई करें। उपयुक्त शाकनाशियों के प्रयोग से सभी चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले खरपतवार नष्ट हो जाते हैं।

मसूर बुवाई के लिए फर्टी सीडड्रिल का प्रदर्शन देखने को उत्सुक ग्रामीण

बीमारियों की रोकथाम

मसूर की फसल में जिन प्रमुख रोगों का प्रकोप होता है, उनकी पहचान एवं बचाव का विवरण निम्नलिखित है :–

- **उकठा रोग –** यह भूमि जनित रोग है। बुवाई के 20–25 दिन के बाद इस रोग के प्रकोप से पौधे पीले पड़ने शुरू हो जाते हैं। पौधों का ऊपरी भाग एक तरफ झुक जाता है और अन्त में मुरझाकर पौधों की मृत्यु हो जाती है। उकठा रोग से बचाव हेतु उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए। साथ ही पुरानी फसलों के अवशेषों को मिट्टी में दबा देना चाहिए। खेतों के आस–पास सफाई रखें। उकठा रोग की रोकथाम के लिए सदैव रोगरोधी प्रजातियों की बुवाई करनी चाहिए। जिन क्षेत्रों में यह बीमारी बार–बार आती हो, वहां पर 3–4 वर्षों तक मसूर की फसल नहीं लेनी चाहिए। इसके अलावा बीजों को बोने से

थ्रैशर द्वारा मसूर की मड़ाई

पहले थाइरम नामक फफूंदीनाशक की 2.5 ग्राम मात्रा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए। फफूंदीनाशक कार्बाडान्जिम का 2.0 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपयोग भी लाभकारी पाया गया है। आजकल उठला रोग के नियन्त्रण हेतु पर्यावरण हितैषी ट्राइकोडर्मा नामक फफूंद का प्रयोग भी लाभकारी सिद्ध हो रहा है जो जैव नियन्त्रण के रूप में विभिन्न मृदाजनित बीमारियों की रोकथाम के लिए उपयोगी है। अतः इसे किसानों में लोकप्रिय बनाने के लिए इसका बड़े पैमाने पर प्रचार–प्रसार जरूरी है।

- **रतुआ रोग** – इस रोग में फरवरी या इसके बाद तनों एवं पत्तियों पर गुलाबी से भूरे रंग के धब्बे बनने लगते हैं जो बाद में काले पड़ने लगते हैं। यह बीमारी उत्तर–पूर्वी मैदानी तथा उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों में अधिक देखने को मिलती है। इसकी रोकथाम हेतु रोगरोधी किस्मों जैसे पन्त एल–236, पन्त एल–406 व नरेन्द्र मसूर–1 का प्रयोग करना चाहिए। कटाई उपरान्त रोगग्रसित पौधों को इकट्ठा कर जला देना चाहिए। इसके अतिरिक्त रोग का अधिक प्रकोप होने पर डाइथेन एम–45 का 0.2 प्रतिशत घोल का 15–20 दिन अन्तराल पर आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।
- **चूर्णित आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू)** – सामान्यतः इस बीमारी के लक्षण फसल बुवाई के 80–90 दिन बाद पत्तियों की निचली सतह पर छोटे–छोटे सफेद धब्बों के रूप में दिखायी देते हैं जो बाद में सफेद चूर्ण के रूप में पूरी पत्ती, तने तथा फलियों पर फैल जाते हैं। अत्यधिक संक्रमण की स्थिति में पौधों में हरे रंग की कमी (क्लोरोसिस) हो जाती है। इसकी रोकथाम के लिए रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को इकट्ठा करके जला देना चाहिए। मसूर की रोगरोधी किस्मों का चयन करना चाहिए। इसके अलावा बीनोमाइल 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर का 15 दिनों के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करें। गन्धक 20–30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से संक्रमित खेत में बिखेरकर भी रोग की रोकथाम की जा सकती है। कुछ सल्फरयुक्त पदार्थ जैसे सल्फेक्स या एक्सेसाल का 0.3 प्रतिशत छिड़काव करने से भी रोग को नियन्त्रित किया जा सकता है।
- **मृदु रोमिल आसिता** – यह रोग पेरोनोसपोरा लेंटीस नामक कवक द्वारा फैलता है। रोग के लक्षण बुवाई के 70–80 दिन बाद नजर आते हैं। इस रोग में निश्चित आकार के हल्के हरे पीले धब्बे पत्तियों की ऊपरी सतह पर दिखाई देते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर भूरे रंग की वृद्धि नजर आती है। संक्रमित पौधों की बढ़वार रुक जाती है। इससे बचाव हेतु उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए। बुवाई करने से पूर्व बीज को बीनोमाइल जैसे फफूंदनाशक के 0.3 प्रतिशत से उपचारित करना चाहिए।

कटाई एवं मड़ाई

जब 70–80 प्रतिशत फलियां भूरे रंग की हो जाएं और पौधा पीला पड़ जाए तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। देर से कटाई करने पर फलियों से दाने छिटकने का अंदेशा रहता है। कटाई उपरान्त फसल को खलिहान में 3–4 दिनों तक अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। ऐसा करने से फलियों से दाने आसानी से अलग हो जाते हैं। भंडारण करने से पूर्व दानों को अच्छी तरह से धूप में सुखा लेना चाहिए जिससे दानों में नमी की मात्रा 10–12 प्रतिशत के बीच बनी रहे। इससे दानों में कीटों के संक्रमण की कम सम्भावना रहती है।

इस तरह नवीनतम सस्य तकनीकी अपनायी जाए तो मसूर की फसल से 20–22 क्विंटल प्रति हेक्टेयर दाना की उपज प्राप्त की जा सकती है। साथ ही 30–35 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक सूखा भूसा भी प्राप्त हो जाता है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेल : ambrmalik@yahoo.com

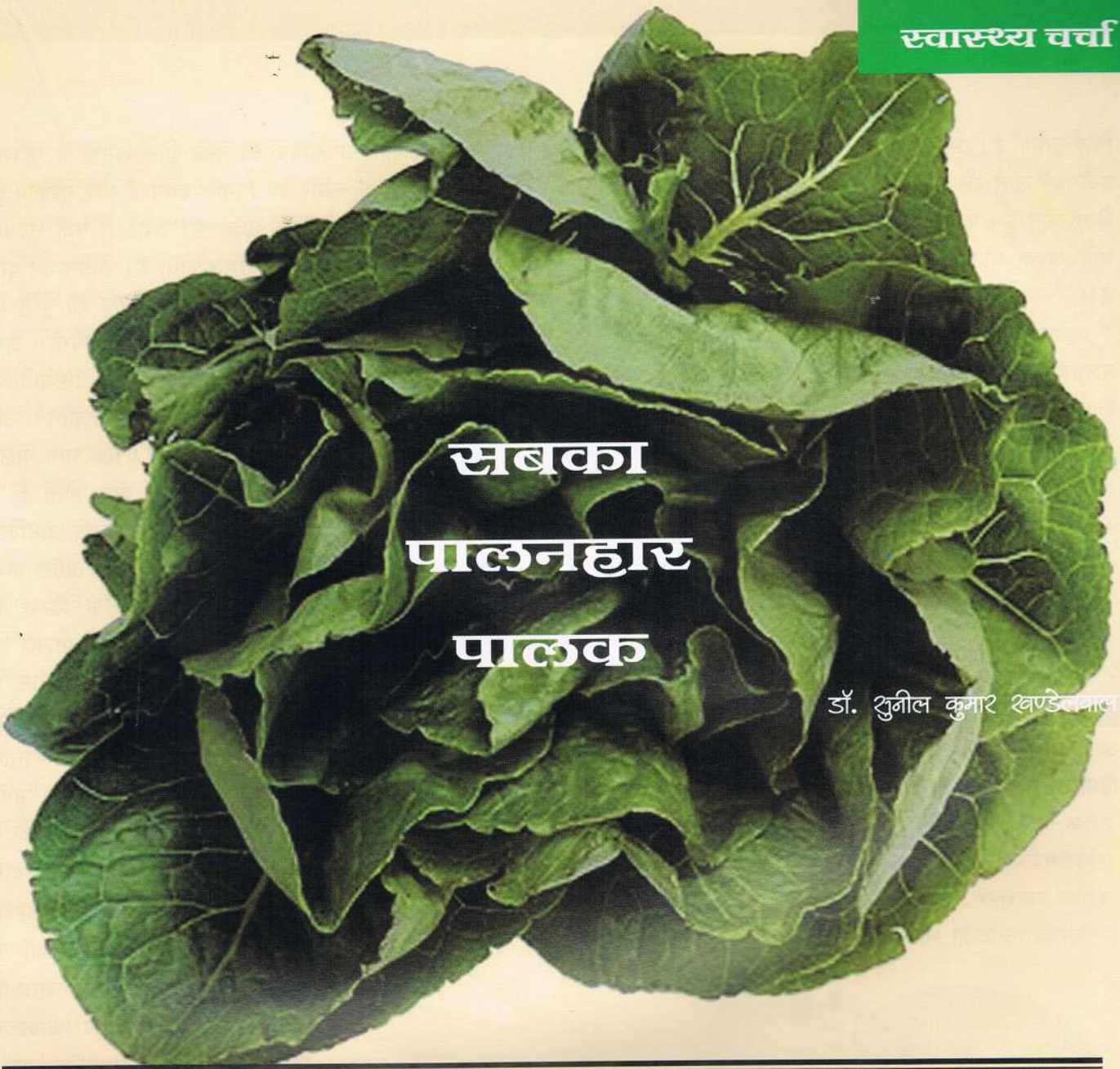

सबका पालनहार पालक

डॉ. सुनील कुमार खण्डेलवाल

पालक से तात्पर्य है– सबका पालन करने वाला यानी सबका पालनहार। सचमुच में लगता है कि भगवान ने इस अद्‌भुत साग को जमीन पर इसलिए भेजा कि मानव इसका सेवन कर अपना पालन–पोषण करता रहे। पालक प्रकृति प्रदत्त एक ऐसा दिव्य आहार है जिसके उपयोग से मानव विभिन्न रोगों से छुटकारा पाकर अपने शारीरिक विकास की ओर अग्रसर हो सकता है। पौष्टिकता की दृष्टि से पालक में जीवन को दीर्घायु एवं स्वस्थ बनाये रखने वाले सभी पोषक तत्व पाये जाते है। इसमें शरीर के विकास एवं वृद्धि की अद्‌भुत क्षमता होती है। पालक में खनिज लवण जैसे कैल्शियम, लौह तथा विटामिन ए, बी, सी आदि प्रचुर मात्रा में पाए जाते है।

पालक **चिनोपोडिएसी** कुल का एक सुप्रसिद्ध शाक है। इसका वानस्पतिक नाम स्पिनेसिया ओलिरेसिया है। अंग्रेजी में इसे **स्पीनेच** कहते है। कही–कही विशेषकर उत्तरी भारत (बिहार) में पालकी भी कहा जाता है।

पालक से तात्पर्य है– सबका पालन करने वाला यानी सबका पालनहार। सचमुच में लगता है कि भगवान ने इस अद्‌भुत साग को जमीन पर इसलिए भेजा कि मानव इसका सेवन कर अपना पालन–पोषण करता रहे।

पालक प्रकृति प्रदत्त एक ऐसा दिव्य आहार है जिसके उपयोग से मानव विभिन्न रोगों से छुटकारा पाकर अपने शारीरिक विकास की ओर अग्रसर हो सकता है। पालक लगभग सभी ऋतुओं में उत्पन्न होता है। भारत में यह शाक प्रत्येक स्थान पर सरलता से

मिल जाता है। अधिकांश लोग पालक को विभिन्न तरीकों से प्रयोग में लाते रहे है और इसकी पत्तियों से अनेक व्यंजन तैयार किए जाते हैं। कच्चा पालक कड़वाहट लिए हुए होता है परन्तु यदि कच्चा पालक खाया जा सके तो अधिक गुणकारी होता है।

आयुर्वेद के अनुसार पालक वातकारक, शीतवीर्य, गुरू, मलभेदक, दाह शमन, श्वास, पित्त, रक्तविकार, पैत्रिक ज्वर तथा कफनाशक होता है। डंठल सहित पत्तों का शाक लघु (शीघ्रपाकी), पेट साफ करने वाला सारक, राजयक्ष्मा, मलावरोध, आंत्र विकार, मूत्र दाह आदि में लाभकारी है। पालक का बीज सारक एवं शीतल होता है। यह पीलिया, मूत्रल, यकृत शोथ तथा श्वासकृच्छ आदि में लाभकारी है।

पौष्टिकता की दृष्टि से पालक में जीवन को दीर्घायु एवं स्वस्थ बनाये रखने वाले सभी पोषक तत्व पाये जाते है। इसमें शरीर के विकास एवं वृद्धि की अद्‌भुत क्षमता होती है। पालक में खनिज लवण जैसे – कैल्शियम, लौह तथा विटामिन ए, बी, सी आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते है। पालक में वानस्पतिक हिमोग्लोबिन की मात्रा अधिक होती है। पालक के रस का सेवन करने से रक्त में हिमोग्लोबिन की वृद्धि होने लगती है, जिससे कुछ ही दिनों में नए रूधिर का निर्माण होता है और मुरझाए हुए चेहरे, बाल व नेत्र पुनः चमक उठते हैं। शरीर में नया उत्साह, नई शक्ति, स्फूर्ति और जोश का संचार होता है। प्रोटीन की दृष्टि से पालक श्रेष्ठतम आहार है, क्योंकि इसमें शरीर की वृद्धि एवं विकास के लिए आवश्यक सभी दस अमीनो अम्ल जैसे–आइसोल्यूसिन, ल्यूसिन, लायसीन, मिथियोनिन, फिनाइलएलेनीन, थ्रियोनिन, ट्रिप्टोफेन, वेलीन, आर्जीनिन, और हिस्टीडीन आदि उचित मात्रा में पाये जाते है। 100 ग्राम पालक के शाक के सेवन से 26 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

पालक को जीवन संरक्षक खाद्य पदार्थ (लाइफ प्रोटेक्टिव फूड) भी कहते है। दुर्भाग्य की बात है कि गरीब व अमीर बच्चों की बढ़ोत्तरी के समय संपूर्ण प्रोटीन की दृष्टि से डिब्बा बंद संश्लेषित प्रोटीन का उपयोग किया जाता है जबकि पालक एवं अन्य हरे पत्ते वाले सागों के कच्चे रस में संपूर्ण प्रोटीन तो उपलब्ध है ही, साथ ही साथ रोगाणुओं से लड़ने की इनमें अद्‌भुत क्षमता है। इन अमूल्य खाद्य पदार्थों के प्रति उपेक्षा दृष्टि अपनायी जाती है। गरीब बेचारा ज्ञान के अभाव में करता है और अमीर बेचारा अहंकार, प्रमाद एवं स्वाद के लोभ में ऐसा करता है। पर हैं दोनों बेचारे ही। दैनिक आहार में दालों का सेवन प्रोटीन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किया जाता है, लेकिन दालों में सम्पूर्ण आवश्यक प्रोटीन (दालों में मिथियोनिन नामक आवश्यक अमीनों अम्ल अनुपस्थित होता है) का अभाव होता है। इस अभावजन्य अमीनो अम्ल की पूर्ति पालक जैसी हरी साग भाजी को दैनिक आहार में सम्मिलित कर किया जा सकता है। दालों से प्राप्त कुछ अमीनो अम्ल (प्रोटीन) को पचाने के लिए विटामिन ए एवं विटामिन बी की आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से भी पालक एवं हरी साग भाजियां खाना आवश्यक हो जाता है। पक्के आहार में विटामिन सी का सर्वथा अभाव होता

है। अतः उसकी पूर्ति के लिए पालक के कुछ कच्चे पत्तों का सेवन करना चाहिए।

पालक शारीरिक परिश्रम करने वालों को शक्ति प्रदान करता है तो मानसिक श्रम करने वालों के लिए भी अमृत तुल्य है। पालक में पोषक तत्वों की प्रचुर मात्रा होने के कारण यह गर्भवती महिलाओं तथा कमजोर व कुपोषण जनित रोगियों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके सेवन से कमजोर व्यक्ति पुनः स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर लेता है। ऐसे रोगी जिनका पाचन तंत्र क्षीण है और जो अधिक भारी भोजन का प्रयोग करने में असमर्थ हैं, उन्हें पालक के सेवन से भोजन को पचाने व पाचन तंत्र को शक्ति प्राप्त करने में सहायता मिलती है। इसका रस आमाश्य व आंतों या उदर के अनेक रोगों में लाभकारी होता ही है, साथ ही साथ अम्ल पित्त, अजीर्ण, बवासीर, पेट की वायु, कब्ज आदि रोगों पर नियंत्रण भी रहता है।

पालक बनाने का वैज्ञानिक तरीका

प्रायः गृहणियां अज्ञानवश हरी साग भाजी को वैज्ञानिक तरीके से बनाना नहीं जानती हैं। फलस्वरूप बहुत सारे ऐसे तत्व, जो स्वास्थ्य संरक्षण एवं संवर्द्धन की दृष्टि से उपयोगी होते हैं, नष्ट हो जाते हैं। अतः पालक जैसी पत्तेदार हरी सब्जी को उपयोग करने से पूर्व अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिए तथा काटने से पूर्व पानी से अच्छी तरह धो लेना चाहिए, जिससे पानी में घुलनशील पौष्टिक तत्व नष्ट न हो। यदि पत्तों को अलग–अलग करके बिना काटे बनाए तो बहुत अच्छा अन्यथा सावधानीपूर्वक काटें, महीन न काटें। महीन काटने से पत्ती का रसस्त्राव अधिक होता है जिसके फलस्वरुप उसके बहुत सारे विटामिन (विटामिन सी एवं बी कॉम्पलेक्स समूह के विटामिन) तथा क्लोरोफिल नष्ट हो जाते हैं। पालक को पकाने के लिए कम से कम पानी का इस्तेमाल करना चाहिए। जिस

पालक का पोषक मान
(खाद्य भाग के प्रति 100 ग्राम भार में)

पोषक तत्वों की मात्रा		खनिज एवं विटामिन्स	
नमी	92.1 प्रतिशत	कैल्शियम	73 मि.ग्रा.
कार्बोहाइड्रेट	2.9 प्रतिशत	आयरन	1.14 मि.ग्रा.
प्रोटीन	2.0 प्रतिशत	केरोटिन	5580 माइक्रोग्राम
वसा	0.7 प्रतिशत	थायमिन	0.03 मि.ग्रा.
खनिज लवण	0.7 प्रतिशत	राइबोफ्लेविन	0.26 मि.ग्रा
रेशे	0.6 प्रतिशत	नायसिन	0.5 मि.ग्रा.
ऊर्जा	26 किलो कैलोरी	विटामिन सी	28 मि.ग्रा.

पानी में पालक को पकाया जाता है, उस पानी को फेंके नहीं, इसी पानी (रस) का उपयोग सब्जी को पकाने में करना चाहिए या इस पानी का दाल, सूप आदि में इस्तेमाल करें, जिससे पौष्टिक तत्वों का पूर्ण सदुपयोग होगा। पालक को कम समय के लिए (लगभग 7 मिनट) ढके हुए बर्तन में पकाना चाहिए (कुकर का बना हुआ साग स्वास्थ्यवर्द्धक होता है) जिससे पौष्टिक तत्व वाष्पीकृत होकर नष्ट नहीं हों। उसके बाद ढक्कन सहित उतारकर ठण्डा होने के लिए रख दें। ऐसा बना हुआ साग भी कुकर में बने हुए साग जैसा स्वास्थ्यवर्द्धक एवं संरक्षक होता है।

पालक के औषधीय गुण

पालक जैसी सस्ती व सुलभ सब्जी में अनेक गुणों का समावेश है। पालक का उपयोग सब्जियों में सर्वाधिक होता है। पालक को मूंग, अरहर आदि दालों के साथ या अरबी, आलू, गोभी, गाजर, बथुआ, मूली, टमाटर आदि दूसरे शाकों के साथ पकाकर खाना अति हितकर होता है। पालक के रस अथवा पालक को सब्जी के रुप में सेवन करने से पाचन तंत्र को लाभ होता है। पाचन तंत्र में जितने भी विष जमा होते है, पालक के प्रयोग से वह सब समाप्त हो जाते हैं। आंतों की शुद्धि होने के कारण उन्हें बल मिलता है। शरीर में विष फैलाने वाले कीटाणु समाप्त होते हैं और संक्रामक रोगों की संभावना कम हो जाती है।

नेत्र ज्योति : पालक में विटामिन ए प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। अतः इसके सेवन से नेत्र ज्योति बढ़ने के साथ–साथ आंखों के अनेक रोगों से भी छुटकारा मिल जाता है और रात्रि में कम दिखाई देने की शिकायत दूर होती है।

रक्तहीनता : शरीर में रक्त की कमी (रक्तहीनता) हो जाने पर, आधे गिलास पालक के रस में दो चम्मच शहद मिलाकर, नियमितरूप से दो महीने तक सेवन करने से, शरीर में रक्त की वृद्धि होने के साथ–साथ रक्त की कमी से होने वाले रोगों से छुटकारा मिल जाता है। अतः रक्तहीनता (एनीमिया) की बीमारी में यहरामबाण औषधि है।

शारीरिक विकास : बच्चों को दूध पिलाने वाली माताओं के लिए पालक जड़ी–बूटी के रूप में बहुत ही उपयोगी है। ऐसी माताओं द्वारा पालक का उपयोग करते रहने से दूध में वृद्धि होती है और बच्चे के शारीरिक विकास के लिए आवश्यक पोषक तत्व बढ़ते है।

खांसी : पालक के पत्तों के रस को हल्का गर्म कर कुल्ला करने से खांसी, गले में दर्द और फेफड़ों की सूजन में लाभ होता है।

दंत रोग (पायरिया) : पालक के रस का सेवन करने से दांत और मसूड़े मजबूत होते है। सुबह के समय खाली पेट पालक का रस पीने से पायेरिया रोग जड़ से समाप्त हो जाता है। पालक के रस में गाजर का रस मिलाकर सेवन करने से मसूड़ों से रक्त बहना बंद हो जाता है।

कब्ज : खाली पेट पालक का रस पीने से कुछ ही दिनों में कब्ज ठीक हो जाता है। पाचन संस्थान में जो पुराना मल जमा हो जाता है उसे बाहर निकालने में सहायता मिलती है और मल आसानी से बाहर निकल जाता है।

बहुमूत्रता : कुछ व्यक्तियों को रात को बार–बार पेशाब आता रहता है, इस कारण वे ठीक से सो भी नहीं पाते। ऐसे व्यक्तियों को शाम को पालक की सब्जी का सेवन करना चाहिए। इससे बहुमूत्रता में फायदा होता है।

गांठ होने पर : शरीर के किसी भी भाग में गांठ हो जाने पर पालक के पत्ते को कूटकर, उबालकर, पुल्टीस बनाकर बांधने से गांठ की वजह से बुखार भी आता हो तो वह स्वतः ही कम हो जाता है।

बुखार : बुखार में पालक की सब्जी या पालक का रस सेवन कर चादर ओढ़कर सो जाना चाहिए, उससे पसीना आकर बुखार उतर जाता है।

त्वचा रोग : त्वचा पर फोड़े व फुन्सी हो जाने पर, पालक के पत्तों को पानी में उबालकर धोने से शीघ्र ठीक हो जाते हैं। पालक व नींबू के रस की दो या तीन बूंदों में ग्लिसरीन मिलाकर त्वचा पर सोते समय लगाने से झुर्रियां व त्वचा की खुश्की दूर होती है।

सावधानियां: पालक का उपयोग सावधानीपूर्वक करने में कोई हानि नहीं है, किन्तु शरीर में सूजन, आंतों में घाव व दस्त रोग से पीड़ित रोगियों को इसके अधिक सेवन से जहां तक हो सके, बचना चाहिए। पालक के शाक को वात और कफ व्याधि वाले रोगी को सेवन नहीं करना चाहिए। पालक के सेवन से उनके रोग की वृद्धि होना सम्भव है। पथरी तथा गठिया वाले रोगी को पालक नहीं खानी चाहिए। उन्हें कच्ची पालक का सलाद तथा रस देने से हानि नहीं होती है। कभी–कभी पालक के रस से दस्त हो जाते है, उस स्थिति में इसका सेवन बंद कर देना चाहिए।

(लेखक महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय उदयपुर में वरिष्ठ तकनीकी सहायक हैं।)
ई–मेल: khandelwalsk19@yahoo.com

पाठकों / लेखकों से अनुरोध

आप "कुरुक्षेत्र" पत्रिका के नियमित पाठक/लेखक हैं तो आप जरूर चाहेंगे कि आपके गांव या उसके आसपास आ रहे बदलाव के बारे में सभी लोगों को पता चले। आपके गांव या आसपास जरूर ऐसी कोई महिला/पुरुष या स्वयंसेवी संस्था होगी जिसके बूते पर बदलाव की ब्यार चली हो। सरकारी प्रयासों के चलते भी आपके गांव का कुछ कायापलट तो हुआ ही होगा।

अगर आपके पास ऐसी कोई भी जानकारी है तो आप उसे अपने शब्दों में लिखकर (फोटो सहित) भेजें। लेख छपने पर उसका उचित पारिश्रमिक भी दिया जाएगा। हमारा पता है – वरिष्ठ संपादक, कुरूक्षेत्र (हिंदी), कमरा नं. 655, 'ए' विंग, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110001, आप हमें लेख ई–मेल भी कर सकते हैं।

ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

श्री रामविलास सिंह का मछली पालने वाला तालाब

सफलता की नई गाथा लिखता एक प्रगतिशील किसान

बृजलाल मौर्य

कहा जाता है कि जिसके पास जज़्बा होता है वह पहाड़ के सीने को चीरकर अपना रास्ता बना लेता है। आज ज्यादातर किसान खेती से मुंह मोड़ने लगे हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि कृषि पेशा अलाभकारी हो गया है। परन्तु इन्हीं सबके बीच कुछ प्रगतिशील किसान ऐसे भी हैं जो कृषि वैज्ञानिकों के सहयोग से सफलता की नई गाथा लिख रहे हैं। ऐसे ही अनुभवी किसानों में से एक हैं कैमूर जिला के चांदपुर प्रखंड निवासी किसान श्री रामविलास सिंह। अपनी मेहनत और वैज्ञानिकों के सहयोग से आज इनके बागों में फलदार वृक्षों से लेकर औषधीय तथा इमारती लकड़ी के हजारों वृक्ष लगे हुए हैं।

खेती के साथ–साथ बागवानी में गहरी रुचि रखने वाले प्रगतिशील किसान श्री राम विलास सिंह के बगीचे में आम्रपाली, मल्लिका, सुकुल, मालदह, तोतापारी आदि के चार सौ पेड़ लगे हैं। कुमारगंज (वाराणसी) के आंवले, इलाहाबादी अमरूद के सैकड़ों पौधे लहलहा रहे हैं। भादो माह में भी इनके बगीचे में आम्रपाली के पेड़ों पर कुछ आम लगे हुए देखे जा सकते हैं। एक दशक पहले तक इस क्षेत्र में आम तथा अमरूद आदि के पौधों का विकास नहीं होता था जिसकी वजह से कोई भी खेतिहर बड़े पैमाने पर फलहार वृक्षों की बागवानी नहीं करता था क्योंकि यहां पर केवल मिट्टी पाई जाती है। परन्तु इनकी रुचि को देखते हुए बनवासी सेवा केन्द्र, अधौरा कैमूर के वैज्ञानिकों ने ऐसी तकनीक बताई कि आज इनके बाग

में आम्रपाली के 200, मल्लिका के 100, आंवला व करौंदा के 50–50 पेड़ लगे हैं। 20 पेड़ अर्जुन के हैं जो लगभग दस वर्ष के हो चुके हैं। तालाब कदम के वृक्ष भी लगे हैं। अर्जुन वृक्ष की छाल हृदय रोगियों के लिए उपयोगी होती है। लगभग एक हेक्टेयर में अमरूद की बागवानी है जिसके फल से प्रति वर्ष अच्छी–खासी आय हो जाती है। वृक्षों के प्रति इनका लगाव शुरू से ही था। 1970 में मुखिया बनने पर पूरी पंचायत में सड़कों व नहर के किनारे हजारों की संख्या में पौधारोपण कराया। बातचीत के दौरान इन्होंने बताया कि अधिक उपज एवं टिकाऊ खेती के लिए गोबर की खाद अथवा वर्मी कम्पोस्ट एवं जैविक कीटनाशी का उपयोग खेतों के लिए अति आवश्यक होता है।

मत्स्य पालन : इनके दो एकड़ के मछली के तालाब में 6–7 प्रकार की मछलियां पाली जाती हैं जिनमें रेहू, कतला, नैनी, सिलवर कार्प, कामन कार्प, ग्रास कार्प और देशी मांगुर आदि हैं। मछली पालन की सही ढंग से देखरेख के लिए एक मल्लाह भी सहयोग के रूप में इनके साथ काम करता है। चारे के रूप में कमा ब्राण्ड तथा सरसों की खली का उपयोग करते हैं जो स्थानीय स्तर पर ही उपलब्ध हो जाता है। मत्स्य बीजर (जीरा) उत्तर प्रदेश के चन्दौली जिले से वीरेन्द्र सिंह के यहां से लाते हैं। साथ ही जरूरत पड़ने पर मछली का जीरा कलकत्ता से भी मंगाते हैं।

मत्स्य पालन की जानकारी मछली पालकों के सम्पर्क में आकर तथा स्वयं के अनुभव से मिली। इनकी अपनी आधा टन क्षमता की राइस मिल भी है जिससे 24 घंटे में सौ क्विंटल धान से चावल निकाला जा सकता है। इस चावल मिल से निकलने वाले कने का उपयोग मछली चारे के रूप में किया जाता है।

दुग्ध उत्पादन : इनकी गोशाला में लगभग एक दर्जन उन्नत नस्ल की गाये हैं जिनसे प्रतिदिन सैकड़ों लीटर दूध का उत्पादन होता है। गोबर से खाद बनाकर बाग में लगे फलदार एवं लकड़ी वाले वृक्षों की खेती के उपयोग में लाया जाता है।

धान व गेहूं उत्पादन : लगभग 50 एकड़ में धान, गेहूं, दलहन–तिलहन का उत्पादन होता है। गेहूं में एच.डी. 2733 व डब्यू.आर–2544 किस्म प्रमुखता के साथ बोई जाती है। इसकी बुआई नवम्बर तक कर देने से अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। इसके अलावा सरसों तथा मटर, मस्टर व चना आदि की खेती करते हैं। धान व गेहूं की कुछ खेती वैज्ञानिकों की देखरेख में आधार बीज से की जाती है जिसे प्रमाणित बीज के रूप में अगली फसल के लिए किसानों को बेचा जाता है।

वैज्ञानिक सहयोग : बनवासी सेवा केंद्र से जुड़कर यहां के वैज्ञानिक डा. सदानन्द राय व डा. सुनील सिंह के सहयोग से श्री रामविलास सिंह ने अपने कृषि व्यवसाय को नई ऊंचाई तक पहुंचाया। यहां के वैज्ञानिकों का सहयोग एवं इनकी कृषि व्यवसाय के प्रति ईमानदारी का परिणाम है कि आज इनके बागों में फलदार वृक्षों से लेकर औषधीय तथा इमारती लकड़ी के हजारों वृक्ष लगे हुए हैं।

गर्मी का मौसम आते ही यहां की मिट्टी में मोटी दरारें फट जाती थी जिससे फलदार पौधे अल्पायु में ही सूख जाते थे। परन्तु वैज्ञानिकों की सलाह एवं अपनी सूझबूझ से सफल बागवानी कर अपने आसपास के किसानों के लिए अनुकरणीय बन गये। चार–चार फीट का गड्ढा खोदकर वर्मी कम्पोस्ट अथवा गोबर की खाद, बालू व मिट्टी का मिश्रण बनाकर गड्ढों में भरने के बाद भरपूर सिंचाई की जाती है। इस विधि से लगाए गए पौधों की बढ़वार तीव्र गति से होती है।

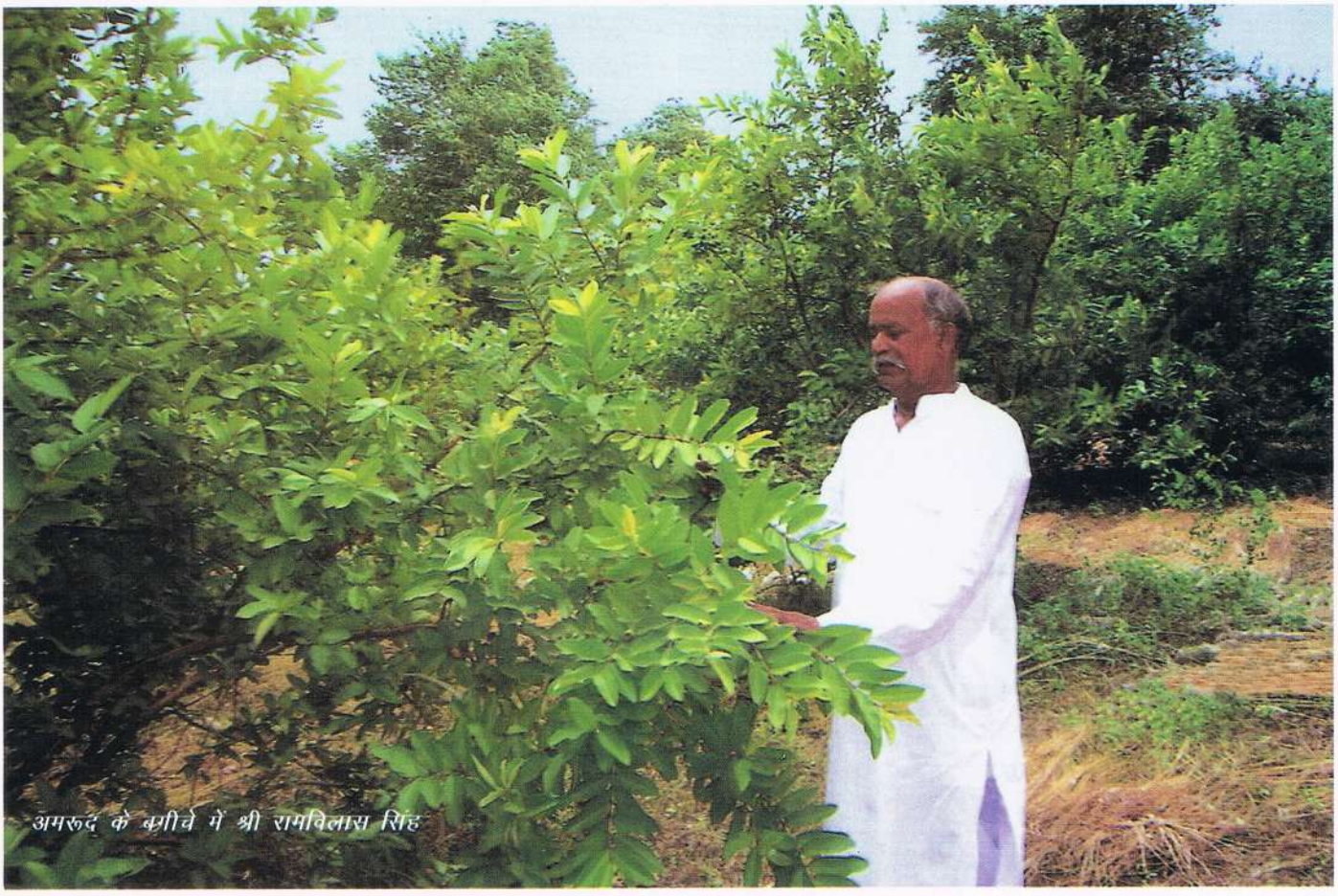

अमरूद के बगीचे में श्री रामविलास सिंह

जापानी कृषि फार्म, कातिरा, आरा के वैज्ञानिक डा. पी.के. द्विवेदी का मार्गदर्शन भी इन्हें बराबर मिल रहा है। कैमूर, रोहतास एवं भोजपुर जिले में लगने वाली कृषि प्रदर्शनी आदि में भागीदारी से मिलने वाले अनुभव तथा अन्य किसानों से मिलने वाली नई जानकारियों के आधार पर खेती में नये प्रयोग करना इनका शौक है। इन्हें कई बार कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर में प्रशिक्षण तथा प्रदर्शनी में भाग लेने का अवसर भी मिला। इसके अलावा राष्ट्रपति भवन जाकर महामहिम पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम साहब से मिलकर एक नया उत्साह भी मिला। इस प्रेरणा से श्री रामविलास सिंह पूरे उत्साह से साल–दर–साल सफलता की नई ऊंचाई छू रहे हैं। खेती में इनके सहयोगी के रूप में चार सदस्य इनके साथ स्थाई रू प से कार्य करते हैं जिन्हें प्रति वर्ष 20 हजार रुपये के अलावा खाना व कपड़ा देते हैं।

65 वर्षीय ये किसान अपने चार सहयोगियों एवं दो ट्यूबवेल तथा एक ट्रैक्टर के सहारे प्रगति के पथ पर बढ़ने को तत्पर दिखते हैं। श्री रामविलास सिंह का मानना है कि आज का किसान यदि अपनी सूझबूझ एवं वैज्ञानिकों की सलाह के आधार पर खेती करे तो यह व्यवसाय घाटे का नहीं हो सकता है और वह 'उत्तम खेती मध्यम बान' जैसी पुरानी कहावत को चरितार्थ करता हुआ सफलता की नई ऊंचाई को छू सकता है।

(लेखक दैनिक हिन्दुस्तान, पटना में कार्यरत हैं।)

हमारे आगामी अंक

नवम्बर, 2009– ग्रामीण ऋण व्यवस्था।

दिसम्बर, 2009– नरेगा–नए कदम, विषयों पर आधारित होंगे।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, कृषि, रोजगार व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे। उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं। पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से तीस दिन पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री कम से कम 45 दिन पूर्व हमें मिल जानी चाहिए।

तेरह भारतीय भाषाओं में हमारी पुस्तकें

क्षेत्रीय सुगंध से महकता गुलदस्ता

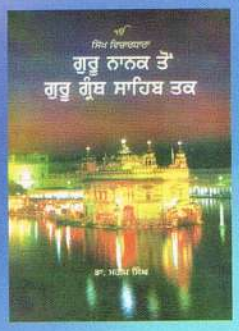

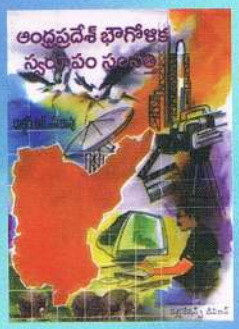

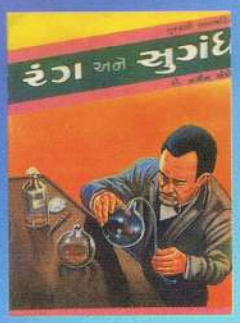

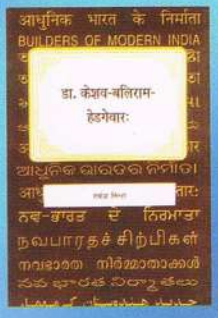

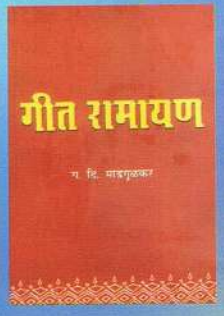

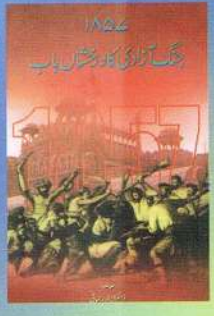

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली

विक्रय केंद्रः सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, **नई दिल्ली**–110 003. हाल नं0 196, पुराना सचिवालय, **दिल्ली**–110 054. सी–701, केंद्रीय सदन, बेलापुर, **नवी मुंबई**–400 614. 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, **कोलकाता**–700 069. राजाजी भवन, एफ एंड जी ब्लॉक, 'ए' विंग बेसेंट नगर, **चेन्नई**–600 090. बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, **पटना**–800 004. प्रेस रोड, निकट गवर्मेंट प्रेस **तिरुअनंतपुरम**–695 001. हाल नं.1, दूसरी मंजिल, केंद्रीय भवन, सेक्टर–एच, अलीगंज, **लखनउ**–226 024. ब्लॉक नं. 4, गृहकल्प कॉम्प्लेक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, **हैदराबाद**–500 001. प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, **बंगलौर**–560 034. अम्बिका कॉम्प्लेक्स, प्रथम तल, पालदी, **अहमदाबाद**–380 007. हाउस नं. 07, न्यू कालोनी, चेनीकुथी, के.के.बी. रोड, **गुवाहाटी**–781 003.

ज्यादा जानकारी के लिए हमारी वेबसाइट देखें – www.publicationsdivision.nic.in
e-mail:dpd@sb.nic.in, dpd@hub.nic.in

आर. एन./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2009–11
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–55/2006–08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2009-11
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना